संन्यासी होकर काम करे, इन दोनों विरुद्ध कर्म्मोंको करनेवालोंकी प्रतिष्ठा नहीं होती। हे राजेन्द्र! जो समर्थ होकर क्षमा करे और दरिद्र होकर दान करे, ये दोनों स्वर्गके ऊपर रहते हैं। न्यायसे आये हुए धनका दोही प्रकारसे नाश होता है, अर्थात अयोग्यको देने और योग्यको न देनेसे। जो धनी होकर दान न करे और दरिद्र होकर तप न करे, इन दोनोंके गलेमें भारी शिला बंधवाकर पानीमें डुबा देना चाहिये। हे पुरुषव्याघ्र! जो संन्यासी योग करे, और जो क्षत्री युद्धमें मरे, ये दोनो सूर्य्यमण्डलको भेदकर स्वर्गको जाते हैं।

हे राजन्! उत्तम मध्यम और हीन येही वेद जाननेवाले पण्डितोंने तीन प्रकार न्याय कहे हैं। उत्तम मध्यम और अधम यही तीन प्रकारके मनुष्य होते हैं, इनको इनके अनुसार उत्तम मध्यम और अधम काम देने चाहिये। हे राजन्! स्त्री, दास और पुत्र ये तीनों निर्धन कहाते हैं, ये जो वस्तु प्राप्त करें वह सब उनके स्वामीकी है। दूसरेका धन छीन लेना, दूसरोंकी स्त्रियोंसे अधर्म करना, अपने मित्रोंको छोड़ देना, इनही तीन दोषोंसे मनुष्योंका नाश होता है। काम क्रोध और लोभ येही तीनों नरकके द्वार हैं और इन्हीं तीनोंसे मनुष्यका सर्व्वनाश होता है, इस लिये इन तीनोंको छोड़ देना चाहिये। हे भारत! वरदान पाना, राज्य पाना, पुत्रका जन्म होना और शत्रुको दुःखसे छुड़ाना; यह चारो सुख बराबरही है। भक्त, सेवक और मैं आपहीका हूं ऐसा कहते हुए मनुष्यको महादुःखके समय मेंभी नहीं छोड़ना चाहिये। पण्डित और बलवान राजा मूर्ख, आलसी, शीघ्र प्रसन्न होनेवाले और स्तुति करनेवालोंसे कभी सम्मति न करे। हे राजन्! ये चारो आपके घरमें सदा बसें। ज्ञानवृद्ध और बूढ़े जातिवाले, अभिमान-रहित अवसन्न कुलीन, निःसन्तान बहिन और दरिद्र मित्र, इन चारोंके रहनेसे धर्म्म होता है। हे राजेन्द्र! देवतोंके यहां जानेकी इच्छा, बुद्धिमानोंकी शक्ति, पण्डितोंकी विनय करनी और पापियोंका नाश करना इन चार कर्म्मोंको वृहस्पतिने इन्द्रसे कहा था, इनके करनेसे उसी समय फल मिलता है। अग्निहोत्र, मौन, पढ़ना और यज्ञ करना ये चारों कर्म्म सुखदायक हैं; परन्तु अच्छी प्रकार न करनेसे इन चारोंहीसे दुःख होता है। हे भरतकुलसिंह! पिता, माता, अग्नि, अपना शरीर और गुरु ये पांच अग्नि प्रसिद्ध हैं, इन पाचों अग्नियोंकी सदाही मनुष्यको सेवा करनी उचित है। देवता, पितर, मनुष्य, भिखारी और अतिथि इन पाचोंकी पूजा करनेसे मनुष्यको लोकमें यश मिलता है। मित्र, शत्रु मध्यस्थ, गुरु और सेवक, ये पांचों जहां तुम जाओगे तहां तुम्हारे सङ्गही जायंगे। मनुष्यको पांचो इन्द्रियोंमें एकही छेद हैं, उस छेदसे मनुष्यकी बुद्धि इस प्रकार नष्ट होती है, जैसे फटी हुई मसकसे जल। नींद, जम्हाई, डर, क्रोध, आलस्य, और दीर्घसूत्रता अर्थात ढीलापन ये छः दोष हैं, इन्हें सदाही मनुष्यको छोड़ना चाहिये। न कहनेवाले गुरु, मूर्ख पुरोहित, न रक्षा करनेवाले राजा, कड़वी बात कहनेवाली स्त्री, गांवकी इच्छावाले अहीर और बनकी इच्छा करनेवाले नाईको मनुष्य इस प्रकार छोड़ दे, जैसे समुद्रमें चलनेवाले टूटी नावको छोड़ देते हैं। सत्य, दान, निरालस्य, किसीका दोष न करना, क्षमा और धारणा इन छओं गुणोंको मनुष्य कभी न छोड़े। धन प्राप्ति, सदा रोगरहित रहना, प्यारी स्त्री, वशमें रहनेवाला पुत्र और धन देनेवाली विद्या येही इस लोकके छः सुख हैं; जो इन छःहोंको सदा धरता है, उस जितेन्द्रियको

सदा सुख होते हैं और वह कभी पापोंको नहीं करता। हे राजेन्द्र! चोर असावधानोंसे वैद्य रोगियोंसे, स्त्री कामियोंसे, पुरोहित यजमानोंसे और पण्डित मूर्खसे जीविका पाते हैं। गो, सेवा, खेती, स्त्री, विद्या, और मूर्खोंकी सङ्गति ये छहों थोड़ी देर भी ध्यान नहीं देनेसे नष्ट हो जाते हैं। पढ़े हुए शिष्य गुरुको, विवाह किये हुए पुत्र माताको, कामसे रहित मनुष्य स्त्रीको, काम सिद्ध हुए मनुष्य नावको और निरोगी वैद्यको, ये छहो मनुष्य उपकारियोंको छोड़ देते हैं। हे राजन्! रोगरहित रहना, किसीका ऋणी न होना, परदेशमें जाना, पण्डितोंका सङ्ग करना, अपनी वृत्तिसे जीविका करनी और निर्भय होकर रहना, इस लोकके येही छः सुख हैं। दूसरेके सुखको डाह करनेवाला, सदा दयावान, असन्तोषी, क्रोधी, सदा शङ्का करनेवाला और जो पराये भाग्यसे जीते हैं, ये छओं सदा दुःखी रहते हैं। स्त्री, जुआ, आखेट, मद्यपान, कठोर बचन, बहुत दण्ड देना और प्रयोजनोंका नाश करना इन आठ दोषोंको राजाको सदा छोड़ना चाहिये, इनसे बहुत दुःख होते हैं, और वंश सहित राजाका नाशभी हो जाता है। ब्राह्मणोंका वैर, ब्राह्मणोंका धन लेना, ब्राह्मणोंकी निन्दा करनी, ब्राह्मणोंकी प्रशंसा न करनी, यज्ञादिकोंमें ब्राह्मणोंको न बुलाना और भिक्षाभाजन ब्राह्मणोंका निरादर करना, नाश होनेवाले मनुष्यको पहले येही दोष होते हैं, बुद्धिमानको उचित है, कि इन आठोंको छोड़ दे। समयपर मीठे बचन कहना, जिस वस्तुकी इच्छा हो उसको प्राप्त करना और सभामें पूजा पाना, ये आठ गुण मनुष्यको प्रकाशित करते हैं। बुद्धि, उत्तम कुलमें जन्म, इन्द्री जीतना, पराक्रम, विद्या, थोड़ा बचन कहना, शक्तिके अनुसार दान और उपकार करनेवालेको मानना, येही आठ गुण हैं। इस शरीर-घरमें नाक, कान, आंख, जीभ, चर्म्म, अहङ्कार, बुद्धि, मन और स्थूल शरीर येही नवद्वार हैं। अविद्या, काम, और कर्म्म करना येही तीन खम्भे हैं। शब्द, स्पर्श, रस, गन्ध और रूप येही पांचो साची हैं; जीव इसमें रहनेवाला है, जो विद्वान इसको जानता है, वही पण्डित है। हे धृतराष्ट्र! मत्त-मद्य आदि पीनेवाला, उन्मत्त, अनेक कार्य्य करनेसे असावधान, पागल, थका हुआ, क्रोधी, शीघ्रता करनेवाला, लोभी, डरपोक और कामी, ये दस मनुष्य धर्म्मको नहीं जानते, इस लिये बुद्धिमान पण्डित इनकी सङ्गति नहो करते हैं। इसी स्थानपर राक्षसराज सुधन्वाने जो कुछ पुत्रके निमित्त कहा सो कहने योग्य है। जो राजा काम और क्रोधको छोड़कर योग्य मनुष्यको धन देता है, जो सब विषयोंके विशेष अर्थको जानता है, और जो अपने कामको शीघ्र करता है, उसको सब जगत प्रमाण मानता है। जो विश्वास योग्य मनुष्यको जानता है, दोषीको दण्ड देता है, जो कामके प्रमाण और क्षमाको जानता है, उसे राजाको समस्त लक्ष्मी मिलती है। जो किसीको दुर्बल नहीं जानता, जो बुद्धि और युक्तिके सहित शत्रुकीभी सेवा करता है; जो बलवानसे वैर नहीं करता, और जो समय पर अपना बल दिखाता है, वही पुरुष वीर कहाता है; जो बुरे स्थान पर जाकर नहीं डरता, जो सावधान होकर उद्योग करता है, जो महात्मा समयपर दुःख सहता है; वही महात्मा कठिन कार्य्योंको भी सिद्ध कर सकता है और वही शत्रुओंको जीत सकता है। जो निरर्थक काम नहीं करता है, मनुष्योंको घरसे नहीं निकालता, न पापियोंसे सन्धि करता, दूसरेकी स्त्रियोंसे अधर्म्म नहीं करता, छल, चोरी, चुगली और मद्य आदिकी सेवा नहीं करता, वह सदा सुखी

रहता है। जो क्रोधसे धर्म्म, अर्थ और कामको नहीं करता और केवल सरांशकी ओर देखता है, जो मित्रोंके सङ्ग विवाद नहीं करता और जो निरादर पाकर दुःखित नहीं होता, वही पण्डित कहाता है। जो किसीकी उन्नतिसे डाह नहीं करता, जो किसीके ऊपर कृपा नहीं करता, जो दुर्बल होकर अपने विरुद्ध विषयको सोचता है, जो बहुत नहीं बोलता और जो विवादमें क्षमा करता है, जगतमें उसी मनुष्यकी प्रशंसा होती है। जो कभी दुष्ट मनुष्यके वेषको न धारण करे जो अपने पराक्रमके भरोसे शत्रुओंसे युद्ध न करे, किञ्चित क्रोधमें कड़वे वचन न कहे, ऐसा मनुष्य सदा सबका प्यारा बना रहता है। जो कभी शान्त मनुष्योंसे बैर न बढ़ावे, कभी अभिमान न करे, कभी नीचा न हो, हम कुछ नहीं हैं, ऐसा समझकर बुरा काम न करे, ऐसे मनुष्यको आर्य्य लोगभी आर्य्य कहते हैं। जो अपने सुखसे प्रसन्न नहीं होता, दूसरेके दुःखसे भी प्रसन्न नहीं होता, जो देकर पछताय नहीं उसी महात्माको आर्य्य लोग आर्य्य कहते हैं। जो देश, समय और जातिके धर्मोंको जानता है, वही पण्डित सभाकी शोभाको बढ़ाता है; वह जहां जाकर बैठता है, वहीं महाजनोंका स्वामी बनता है। बल, भ्रम, मत्सर (चुगली) पापका कर्म्म, राजाका द्वेष, बैर, मतवाले और पागलसे विवाद, इन सब कर्म्मोंको पण्डितको छोड़ देना चाहिये। दान, होम, देवताओंकी पूजा, मङ्गलके कार्य्य, प्रायश्चित्त, अनेक प्रकार लोक विवाद, इन सब कर्म्मोंको जो मनुष्य करता है, उसको देवता भी प्रशंसा करते हैं। जो अपने तुल्य मनुष्यसे विवाह प्रीति और बर्त्तालाप करता है, वही बुद्धिमान कहाता है, जो अपनेसे अधिक गुणवाले पण्डितको सब कामोंमें अगाड़ी रखता है, उसकी बुद्धि प्रशंसा करने योग्य है। जो अपने आश्रयमें रहने वालोंको बांटकर प्रमाणसे भोजन करता है, बहुत काम करने परभी थोड़ा सोता है, और मांगनेपर शत्रुओंकोभी देता है, उसका सदा कल्याण होता है। जिसके इच्छावाले कर्म्मको मनुष्य जानते हैं, और जिसके गुप्त मन्त्रको भी कोई नहीं जानता वह मनुष्य कभी अनर्थमें नहीं पड़ता। जो सदा सबका कल्याण चाहता है, सत्य बोलता है, कोमलतासे रहता है, जिसके सब भाव शुद्ध हैं, वह अपनी जातिमें बैठकर ऐसा प्रकाशित होता है, जैसे रत्नोंमें महामणि। जो अपने कर्म्मोंको देखकर आपही लज्जित होता है, वही मनुष्य सब लोकोंका गुरु होने योग्य है। वही मनुष्य महा तेजस्वी, सावधान होकर सूर्य्यके समान प्रकाशित होता है। हे राजन्! आपसे जले हुए राजा पाण्डुने इन्द्रके समान पांच पुत्रोंको उत्पन्न किया, उनको आपहीने पाला और पढ़ाया है, इस लिये वे भी आपको अपने पिताके समान मानते हैं। हे नरेश! आप पाण्डवोंका राज्य उनको देकर पुत्रोंके सहित आनन्दसे सुख भोगिये। पाण्डवोंका राज्य देनेसे देवता और मनुष्यभी आपको अधर्मी नहीं कह सकेंगे।

३३ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे प्यारे विदुर! तुम धर्म्म और अर्थका जाननेवाले हो, इस लिये समय योग्य जो काम हो सो मुझसे कहो, मेरा शरीर इस चिन्तासे भस्म हुआ जाता है। हे महा पराक्रमी विदुर! तुम युधिष्ठिरको बुद्धिको जानते हो, इस लिये तुम जो कौरवोंके कल्याणका कार्य्य समझो, सो हमसे कहो। हे विदुर! मैं महापापी और सदा पापकी शङ्का रखता हूं, इस समय व्याकुल होकर तुमसे पूछता हूं, तुम युधिष्ठिरकी बुद्धिको विचार कर जो उचित हो सो कहो।

विदुर बोले, मनुष्यको उचित है कि जिसका कल्याण चाहे, उससे शुभ, अशुभ, प्रिय और अप्रिय सब प्रकारके बचन कहे, इस लिये मैं धर्म और यशसे भरे कौरवोंके कल्याण करनेवाले बचन आपसे कहता हूं, आप सुनिये। हे भारत! जो उलटा उपाय करनेसे अथवा बिनाही उपायके सिद्ध हो जायं उसके करनेकी इच्छा मनुष्यको कभी न करनी चाहिये। इसी प्रकार जो कर्म्म अनेक उपाय और यत्न करनेपर भी सिद्ध न हो उनमें भी मनको नहीं लगाना चाहिये। जिन कामोंको करनेसे प्रयोजन सिद्ध होते हैं, उनको पहले निश्चय करके सोच ले, काम करनेमें शीघ्रता नहीं करनी चाहिये। कामका प्रयोजन, फल और अपनी शक्तिको देखकर काम करना चाहिये। जो मूर्ख वृद्धि और नाशके प्रमाणको नहीं जानता; जो धन, देश और दण्डको नहीं सोचता वह राजा होने योग्य नहीं है। जो कहे हुए विषयोंको भली भांति समझता है, वही बुद्धिमान राजा होने योग्य है। इस समय आपको राज्य पाकर अनुचित व्यवहार नहीं करना चाहिये, क्योंकि अनीति राज्यको इस प्रकार नाश कर देती है, जैसे सुन्दर रूपको बुढ़ापा। निश्चय न करके उत्तम खाने योग्य वस्तुमें लिपटे हुए कांटेको खाकर मछली अपना प्राण दे देती है, इसी प्रकार जो बिना विचारे कार्य्य करता है, उसका नाश हो जाता है। जो खाने योग्य वस्तु है, बुद्धिमान उसेही खाय, वह खाने योग्य वस्तु अन्तमें सुख-दायक हो तभी खानी चाहिये। जो मूर्ख वृक्षसे बिना पके फल तोड़ लेता है, उसे रस नहीं मिलता, और बीजभी नाश होजाता है। जो समयपर पके हुए फलका तोड़ता है, उसे फलका रस प्राप्त होता है और बीज भी मिलता है। उस बीजसे पुनः वृक्ष होता है और वृक्षमें पुनः फल होता है। जैसे भौरा फूलकी रक्षा करता है, पीछे उसका रस पीता है, उसी प्रकार मनुष्यकोभी काम करना चाहिये। जैसे भौंरा फूलफलका रस लेता है, और किसी वृक्षको जड़ नहीं काटता, ऐसाही मनुष्यको भी करना चाहिये। जैसे माली वृक्षसे फूल ले लेता है और वृक्षको काटता नहीं, ऐसेही मनुष्यको काम करना चाहिये। इस कामके करनेसे हमें क्या होगा, और न करनेसे क्या होगा, यह सब विचारकर मनुष्यको काम करना चाहिये, अथवा न करना चाहिये। बहुतसे काम न करनेसे भी सिद्ध हो जाते हैं। अनेक कार्य्य करनेपर भी सिद्ध नहीं होते, जिस मनुष्यकी प्रसन्नतासे कुछ लाभ नहीं और जिसके क्रोधसे कुछ हानि नहीं ऐसे मनुष्यको सेवा ऐसीही है जैसे नपुंसकको स्त्रीका सिङ्गार। बुद्धिमान मनुष्य ऐसे कामको शीघ्र आरम्भ करता है, जिसमें परिश्रम कम और फल अधिक होते हैं; क्योंकि ऐसे कामोंमें विघ्न नहीं होता है। जो कोमल नेत्रसे सब किसीको देखता है, जो बैठकर भी चुप रहता है, उससे सब प्रजा प्रेम करती है। राजाको उचित है कि नेत्र और वचनसे कोमल होनेपर भी शीघ्र फल न दे। फल देनेवाला होनेपर भी आप सबसे कठोर बना रहे, बिना सिद्ध हुई बातको भी सिद्ध हुईके समान प्रकाशित करे, अर्थात दुर्बल होने परभी बलवानके समान बना रहे। जो नेत्र, मन बचन और कर्मसे जगतको प्रसन्न करता है, उसको भी सब जगत प्रसन्न करता है। जिससे प्रजा इस प्रकार डरती है, जैसे व्याधसे हरिन, वह समस्त पृथ्वीका राजा होकर भी दरिद्र हो जाता है। अधर्मी राजा बाप दादाका राज्य पाकर भी इस प्रकार नष्ट होजाता है, जैसे वायु चलनेसे मेघ। जो राजा महात्माओंसे करने योग्य धर्मको करता है, वह धन सहित समस्त पृथ्वीका राज्य करता है। जो राजा

धर्म्मको छोड़ अधर्म करता है, वह समस्त राज्यका इस प्रकार नाश करता है, जैसे अग्निमें डालनेसे चमड़ा जलता है। जैसा शत्रुको जीतनेको यत्न किया जाता है, वैसाही यत्न अपने राज्यके पालन करनेके लिये भी करना चाहिये। धर्म्मसे राज्य प्राप्त करना चाहिये, और धर्म्मसे प्रतापकी रक्षा करनी; क्योंकि धर्मसे प्राप्त किया धन नष्ट नहीं होता। जैसे पत्थरसे सोना निकाल दिया जाता है, ऐसेही मूर्ख और बालकके बचनसे भी सारांश ले लेना चाहिये। बुद्धिमानको उचित है कि, जैसे कोई मनुष्य पत्थरोंके बीचमेंसे अग्नि निकाल लेता है, ऐसेही मूर्खोंसेभी उत्तम बचन, उत्तम कर्म्म और उत्तम बृत्तिको सीख ले। गौ सुगन्धिसे, ब्राह्मण वेदोंसे और राजा दूतोंके द्वारा देखता है, और सब आंखोंसे देखते हैं। जो गौ बहुत कष्टसे दूध देती है, वह बहुत दुःख उठाती है, और जो सहजसे दूध देती है, उसे कोई मारता नहीं। जो धातु वा काष्ठ आपहीसे मुड़ जाय उसे तपानेका क्या काम है? इन्हीं दोनोंके समान बुद्धिमानकोभी उचित है कि अपनेसे अधिक बलवानसे नीचा हो जाय। जो बलवानको प्रणाम करता है, वह प्रणाम इन्द्रको पहुंचता है। पशु मेघोंसे जीते हैं, राजा मन्त्रियोंका मित्र है, पति स्त्रीका मित्र है, और ब्राह्मणोंका वेद मित्र है। सत्यसे धर्म्मको, योगसे विद्याको, उपटनसे रूपकी और चरित्रोंसे कुलकी रक्षा होती है। आदरसे धनकी, घुमानेसे घोड़ोंकी, डपटनेसे गौओंकी और अच्छे चरित्रसे स्त्रियोंको रक्षा होती है। हमारा यह सिद्धान्त है, कि बुरे चरित्रवालेके वंशका कुछ प्रमाण नहीं, जो नीच होकर भी अच्छा कर्म्म करे, वह प्रशंसाके योग्य है। जो दूसरेके धन, रूप, बल, सुख, सुन्दरता और आदरको देखकर जलता है, उसके रोगकी कुछ औषध नहीं। जो कार्य्यके पहलेही डरकर अपने कामको छोड़ दे, वह महामूर्ख है। जिससे कुछ हानि हो मनुष्यको वह काम नहीं करना चाहिये, और कभी अपनी सम्मतिको प्रकाश नहीं करनी चाहिये। मूर्खोंके लिये विद्या, धन और सहाय यही तीन बड़े मद हैं। यही तीनों महात्माओंके लिये सुखदायक है। जिस समय कोई महात्मा किसी दुष्टके पास अपना कार्य्य करनेको जाय, और वह दुष्ट उसके कार्य्यको कर दे यही उसकी साधुता है। महात्मा लोग इतनाही काम होनेसे दुष्टको साधु मानने लगते हैं। महात्मा ज्ञानियोंके लिये गति देनेवाले हैं, और महात्मा पण्डितोंको गति देनेवाले हैं, और महात्माही दुष्टोंकी गति देते हैं; परन्तु दुष्ट साधुओंको गति नहीं देते। वस्त्रधारी सभाको जीतता है, वाहनवाला मार्गको जीतता है और शीलवान सबको जीत लेता है। पुरुषमें शीलही प्रधान गुण है, इसके नाश होनेसे जीवन, धन और बन्धु बान्धव सबका नाश हो जाता है। हे राजन्! धनवालेको मांस, दरिद्रीको तेल और मध्यमको घीके सहित भोजन कराना चाहिये। दरिद्री सदा मीठा भोजन करता है, क्योंकि भूखमें सबही मीठा लगता है; और धनवानको भूख दुर्लभ है; हे पृथ्वीनाथ! जगतमें दीखता है कि धनवान भोजन पचानेमें प्रायःसमर्थ नहीं होते और दरिद्र काठको भी पचा जाता है। नीचको बृत्ति न मिलना मध्यमको मरना और उत्तमको निरासही महा भय है। ऐश्वर्य्यका मद मद्यसे भी अधिक है, क्योंकि धनका मतवाला स्वामी और सेवकको कुछ नहीं समझता। जैसे सूर्य्य और चन्द्रमा ग्रहणसे व्याकुल होते हैं, ऐसेही अपने अपने कामोंको करती हुई बिना जीती हुई इन्द्रियोंसे लोक दुःख पाते हैं। जैसे शुक्ल पक्षमें चन्द्रमा बढ़ता है, तैसेही मनको वशमें करनेवाली, सङ्ग उत्पन्न हुई पांचों इन्द्रिय

न जीतनेवाले मनुष्योंके दुःख बढ़ते हैं। जो मूर्ख अपने मनको बिना वशमें किये अपने कुटम्बको वशमें करना चाहे, और जो बिना कुटम्बको वशमें किये शत्रुओंको जीतना चाहे, वह सब प्रयोजनोंसे नष्ट हो जाता है। जो पहले अपने मनको शत्रुके समान जीतता है, फिर कुटम्बको वशमें करता है, वही शत्रुओंको जीत सकता है। इन्द्रियजित, मनको वशमें रखनेवाले, दुष्टोंको दण्ड देनेवाले, परीक्षा करके कामका करनेवाले और परम धीर मनुष्यकी लक्ष्मी प्राप्त होती है। हे राजन्! शरीर रथ, इन्द्रिय पराक्रमी घोड़े और मन सारथी है; इस रथमें सावधान बैठकर सावधान मनुष्य सुखसे चलता है। जैसे दुष्ट घोड़े कार्यमें सारथीको मार डालते हैं, तैसेही बिना जीती हुई इन्द्री मनरूपी सारथीका नाश कर देती हैं। बिना इन्द्रियोंको वशमें किये मूर्ख दुःखका सुख, अर्थका अनर्थ और अनर्थका अर्थ समझता है। जो धर्म और अर्थको छोड़कर इन्द्रियोंके वशमें होजाता है, उसके धन, प्राण और स्त्री सब नष्ट हो जाते हैं। जो इन्द्रियोंको बिना जीते धनका स्वामी बनता है, उसके सब ऐश्वर्य नष्ट हो जाते हैं। बुद्धिमान इन्द्रियोंको जीतकर बुद्धिसे मनको अपने वशमें करे, बुद्धिही मनका मित्र और बुद्धिही मनको शत्रु है। जिसने अपनी बुद्धिसे मनको नहीं जीता, उसके मनको बुद्धि शत्रु है। जैसे छेदवाले छोटे जालमें बड़ी मछली नहीं पकड़ी जाती ऐसेही काम और क्रोध मनुष्यको बुद्धिसे नहीं पकड़े जाते, ये दोनों बुद्धिका नाश कर देते हैं। जो धर्म और अर्थको देखकर सामग्री इकट्ठी करता है, सो सामग्रीकी सहायतासे अन्तके लिये सुख भोगता है। जो मनसे उत्पन्न हुए पांच शत्रुओंको जीतता है, वही अन्य शत्रुओंको भी जीत सकता है, जैसे राजा राज्यके कार्य्योंमें फंसा रहता है, वैसेही अनेक महात्मा भी

कामोंमें बंधे हुए रहते हैं। दुष्टोंको न त्यागनेसे महात्माओंकोभी दण्ड मिलता है। देखो जगतमें सूखेके सङ्ग गीलाभी चला जाता है, इस लिये दुष्टोंकी सङ्गतिही नहीं करनी चाहिये। जो मनुष्य पांच दुःख देने वाले पांच शत्रुओंको वशमें नहीं करता, वह पीछे महा आपत्तिमें पड़ता है। दुष्टको शान्ति, सीधापन, पवित्रता, सन्तोष, मीठे वचन, इन्द्रियोंको जीतना, सत्यवाणी और स्थिरता नहीं होती। हे भारत! दुष्टको आत्मज्ञान, स्थिरता, त्याग, धर्म्म वचनको रक्षा और दान नहीं होते। मूर्ख अपने बुरे बचनोंसे महात्माओंको दुःख देते हैं, कहनेवाला पापी होता है, और क्षमावान पापसे छुट जाता है। दुष्ट लोग हिंसाहीको अपना बल समझते हैं, उस हिंसासे राजाको दण्ड बढ़ता है। पतिकी सेवा स्त्रियोंका बल है, और क्षमा पण्डितोंका बल है। हे पृथ्वीनाथ! बचनको वशमें रखना बहुत कठिन है मनुष्य अर्थसे भरे विचित्र बचन बहुत समय तक नहीं कहसकते। हे राजन्! मीठी वाणी कल्याणको बढ़ाती है, वही वाणी कड़वी होने पर अनर्थको बढ़ाती है। कुल्हाड़ीसे कटा हुआ फिर बढ़ जाता है, वाणका घाव फिर बट जाता है, परन्तु बचनसे हुआ घाव कभी नहीं भरता। वाणको फांसको बैद्य निकाल सकता है, परन्तु बचनकी फांसको कोई नहीं निकाल सकता, क्योंकि वह हृदयमें लगी रहती है। मुखसे निकले हुए बचन रूपी बाण मर्म्म स्थानोंमें लगते हैं, उनके लगनसे मनुष्य रात्रि दिन सोच करता है, इस लिये मनुष्य इन बाणोंका न चलावे। प्रारब्ध जिसको दुख देना चाहती है, पहले उसकी बुद्धि नाशकर देती है। बुद्धि नाश होनेसे वह मनुष्य नीच कर्म्म करने लगता है, जब नाशका समय आता है, और बुद्धि नाश हो जाती है, तब हृदयसे अन्याय नहीं हटता। हे भरतकुलसिंह! पाण्डवोंका विरोध करनेसे

और पुत्रोंके वशमें होनेसे आपकी बुद्धि नाश होगई है। क्या आप उसको नहीं देखते? हे धृतराष्ट्र! राजलक्षणोंसे भरे तीन लोकके स्वामी होने योग्य आपके आज्ञापालक महाराज युधिष्ठिर पृथ्वीके राजा हों। वे धर्म्म और अर्थके तत्वको जाननेवाले आपके सब पुत्रोंसे तेज और बुद्धिमें अधिक हैं, इस लिये वेही राजा होनेके योग्य हैं। हे राजन्! धर्म्म जाननेवालोंमें श्रेष्ठ महाराज युधिष्ठिर कृपा और साधुताके कारण तथा आपको बड़ा मान करके अनेक क्लेश सह रहे हैं।

३४ अध्याय समाप्त।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे विदुर! तुम धर्म्म और अर्थके जाननेवालोंमें श्रेष्ठ हो, इस लिये ये तुम्हारे वचन सुननेसे मुझे सन्तोष होता है। हे महाबुद्धिमान! तुम विचित्र वचन कहते हो, इस लिये धर्म्म और अर्थसे भरे वचन फिर कहो।

विदुर बोले, हे पृथ्वीनाथ! सब तीर्थोंमें स्नान करना एक ओर और सबको समान देखना एक ओर, इन दोनोंमें समान देखना अधिक है, इस लिये आप सब पुत्रोंको समान दृष्टिसे देखिये, ऐसा करनेसे इस लोक और परलोकमें आपकी कीर्त्ति बढ़ेगी, हे पुरुषसिंह! जबतक मनुष्यको कीर्त्ति जगतमें रहती है, तब तक वह मनुष्य स्वर्गमें रहता है। इस स्थान पर केशिनीके लिये जो सुधन्वा और विरोचनका सम्वाद हुआ था, सो हम आपसे कहते हैं। यह इतिहास बहुत पुराना है। हे राजन्! अत्यन्त रूपवती केशिनी नामकी कन्या जब उत्तम पतिसे विवाह करनेके लिये स्वयम्बरमें आई, तब उससे विवाह करनेके लिये विरोचन नामक दैत्य स्वयम्बरमें आया। उससे केशिनी कहने लगी, हे विरोचन! तुम कहो कि ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं, या दैत्य श्रेष्ठ हैं? यदि ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं, तो मैं सुधन्वासे विवाह क्यों न करूं!

विरोचन बोले, हे केशिनी! हम प्रजापतिसे उत्पन्न हुए हैं, इस लिये हमही श्रेष्ठ तथा तीनों लोकोंके स्वामी हैं, ब्राह्मण और देवता हमारे आगे क्या वस्तु हैं?

केशिनी बोली, हे विरोचन! इसकी परीक्षा हो जायगी। प्रातःकाल सुधन्वा मुझे लेने आवेगा, तब मैं ब्राह्मण और दैत्यकी परीक्षा करूंगी।

विरोचन बोले, हे कल्याणि! हे भीरु! तुम जो कहती हो, सो मैं करूंगा। प्रातःकाल जब सुधन्वा आवेगा, तब तुम हम दोनोंको देखना।

विदुर बोले, जब रात्रि बीत गई और आकाशमें सूर्य्य उदय हुए, तब सुधन्वा स्वयम्बरमें आये। अनन्तर सुधन्वा वहां गये, जहां केशिनी और विरोचन बैठे थे। सुधन्वाने प्रह्लादपुत्र विरोचन और केशिनीको देखा। हे भरतकुलसिंह! जिस समय केशिनीने सुधन्वा ब्राह्मणको आते देखा, उसी समय उठकर आसन, अर्घ और पैर धोनेको जल दिया। तब विरोचनने कहा, हे सुधन्वा! तुम हमारे सङ्ग बैठो।

सुधन्वा बोले, हे प्रह्लादपुत्र! मैं तुम्हारे सोनेके एक आसनपर नहीं बैठ सकता क्योंकि तुम मेरे समान नहीं हो।

विरोचन बोले, हे सुधन्वा! तुमने जो कहा सो ठीक है, तुम हमारे सङ्ग सोनेके आसनपर नहीं बैठ सकते, क्योंकि तुम काठके पीढ़े वा कुशाकी चटाईपर बैठने योग्य हो।

सुधन्वा बोले, यह कारण नहीं है; यह नियम है कि पिता पुत्र, दो ब्राह्मण, दो क्षत्री, दो बूढ़े और दो शूद्र एक आसनपर सङ्ग बैठ सकते हैं। मैं जब तुम्हारे पिताको सभामें जाता था, तब वह नीचे बैठकर मेरी सेवा करते थे, तुम उस समय बहुत बालक थे, और सुखसे

घरमें रहते थे, इस लिये इन बातोंको नहीं जानते हो।

बिरोचन बोले, हे सुधन्वा! हम गाय, घोड़े और जो कुछ हमारा धन है, उस सबको लगाकर तुमसे बाद करते हैं, इस प्रश्नको किसी पण्डितसे पूछना चाहिये।

सुधन्वा बोले, हे बिरोचन! तुम्हारे गाय और घोड़े तुम्हारेही रहैं, हम और तुम अपने अपने प्राणोंकी पण (बाजी) लगाकर यह प्रश्न किसी पण्डितसे बूझेंगे।

बिरोचन बोले, हम तुम्हारे बचनको स्वीकार करते हैं, परन्तु यह प्रश्न पूछनेको किसके पास चलोगे, क्योंकि मैं देवता और मनुष्यके पास कदापि नहीं जाऊंगा।

सुधन्वा बोले, इस प्रश्नके पूछनेको हम तुम्हारे बापहीके पास चलेंगे, क्योंकि प्रह्लाद पुत्रके प्रेमसे कभी झूठ नहीं बोलेंगे।

बिदुर बोले, हे राजन्! ऐसी प्रतिज्ञा करके क्रोध में भरे बिरोचन और सुधन्वा राजा प्रह्लादके पास गये। इनको देखकर प्रह्लाद बोले, ये दोनों विषैले सांपके समान क्रोधमें भरे एक मार्गसे चले आते हैं, ये कभी पहले सङ्ग नहीं रहे, अब क्यों सङ्ग रहेंगे?

इतनेमें बिरोचन और सुधन्वा सभामें पहुंच गये। तब प्रह्लाद अपने पुत्रसे बोले, हे बिरोचन! क्या सुधन्वा तुम्हारे मित्र हैं?

बिरोचन बोले, हे राजन्! सुधन्वा मेरे मित्र नहीं हैं, हम दोनोंने प्राण देनेकी प्रतिज्ञा करके विवाद किया है, आप हमारे प्रश्नका उत्तर दीजिये, कदापि झूठ मत कहिये।

प्रह्लाद बोले, हे सुधन्वन्! आप पूजा करने योग्य ब्राह्मण हैं, इस लिये मधुपर्क, पैर धोने योग्य जल और सफेद गौको ग्रहण कीजिये।

सुधन्वा बोले, मैंने मार्गहीमें आपका मधुपर्क, और जल ग्रहण कर लिया था, अब हम आपसे प्रश्न करते हैं, सत्य सत्य उत्तर दीजिये। हमारा प्रश्न यही है कि ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं या बिरोचन?

प्रह्लाद बोले, हमको एकही पुत्र है और आप साक्षात हमारे साथ प्रश्न करनेको आये हैं, ऐसी अवस्थामें हमारे समान मनुष्य क्या कह सकता है?

सुधन्वा बोले, हे बुद्धिमान! आप इस सफेद गौको अथवा और सब धनको लीजिये, परन्तु हमारे प्रश्नका ठीक उत्तर दीजिये।

प्रह्लाद बोले, हे सुधन्वन्! जो सत्य वा झूठ कुछ न कहे, वह निश्चय करने वाला कहां बसता है?

सुधन्वा बोले, जहां चवसे हारा जुवेमें हारा और दिन भर भार लेकर चलनेवाला मनुष्य वसता है, वहीं वह मनुष्य भी बसता है, जो सत्य और झूठको जानकर भी कुछ न कहे। जो साक्षी होकर झूठ कहता है, वह नगरके द्वारपर रुककर भूखा पड़ा रहता है, और अनेक शत्रुओंको देखता है। पशुओंके लिये झूठ बोलनेसे पांच, गौओंके लिये झूठ बोलनेसे दश घोड़ेके लिये सौ और मनुष्यके लिये झूठ बोलनेसे सहस्र हत्याओंका फल होता है। सोनेके लिये झूठ बोलनेसे उत्पन्न हुए और न उत्पन्न हुए लोगोंके मारनेका पाप होता है। भूमि और स्त्रीके लिये झूठ बोलनेसे समस्त पृथ्वीके मनुष्योंके मारनेका पाप होता है इस लिये तुम इस स्थान पर झूठ मत कहो।

प्रह्लाद बोले, हे बिरोचन! अङ्गिरा मुझसे श्रेष्ठ हैं, सुधन्वाकी माता तेरी मातासे श्रेष्ठ है और तुझसे सुधन्वा अच्छे हैं, इस लिये तुझे सुधन्वाने जीत लिया। हे बिरोचन! सुधन्वा तुम्हारे प्राणोंका स्वामी है, चाहे मारे या छोड़े; हे सुधन्वन्। मैं तुमसे बिरोचनको मांगता हूं।

सुधन्वा बोले, हे प्रह्लाद! तुमने पुत्रके लिये भी झूठ न कहा, इस लिये इस दुर्लभ विरोचनको तुम्हें देते हैं, परन्तु यह उसी स्त्रीके आगे हमारे पैर धोवे।

विदुर बोले, हे राजन् धृतराष्ट्र! देखो राजा प्रह्लादने अपने पुत्रके प्राणोंको बचानेको भी झूठ नहीं बोले; वैसेही आपभी राज्यके लिये झूठ मत बोलिये। मैं यह चाहता हूं कि झूठ बोलनेसे पुत्र और मन्त्रियोंके सहित आपका नाश न हो; देवता लाठी लेकर पशुओंके समान मनुष्योंकी रक्षा नहीं करते। वे जिसकी रक्षा करना चाहते हैं, उसको उत्तम बुद्धि देते हैं, जैसे मनुष्यकी बुद्धि अच्छे कामोंमें जाती है, तैसे तैसे मनुष्यके कार्य्य सिद्ध होते हैं। छलो मनुष्यको छलसे नहीं बचाते, बरन वे इस प्रकार मनुष्यसे मरनेके समय छूट जाते हैं जैसे पंखवाले पक्षीसे घोसला अर्थात् कर्म्महो मनुष्योंको दुःखसे बचाता है। महात्मा लोग मद्य पीना, लड़ाई, बैर, स्त्री, पुत्र, और जातिसे द्वेष, राजाको शत्रुता, स्त्री और पुरुषोंसे बिवाद तथा और भी बुरेकाम करनेको मना करते हैं। बुद्धिमानको उचित है कि हाथकी रेखा देखनेवाले, चोर बनिये, धूर्त्तज्योतिषी, धूर्त्तवैद्य, शत्रु, मित्र और रण्डीके भड़वेको साक्षी न बनावे। हे राजन्! जो आदरके लिये अग्निहोत्र करता है, आदरके लिये विद्या पढ़ता है, आदरके लिये यज्ञ करता है, उसका कल्याण नहीं होता। परन्तु जो बिना इच्छाके इन सब कामोंको करता है उसको सुख होता है! घर जलानेवाला, जहर देनेवाला, कुण्डाशी (पतिके जीते हुए जो दूसरे मनुष्यके वीर्य्यसे पुत्र उत्पन्न होता है, उसे कुण्ड कहते हैं, जो उस कुण्डके यहां भोजन करे उसे कुण्डाशी कहते हैं), सोमबेचनेवाला, शस्त्र बनानेवाला, नक्षत्रसूची अर्थात् थोड़ा पढ़ा, ज्योतिषी, मित्रद्रोही, दूसरेकी स्त्रियोंसे अधर्म्म करनेवाला, गर्भ गिरानेवाला, गुरुकी शय्यापर पैर रखनेवाला, मद्य पीने वाला ब्राह्मण, बहुत क्रोधी कौवेके समान हत्ति करनेवाला, नास्तिक, वेदनिन्दक, डाकू, व्रात्य अर्थात जिसका जनेऊ समय बीतनेपर हुआ हो, दूसरेको वस्तुको छीननेवाला, और जो शरणागतको रक्षा नहीं करे, ये सब ब्राह्मणको मारनेवाले पापीके तुल्य हैं। चांदनेसे रूप, चरित्रसे धर्म्म, व्यवहारसे साधुता, युद्धसे शूरवीरता, कठिन कार्य्योंमें बुद्धिमानी और आपत्तिके समय मित्र जाने जाते हैं। बुढ़ापा रूपको; आशा धैर्य्यको, मृत्यु प्राणोंको दुष्टता धर्म्मको; क्रोध लक्ष्मीको, दुष्टोंकी सेवा शीलको, काम लज्जाको और अभिमान सबको नाश कर देता है। लक्ष्मी अच्छे कामोंसे प्राप्त होती है, गम्भीरतासे बढ़ती है, अच्छे कामोंमें निपुण होनेसे उसकी जड़ जमती है, और इन्द्रियोंको जीतनेसे स्थिर हो जाती है। हे राजन्! बुद्धि, उत्तम कुलमें जन्म, इन्द्रियोंको जीतना, विद्या, पराक्रम बोलनेकी शक्तिके अनुसार दान और उपकार करनेवालेको मानना, ये आठों गुण मनुष्यको प्रसिद्ध करते हैं। हे राजन्! इन सब गुणोंमें एकही गुण श्रेष्ठ है कि राजा मनुष्योंका सत्कार करे, यह गुण सब गुणोंसे श्रेष्ठ है। हे राजन्! इन आठ गुणोंमेंसे चार गुण मनुष्यको स्वर्गमें पहुंचाते हैं, और चार महात्माओंके सङ्ग रहते हैं, इन आठों गुणोंका आगे वर्णन करते हैं। यज्ञ, दान, विद्या और तप ये चारो गुण मनुष्यसे नित्य सम्बन्ध रखते हैं। इन्द्रियोंको जीतना सत्य, कोमलता और दयालुता, ये चारो गुण महात्माओंके सङ्ग रहते हैं। यज्ञ करना, विद्या पढ़ना, दान, तप, सत्य, क्षमा, दया और लोभ न करना, येही आठ धर्म्मके मार्ग हैं। उनमेंसे पहले चार जो हैं, उनको पाखण्डी पाखण्डके लिये भी कर सकते हैं, परन्तु अन्तके

चार जो धर्म्म हैं, उनको महात्माओंके सिवा कोई नहीं कर सकता। वह सभा नहीं है, जहां बूढ़े नहीं; जो धर्म्मका वर्णन नहीं करते वह बूढ़े नहीं हैं; जिसमें सत्य नहीं वह धर्म्म नहीं है; और जिसमें कुछ छल है वह सत्य नहीं है। सत्य, रूप, गुण, विद्या, उत्तम कुलमें जन्म, शील, बल, धन, तेज, विचित्र कहना, येही स्वर्ग ले जानेके कारण हैं। जो पापी पाप करता है, उसको फल भी वैसाही मिलता है; धर्म्मात्माको धर्म्म करनेसे अच्छा फल मिलता है। इस वास्ते धर्म्मात्मा मनुष्यको उचित है कि पाप न करे; क्योंकि बार बार पाप करनेसे बुद्धिका नाश होजाता है। बुद्धि नाश होनेसे मनुष्य पापही करता है। पुण्य करनेसे बुद्धि बढ़ती है, बुद्धि बढ़नेसे मनुष्य सदा पुण्यही करता है; पुण्य करनेसे कीर्त्ति बढ़ती है, कीर्त्तिमानको स्वर्ग मिलता है; इस लिये उत्तम मनुष्यको उचित है कि सदा धर्म्मही करे। डाही, दन्दसूक अर्थात दूसरेके कार्य्यको नाश करनेवाला, कठोर वचन कहनेवाला, सबसे वैर करनेवाला और दुष्ट मनुष्य पाप करनेके कारण शीघ्रही नष्ट होजाता है। जो किसीकी वृद्धि देखकर दुःख नहीं मानता और अपनी बुद्धिको ठीक रखता है, वह उत्तम काम करनेके कारण कदापि दुःखमें नहीं पड़ता और सदा सुख पाता है। जो अपनी बुद्धिसे बुद्धिको बढ़ाता है, वही पण्डित कहाता है बुद्धिमान धर्म्म और अर्थको बिना प्राप्त किये भी सुख भोगता है। दिनमें ऐसा काम करना चाहिये, जिससे रात्रिको सुखसे सोवे, आठ महीनेमें ऐसा काम करना चाहिये जिससे एक वर्ष सुखसे रहे। पहली अवस्थामें ऐसा काम करे, जिससे वृढ़ापेमें सुख मिले। जीवन भरमें ऐसा काम करे जिससे मरनेके पश्चात सुख हो, जब अन्न पच जाय, तब उसकी प्रशंसा करनी चाहिये, शीलसे यौवन बितानेके पश्चात स्त्रीको प्रशंसा करनी चाहिये, युद्ध जीतनेके पश्चात वीरकी प्रशंसा करनी चाहिये और तपस्या पूरा होनेपर तपस्वीकी प्रशंसा करनी चाहिये। जो धन अधर्म्मसे प्राप्त होता है, वह पहले कुछ हानि करता है, वह हानि सह नहीं सकती, तब और भी हानि बढ़तीही जाती है। गुरु महात्माओंको शासन करते हैं, राजा दुष्टोंको दण्ड देता है, और छिपकर पाप करनेवालेको यमराज दण्ड देते हैं! ऋषि, नदी, महात्माओंके वंश और स्त्रियोंके चरित्रोंको कोई पार नहीं जा सकता। हे राजन्! जो क्षत्री ब्राह्मणोंको पूजा करता है, दान करता है और जातिमें शीलसे रहता है, वह बहुत दिनतक सुखसे राज्य करता है। शूरवीर, विद्वान् और सेवा जाननेवाला सेवक, ये तीनों मनुष्य सुवर्णसे फूली हुई पृथ्वीका आनन्द भोगते हैं। हे भारत! जो कर्म्म प्रत्यक्ष करके बुद्धिसे किये जाते हैं, वे श्रेष्ठ हैं, जो हाथसे किये जाते हैं, सो मध्यम है और जो छिपकर लज्जासे किये जाते हैं, वे नीच हैं। तुम क्या दुर्य्योधन, शकुनि मूर्ख दुःशासन और कर्णको राजा बनाकर कल्याणकी इच्छा करते हो? हे भरतकुलसिंह सब गुणोंसे भरे पाण्डव आपको पितातुल्य मानते हैं, आप भी उन्हें पुत्र समान मानिये।

३५ अध्याय समाप्त।

विदुर बोले, हे राजन् धृतराष्ट्र! इसी स्थानपर यह पुराना इतिहास कहने योग्य है, इसमें आत्रेय और साध्यका इतिहास है, एक समय परमहंसका रूप बनाकर महा तपस्वी महा बुद्धिमान आत्रेय जगतमें घूम रहे थे, उसी समय साध्योंने आकर कहा।

साध्य बोले हे महामुने! हम साध्य नामक देवता हैं, आपको देख कर आपके तपका अनुमान नहीं कर सकते, हमें जान पड़ता है कि आप विद्या, धीरता और बुद्धसे भरे हैं, इस

लिये आप हमसे कुछ कल्याणकी बात कहिये। परमहंस बोले, हे देवतो ! हम केवल इतनाही जानते हैं, कि हृदयकी गांठको दूर धारण करके इन्द्रियोंको जीतना, सत्य बोलना और अपने समान सबके सुख और दुःखको जानना यही धर्म्म है। जो अपनेको बुरी बात कहै, उसका उत्तर नहीं देना, ऐसा करनेसे रुका हुआ क्रोध बुरी बात कहनेवालेका नाश कर देता है और क्षमा करनेवालेका कल्याण होता है। मनुष्य बुरी बात न कहै, किसीका निरादर न करे, अभिमान न करे नीचकी सेवा न करे, मित्रोंसे वैर न करे, छोटा काम न करे और रूखी वाणी न बोले। क्योंकि बुरी बात मनुष्यके मर्म्म, हृदय, हड्डी और प्राणोंको भस्म कर देती है। मनुष्यको उचित है, कि रूखी वाणी कभी न कहै, क्योंकि उससे धर्म्मका नाश होता है। दुःख देनेवाली रूखी वाणी मनुष्यके हृदयमें कांटेके समान लगती है, रूखी वाणी मनुष्यके मुखमें दरिद्र और मृत्युरूप होकर बसती है। आग और सूर्य्यके समान तेजस्वी और विषमें बुझे तीक्ष्ण वाणोंके समान वचन हो दुष्ट महात्माओंको कहते हैं, उनसे, जलते कहते हैं और अत्यन्त पीड़ित होने परभी महात्मा दुःख नहीं मानते। चाहे साधूकी सेवा करो, चाहे दुष्टकी सेवा करो, चाहे तपस्वीकी सेवा करो और चाहे चोरकी सेवा करो, परन्तु मनुष्य स्वामीके वशमें इस प्रकार हो जाता है, जैसे वस्त्र रङ्गके वशमें। बहुत विवाद नहीं करना चाहिये, न वाद करना चाहिये। जो दूसरेसे मार खाकर उसे नहीं मारता, जो पापीको मारनेकी इच्छा नहीं करता, उससे देवता बहुत प्रसन्न रहते हैं, बहुत बोलनेसे न बोलना अच्छा है, बोलनेसे सत्य बोलना अच्छा है, सत्यमें प्यारा बोलना अच्छा है, और प्यारेमेंभी धर्म्मके सहित बोलना बहुत अच्छा है, ये चार वचनके भेद हैं। जो मनुष्य जैसे मनुष्यके सङ्गमें रहता है, जैसे मनुष्योंके सङ्ग बैठता है और जैसा बनना चाहता है, वैसाही होता है। जहांसे मनुष्य अपने चित्तको लौटाना चाहता है, वहांसे लौट जाता है। सब स्थानोंसे लौटनेसे मनुष्यको कुछ भी दुःख नहीं शेष रहेगा। जो सब दुःखोंसे रहित हो जाता है, वह किसीको जीतनेकी इच्छा नहीं करता न किसीसे वैर करता है, न किसको मारनेकी इच्छा करता है; वह दुःखरहित मनुष्य निन्दा और प्रशंसासे, प्रसन्न और अप्रसन्न नहीं होता, उसका स्वभाव समान हो जाता है, वह मनुष्य सबका कल्याण चाहता है, कभी भी किसीकी हानिमें उसका चित्त नहीं जाता; वह सत्यवादी, कोमल, दानी और सबसे श्रेष्ठ है, उसीको उत्तम पुरुष कहते हैं। जो विना प्रयोजन वचन न कहै, जिस वस्तुको देनेकी प्रतिज्ञा करे, उसे दे दे, शत्रुके समयको देखता रहै, वह मध्यम पुरुष कहाता है, जो बुरे वचन कहै, सदा क्रोधके वशमें रहै जिसको लड़ाईही प्यारी लगे, किये हुए उपकारको न माने, किसीका मित्र न हो और सदा दुष्टता करता रहै, वह नीच पुरुष है। जो किसीमें श्रद्धा न करे, अपने किये हुए काममें भी शङ्का करे और मित्रोंका निरादर करे, वह अधम पुरुष कहाता है।

मनुष्यको उचित है कि सदा उत्तमही मनुष्योंकी सङ्गति करे और काम निकालनेके वास्ते मध्यम पुरुषके पास भी चला जाय, परन्तु कल्याण चाहनेवाला मनुष्य नीचके पास कदापि न जाय। मनुष्य दुष्टोंकी सङ्गतिसे दुष्ट हो जाता है, फिर उसकी बुद्धि और मन सब नष्ट हो जाते हैं, इससे उसकी उन्नति भी नहीं होती, तब उसकी प्रशंसा भी नहीं नहीं होती, प्रशंसा नष्ट होनेसे कुलका गौरव भी नाश हो जाता है।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे विदुर ! हमने सुना है कि सदा धर्म्म और अर्थकी करनेवाले

महा पण्डित और देवता बड़े बड़े कुलोंको प्रशंसा करते हैं, सो हम आपसे पूछते हैं, कि बड़े कुल कौनसे हैं?

विदुर बोले, हे महाराज! जिन कुलोंमें तप, इन्द्रिय जीतना, वेद विद्या, यज्ञ, उत्तम विवाह, और सदा होम दान होता है, वेही बड़े कुल कहाते हैं, यही सात गुण बड़े कुलके लक्षण हैं। जिन कुलोंमें बुरे नहीं होते, जिनके पितर दुःख नहीं पाते, जहां प्रसन्न होकर धर्म्म किया जाता है, जिस कुलमें उत्पन्न हुए मनुष्य झूठ नहीं बोलते और अपने कुलकी कीर्त्ति बढ़ना चाहते हैं, वेही बड़े कुल कहाते हैं, जिन बड़े कुलोंमें भी यज्ञ नहीं होता, उत्तम रीतसे विवाह नहीं होता और वेद नहीं पढ़ाये जाते, वे नीच हो जाते हैं, जिन कुलोंमें उत्पन्न हुए मनुष्य देवता और ब्राह्मणोंका धन छीनते हैं, तथा ब्राह्मणोंका निरादर करते हैं, वे उत्तम कुलभी नीच हो जाते हैं। हे भरतकुल श्रेष्ठ! ब्राह्मणोंका निरादर, ब्राह्मणोंकी निन्दा और अधर्म्म करके धन छीननेसे उत्तम कुल नीचताको प्राप्त हो जाता है। जिन कुलोंमें गऊ, धन, और मनुष्य भरे हैं, परन्तु वंशमें उत्पन्न हुओंके चरित्र अच्छे नहीं हैं, उनकी गिनती कुलोंमें नहीं। जिन कुलोंमें धन थोड़ा है, परन्तु मनुष्योंके चरित्र अच्छे हैं, वेही महा यशस्वी उत्तम कुल हैं। धन आता है और जाता है इस लिये यत्न करके चरित्रहीकी रक्षा करनी चाहिये। बहुत धन होनेपरभी बुरे चरित्रवाला मनुष्य हीन, और कम धन होनेपर भी उत्तम चरित्र-वाला मनुष्य उत्तम कहाता है। हे धृतराष्ट्र! गौ, पशु, घोड़े, बढ़ी हुई खेती इन सबसे कुल उत्तम नहीं होते, परन्तु चाल चलन अच्छे होनेसे उत्तम होते हैं। हमारे कुलमें कोई बैर करनेवाला न हो, राजा वा मन्त्री कोई दूसरेका धन लेनेकी इच्छा न करे। हमारे कुलमें कोई ऐसा न हो जो पितर और देव-तोंसे पहले भोजन करे। जो हमारे ब्राह्मणोंसे द्वेष करे, हमारे ब्राह्मणोंको मारे, ऐसा मनुष्य हमारे वंश और सभामें न हो, और जो खेतों-को न बुवावे ऐसा भी मनुष्य हमारे कुटुम्बमें कोई न हो। पण्डितोंके घरमें घास, भूमि, जल और सच्चे बचन कभी नष्ट नहीं होते, अर्थात सज्जन लोग अतिथिको बिछानेके वास्ते-तृण पीनेको जल और प्रेमसे मीठा बचन देते हैं। यदि सज्जनोंके पास और कुछभी नहीं तो वह अतिथिका इससे ही सत्कार करते हैं। येही चार लक्षण अच्छे कुटुम्बके हैं। हे राजन्! हे महाबुद्धिमान! धर्म्म करनेवाले महात्मा परम श्रद्धासे इन चारों वस्तुओंको आदर सहित अपने घरमें रखते हैं। हे राजेन्द्र! जैसे भारी रथको घोड़ोंके सिवाय और कोई नहीं ले चलता अर्थात् घोड़ेही ले चल सक्ते हैं,—ऐसेही उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए मनुष्य चरित्ररूपी भारको जितना उठा सकते हैं, उतना सामान्य पुरुष नहीं। जिसके भयसे मनुष्य डरे, अथवा जिसके कर्म्मोंसे मित्रको शङ्का हो, वह मित्र नहीं है। जिस मित्रका मित्र पिताके समान विश्वास करे, वही मित्र है, शेष सम्बन्ध मात्र है। जो कोई बिना सम्ब-न्धके मित्रता करे वही मित्र है, वही बन्धु है, और वही सेवा करने योग्य है। जिस मनुष्यका चित्त चञ्चल है, जो बूढ़ोंकी सेवा नहीं करता, जिसकी बुद्धि स्थिर नहीं है, उसकी मित्रता भी स्थिर नहीं है। जिसके मन, चित्त और शरीर चञ्चल हैं, जो इन्द्रियोंके वशमें रहता है, उस मनुष्यको धर्म्म और अर्थ इस प्रकार छोड़ देते हैं, जैसे सूखे तलावको हंस। जिसका चित्त मेघ और जलमें स्थित नावके समान चञ्चल हो, जो बिना कारणही क्रोध करे और बिना कारण प्रसन्न हो जाय, वह मूर्ख है। जो अत्यन्त सत्कार पाकर भी मित्रका काम न करे, मरनेके

पश्चात् मांस खानेवाले पक्षी भी उसका मांस नहीं खाते। बुद्धिमानको उचित है कि चाहे दरिद्री हो चाहे धनवान हो अपने मित्रोंकी सेवा करता रहे, क्योंकि निर्धन मित्रोंके सारांशको नहीं जानता है। मित्र छूटनेसे रूप नष्ट होजाता है, मित्रके वियोगसे बल नष्ट होता है, मित्रके वियोगसे ज्ञान नष्ट होता है, और मित्रके वियोगसे अनेक रोग हो जाते हैं। हे राजन्! मित्रके शोकसे शरीर जलता है और शत्रु प्रसन्न होते हैं, इस लिये आप अपने मनको शोककी ओर मत जाने दीजिये। मनुष्य बार बार उत्पन्न होता है, बार बार मरता है, बार बार मनुष्यकी उन्नति होती है, बार बार धन नाश होता है, बार बार भिक्षा मांगता है; बार बार दान करता है, कभी सोचता है, और कभी शत्रुओंका शोक बढ़ाता है। सुख, दुःख, लाभ, हानि, मरना और जीना ये सब प्रायः हुआही करते हैं, इस लिये मनुष्यको उचित है कि उन सबसे सुख और दुःख न माने। पांचों इन्द्री और छठां मन ये चञ्चल हैं, जहां जहां इनकी अयथा वृद्धि होती है, तहां तहां मनुष्यकी बुद्धि इस प्रकार नष्ट होती है जैसे छिद्र युक्त घड़ेसे जल गिरता है।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, राजा युधिष्ठिर मेरे अन्यायसे इस प्रकार गये हैं, जैसे किसी कारणसे शरीरमें अग्नि रुक जाती है। अब वे युद्धमें हमारे मूर्ख पुत्रोंका अवश्य नाश करेंगे। हे महाबुद्धिमान! मेरा मन सदा घबड़ाता रहता है, इस लिये आप ऐसा उपाय बतलाइये जिससे मेरा मन स्थिर हो।

विदुर बोले, हे पापरहित महाराज! विद्या, तप, इन्द्रिय जीतना, और लोभ न करना, इनके सिवा आपको शान्तिका उपाय मुझे और कुछ नहीं दीखता। बुद्धिसे भय नाश होता है, तपसे परम पद मिलता है, गुरुओंकी सेवासे ज्ञान होता है, और योगसे शान्ति प्राप्त होती है। जगतमें दान और पुण्यके फलको छोड़कर और वेद पढ़नेके फलको छोड़कर, राग और द्वेषसे छूटे महात्मा जगतमें घूमते हैं। उत्तम पढ़ने, उत्तम युद्ध, उत्तम कर्म्म और उत्तम तप इन चारोंका फल करनेके अन्तमें मिलता है। हे राजन्! अनेक बन्दी और भांटोंकी स्तुति सुननेपर भी और उत्तम शय्यापर सोनेसे भी दुःखी मनुष्यको सुख नहीं होता, और न दुःखी मनुष्य स्त्रियोंसे भी प्रसन्न होता है। जातिमें भेद करनेवाले मनुष्य धर्म्म नहीं करते, सुख नहीं भोगते, जातिमें भेद करनेवालोंका आदर नहीं होता और न उनको शान्ति अच्छी लगती है। गौओंमें दूधही धन है, ब्राह्मणोंमें तपही धन है, स्त्रियोंकी चञ्चलताही धन है और मनुष्योंका जातिसे भय करनाही धन है। आपने बालकपनमें पाण्डवोंको पाला था, अब वे अनेक कष्ट सहकर महात्माओंके दृष्टान्तरूप हो गये हैं, अर्थात जगतमें सब मनुष्य कहते हैं कि अमुक महात्मा पाण्डवोंके तुल्य हैं। ऐसे महात्मा पाण्डवोंके सङ्ग आप छल न कीजिये। हे भरतकुल सिंह धृतराष्ट्र! अलग अलग रक्खे हुए काष्ठोंमें आग लगानेसे केवल धुआं निकलता है और सङ्ग रखनेसे सब जल उठते हैं, ऐसेही जातिका भी प्रभाव है। जो दुरात्मा ब्राह्मण, स्त्री और गौओंसे अपना पराक्रम दिखलाता है वह इस प्रकार गिरता है, जैसे पका हुआ बैंगनका फल। जैसे अनेक शाखाओंसे युक्त फल और फूलोंसे भरा अकेला वृक्ष वायु लगनेसे गिर जाता है, ऐसेही अकेला मनुष्यभी शत्रुके हाथसे मारा जाता है। जिस बनमें पास पास अनेक वृक्ष लगे हों तहां अत्यन्त वायु चलनेसे भी वृक्ष नहीं टूटते, क्योंकि वहां एक वृक्षका दूसरेका आश्रय होता है, ऐसेही अनेक गुण होनेपर भी अकेलेको शत्रु मार डालते हैं। जैसे पास पास होनेके कारण तलावमें कमल बढ़ते हैं,

ऐसेही परस्पर प्रेम करनेसे एक दूसरेके आश्रयसे जाति बढ़ती है। ब्राह्मण, जाति, बालक, स्त्री जिसका अन्न खाया हो सो, और शरणमें आये मनुष्यको मारना नहीं चाहिये। हे राजन्! आपका कल्याण हो; मनुष्यमें समर्थ होनेके सिवा और कोई गुण नहीं है; यह गुणभी रोगरहित मनुष्यमें रहता है, क्योंकि रोगी मनुष्य मरे हुएके तुल्य है। हे महाराज! आप रोगरहित और समर्थ हैं, इस लिये पाप बढ़ानेवाले तेज, गर्म्म, कड़वे, रोगरहित और पण्डितोंके पीने योग्य क्रोधको पीकर शान्त होइये। रोगी फलको नहीं प्राप्त होता उसका कहीं आदर नहीं होता। रोगी सदा दुःखसे भरा रहता है, इस लिये वह कुछ नहीं समझता और न सुखोंको भोग सकता है। हे महाराज! मैंने जिस समय द्रौपदीको जुवेमें हारी हुई देखा था, उसी समय आपसे कहा था, कि पण्डित लोग जुवेकी प्रशंसा नहीं करते; इस लिये दुर्य्योधनको जुवेसे रोकिये। परन्तु आपने मेरा बचन नहीं सुना था; इसीसे यह दुःख प्राप्त हुआ है। हे राजेन्द्र! जो क्षमावान मनुष्यसे वैर करावे, वह बली नहीं है। मनुष्यको उचित है कि सदा सूक्ष्म धर्म्म करे। अन्यायसे उत्पन्न हुई लक्ष्मी वंशका नाश कर देती है, और न्यायसे उत्पन्न हुई लक्ष्मी पुत्र तथा पोतोंतक रहती है। हे राजन्! हमारी सम्मतिमें यह आता है कि आपके पुत्र पाण्डवोंकी रक्षा करें, और पाण्डुके पुत्र आपके पुत्रोंका पालन करें; जो कौरवोंके शत्रु हों, सो पाण्डवोंके भी शत्रु हों; और जो पाण्डवोंके शत्रु हों सो कौरवोंकेभी शत्रु हों; ऐसेही कौरव और पाण्डवोंके मित्रभी एकही हों। ऐसा करनेसे दोनोंकी उन्नति होगी और बहुत दिन तक जीयेंगे। हे अजमीढ़वंशोत्पन्न प्यारे धृतराष्ट्र! आप इस समय सब कुरुकुलके स्वामी हैं, यह समस्त वंश आपके अधीन है; आपने बालकपनमें पाण्डवोंको पाला था; अब वे बनवाससे दुःखी होगये हैं; इस लिये उनको रक्षा करके अपने यशको बढ़ाइये। हे नरराज! पाण्डव धर्म्म करते हैं; इस लिये आप उनसे सन्धि कोजिये; इससे आपके शत्रुभी आपकी सेवा करेंगे। आप दुर्य्योधनको युद्ध मत करने दोजिये।

३८ अध्याय समाप्त।

बिदुर बोले, हे राजन् धृतराष्ट्र! स्वयम्भूपुत्र मनुने इन सत्रह मनुष्योंको ऐसा कहा है जो कोई मुट्ठीसे आकासको पोटे, जो आकाशमें उगी इन्द्र धनुषको नवाना चाहे, जो न पकड़ने योग्य सूर्य्य और चन्द्रमाकी किरणको पकड़ना चाहे, जो दुष्टको शिक्षा दे, जो थोड़े लाभसे प्रसन्न हो, जो बहुत दिनतक शत्रुकी सेवा करे, जो स्त्रीकी रक्षा करके कल्याण चाहे, जो न कहने योग्य बचनको कहे, जो कुछ काम करके अपनी प्रशंसा करे, जो कुलीन होकर बुरा काम करे, जो निर्ब्बल होकर बलवानसे बैर करे; जो श्रद्धाहीनसे बात कहे, जो न करने योग्य कामको करे, जो अपने बेटेकी बहूसे हंसी करे, जो अपने बेटेकी बहूसे न डरे, जो दूसरेके खेतमें अपना बोज बोवे, जो बहुत समयतक स्त्रियोंसे बिबाद करे, जो बहुत धन लेकरभी देनेवाले मनुष्यसे कहे कि हमें स्मरण नहीं है; जो घरमें आये हुए भीख मांगनेवालेसे अपनी प्रशंसा करे और जो दुष्टको साधु बनानेको हठ करे,—इन सत्तरह मनुष्यको मरनेके समय फांसो लेकर यमदूत आते हैं। जो जैसा मनुष्य हो, उसके सङ्ग वैसाही बर्त्ताव करना चाहिये; दुष्टके सङ्ग दुष्टता और साधुके सङ्ग साधुता करनी चाहिये। बुढ़ापा रूपको, आशा धैर्य्यको मृत्यु प्राणोंको, डाह धर्म्मको, काम लज्जाको, दुष्टकी सेवा अच्छे चरित्रोंको; क्रोध लक्ष्मीको और अभिमान सबको नाश कर देता है।

धृतराष्ट्र बोले, हे विदुर! सब वेदोंमें मनुष्यकी अवस्था सौ वर्षकी लिखी है। परन्तु सब सौ वर्ष नहीं जीते; वह कौन सा कारण है जिससे आयु घट जाती है?

विदुर बोले, हे राजेन्द्र! अत्यन्त अभिमान, बहुत विवाद करना, किसीको वस्तुको न देना, क्रोध, अपनाही पालन करना और मित्रोंसे बैर करना, येही छः तेज खड्ग मनुष्योंकी आयुको काटते हैं। मनुष्यको मृत्यु नहीं मारती, येही छः वस्तु मारते हैं। हे भारत! जो विश्वास किये हुए मनुष्यकी स्त्रीसे कुकर्म्म करे, जो ब्राह्मण होकर वेश्यासे सङ्गम करे वा मद्य पीवे, जो दुष्टोंकी आज्ञा पाले, जो ब्राह्मणोंकी वृत्ति नाश करे, जो ब्राह्मणोंको नौकर रक्खे, ये सब ब्राह्मणको मारनेवाले मनुष्यके समान पापी हैं; वेदमें यह भी लिखा है कि इनको छूकर प्रायश्चित करना चाहिये। जो विद्वानोंके बचनोंको ग्रहण करे, नीतिको जानता हो, विषयोंको कह सकता हो, कुटुम्बसे बचे हुए अन्नको खाता हो; किसीका द्वेष न करता हो; बिना अनर्थ किये न घबड़ाय; उपकारको माने; सत्य बोले और सबके सङ्ग कोमलता करे, ऐसा विद्वान स्वर्गको जाता है। हे राजन्! सदा प्यारी बात कहनेवाले मनुष्य बहुत मिलते हैं; परन्तु अप्रिय और हितकारी बचन कहने और सुननेवाले बहुत कम हैं। जो राजाके प्रेम और क्रोधको छोड़कर हितकारी कड़वा वचन कहता है, वही राजाका सहायक है। कुटुम्बके लिये मनुष्यको छोड़ दे, गांवके लिये कुटुम्बको छोड़ दे, नगरके वास्ते गांवको छोड़ दे और अपने हितके लिये सब जगतको छोड़ दे। हे राजन्! हे विचीत्रवीर्य्यपुत्र! मैंने जुवेके समय आपसे कहा था कि हे राजन्! यह जुवा खेलना अच्छा नहीं है; परन्तु आपको मेरे वे बचन ऐसे कड़वे लगे जैसे रोगीको पथ्य। आप क्या कौवेरूपी अपने पुत्रोंसे हंसरूपी पाण्डवोंको हराना चाहते हैं? हे पृथ्वीनाथ! आप सिंहको छोड़कर सियारोंकी रक्षा करके समय आनेपर सोचेंगे। हे प्यारे धृतराष्ट्र! जो अपने भक्त दासपर कभी क्रोध नहीं करता, सेवक उसी स्वामीसे प्रसन्न रहता है। आपदाके लिये धनकी रक्षा करे, धनसे कुटुम्बकी रक्षा करे, अपनी रक्षा स्त्री और धनसे करे। हमने पहले समयमें भी यह देखा है कि, जुवा बैरका मूल है; इस लिये बुद्धिमानको उचित है कि हंसीके लिये भी जुवा न खेले। बुद्धिमानको उचित है कि नौकरोंकी वृत्ति न देकर राज्यकी आशा न करे; क्योंकि अच्छे भोग न पानेसे राजाको बिना भोग पाये मन्त्री राज्यका नाश कर देते हैं। राजाको उचित है कि सब कामोंको देखकर नौकरोंकी वृत्तिका निश्चय करे, पश्चात सहाय करने योग्य मनुष्योंकी सहायता ले; क्योंकि कठिन काम बिना सहायकोंके सिद्ध नहीं होते। जो आलस रहित सेवक स्वामीके अभिप्रायको जानकर काम करता है, स्वामीके कल्याणकी बात कहता है, अच्छे काम करता है, राजाकी शक्तिको जानता है, उस सेवकके ऊपर राजाको अपने कुटुम्बके समान कृपा करनी चाहिये। जो अपने स्वामीके बचनोंका निरादर करे, कड़वी बात कहे बताये हुए कामको न करे, और जो अपनी बुद्धिका अभिमान करे, वह मूर्ख सेवक उसी समय निकाल देनेके योग्य है। जो कठोर न हो, नपुंसक न हो, जिसको अभिमान न हो, जो शीघ्र काम करता हो, जिसको शत्रु न जीत सकता हो, जिसको कुछ रोग न हो, जिसका बचन कठोर न हो, ऐसे मनुष्यको दूत बनाना चाहिये, शास्त्रोंमें दूतके येही आठ लक्षण लिखे हैं। बुद्धिमान दूतको उचित है कि सन्ध्या समय शत्रुके घरमें न जाय, रात्रिको

चौराहेमें छिप कर न खड़ा हो, और जिस स्त्रीपर राजाका चित्त हो, उसपर अपना चित्त न चलावे। कभी राजाकी सम्मतिके विरुद्ध न कहे; दुष्ट सङ्गति करनेवाले वा बुरे सम्मतिवाले राजाके पास न जाय; राजासे यह न कहे कि हम आपका विश्वास नहीं करते हैं और कुछ बहाना करके उसके कामको न टाल दे। लज्जावान राजा, कुलटा स्त्री, राजाका नौकर, भाई, बेटा, पुत्र, बालक, बेटेवाली विधवा, सेनाका नौकर और जिसका अधिकार छीना गया हो, इतने मनुष्योंसे कुछ व्यवहार नहीं करना चाहिये। बुद्धि, उत्तम कुलमें जन्म, विद्या, इन्द्रिय जीतना, पराक्रम, थोड़ा बोलना और शक्तिके अनुसार दान देना, इन्हीं आठ गुणोंसे मनुष्यका प्रकाश होता है। हे प्यारे धृतराष्ट्र! जो राजा मनुष्यका आदर करे, वह इन सब गुणोंसे बढ़ जाता है; इस गुणसे आठो गुण छिप जाते हैं। हे राजेन्द्र! बल, रूप, स्वर और वर्णकी शुद्धता, पवित्र वस्तुको छूना, पवित्र सुगन्धिकी संघना, धन, कोमलता और अच्छी स्त्री, ये आठों गुण महात्माको मिलते हैं। थोड़ा खानेवाले मनुष्यको रोग नहीं होता; उसके आयु, बल और सुख बढ़ते हैं; उसका पुत्र बहुत बलवान होता है; इसी लिये महात्मा लोग बहुत खानेवालेकी निन्दा करते हैं। जो बुरा कर्म्म करे, बहुत खाय, लोकका बैर करे, बहुत छल करे, जो देश और कालको न समझे तथा बुरा वेष धारण करे, इन मनुष्योंको राज्यसे निकाल देना चाहिये। जो दान न करे, गाली दे, विद्या न पढ़े, सदा बनमें रहे, धूर्त हो, जो मानने योग्य मनुष्यका आदर न करे, जिसको दया न हो, जो सबसे बैर करे और जो उपकारको न माने, इन मनुष्योंसे अत्यन्त दुःख पड़नेपर भी भिक्षा न मांगनी चाहिये। जो सदा बुरे काम करे, जो सदा भूल करे, जो सदा झूठ बोले, जिसका प्रेम स्थिर न हो, जिसको कुछ प्रेम ही न हो, और जो अपने आपको बहुत चतुर माने, इन छः मनुष्योंसे प्रेम नहीं करना चाहिये। धनसे सहायक मिलते हैं, और सहायकोंसे धन मिलता है; ये दोनों परस्पर ऐसा सम्बन्ध रखते हैं कि एकके बिना दूसरेकी सिद्धि नहीं होती। मनुष्यको उचित है कि पुत्रोंको उत्पन्न करके विद्या पढ़ावे, फिर उनको सब ऋणोंसे छुड़ा दे, पश्चात किसी वृत्तिमें लगा दे और लड़कियोंका अच्छे स्थानपर विवाह कर दे। इसके पश्चात बनमें जाकर तपस्या करे। मनुष्यको उचित है कि जिसमें अपना और सब जगतका कल्याण हो, ऐसा काम करे। इससे सब प्रयोजन सिद्ध हो जाते हैं। जिस मनुष्यमें अपनी उन्नति करनेकी इच्छा, तेज शक्ति, साहस, धर्म्म, उद्योग और काम करनेका निश्चय, ये गुण हों उसे दरिद्रसे क्या भय है? हे राजेन्द्र! जिन पाण्डवोंसे देवतोंके सहित इन्द्र कांपते हैं, उनके सङ्ग बैर करनेसे क्या क्या हानियां हैं, सो हम आपको दिखाते हैं, जबसे पाण्डव और आपके पुत्रोंसे बैर हुआ है, तभीसे आपका चित्त घबड़ा रहा है, यशका नाश हो रहा है और शत्रु प्रसन्न होरहे हैं; जैसे धूमकेतु तारा आकाशमें उदय होकर जगतका नाश करता है, तैसेही भीष्म, द्रोणाचार्य्य, महाराज युधिष्ठिर और आपका क्रोध जगतका नाश कर सकता है। हे इन्द्रतुल्य! आपके सौ पुत्र, कर्ण, और पांचों पाण्डव मिलकर समस्त पृथ्वीका राज्य करें, यही हमारी सम्मति है। हे राजेन्द्र! आपके पुत्र बन है, और पांचो पाण्डव सिंह हैं; आप बनको मत काटिये और सिंहोंको भी मत मारिये। हे राजेन्द्र! बन सिंहकी और सिंह बनकी रक्षा करता है; बिना सिंहके बनका नाश हो जाता है और बिना बनके सिंहका नाश हो

जाता है ! इस लिये आप बन और सिंह दोनोंहीकी रक्षा कीजिये। आपके पापी पुत्र पाण्डवोंका कल्याण नहीं चाहते और न उनके गुणोंकी ओर ध्यान देते हैं; ये केवल पाण्डवोंके दोषोंहीको ढूढ़ते हैं। मनुष्यको उचित है कि जब अपने कल्याणकी इच्छा करे, तब पहले धर्म्म करे, जैसे स्वर्गसे अमृतका नाश नहीं होता, ऐसेही धर्म्मात्माका प्रयोजन नाश नहीं होता। जो सदा पाप भोगता है, और अपने मनको धर्म्ममें लगाता है, वही जगत और आत्मज्ञानको जानता है। जो मनुष्य समयके अनुसार धर्म्म, अर्थ और काम करता है, वह इन तीनोंके प्रभावसे मोक्षको प्राप्त होता है। हे राजन् ! जो आपत्ति पड़नेपरभी नहीं डरता, और जो क्रोध और आनन्दको रोकता है, वही सुखका पात्र है। हे राजन् ! मनुष्योंके जो पांच प्रकारके बल हैं, उनका वर्णन हम आपसे करते हैं, उन पांचोंमें जो बाहुबल है, सो सबसे छोटा है। अच्छा मन्त्री मिलना, धन मिलना, अपने पुरुषोंका अधिकार मिलना, जातिका बल, तथा बाहुबल येही पांच बल हैं। हे भारत ! जो इन पांचों बलोंका संग्रह करता है, उसको सब बलोंमें श्रेष्ठ बुद्धिबल प्राप्त होता है। जो सदा बड़े आदमोसे बैर करे, उससे बैर करनेसे मनुष्य यह न समझे कि मैं अपने बैरोसे बहुत दूर हूं; ऐसा कौन पण्डित है जो स्त्री, राजा, सांप, पढ़ानेवाले, स्वामी, शत्रु, भाग और आयुका विश्वास करे। हे राजन् ! जो अपनी बुद्धिरूपी बाणसे शत्रुका नाश करता है, उसका कोई वैद्य चिकित्सा नहीं कर सकता, उसके लिये कोई औषधी, होम, मन्त्र, मङ्गल, अथर्व्ववेदके मन्त्र और विष नाशक अच्छी बनाई हुई औषधि लाभदायक नहीं हैं। हे राजेन्द्र ! सांप, अग्नि, सिंह और उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए मनुष्यका निरादर नहीं करना चाहिये, क्योंकि ये सब महा तेजस्वी हैं। जगतमें अग्निका तेज बहुत माना जाता है, वह सब लकड़ोंमें गुप्त रूपसे रहता है, परन्तु जबतक कोई मनुष्य उसे न जलावे, तबतक काष्ठको भी नहीं जला सकता है; परन्तु जब वही अग्नि लकड़ी घिसनेसे प्रकट हो जाती है, तब उस काठ और सब बनको भस्म करदेती है। इसी प्रकार महातेजस्वी पाण्डव लोग इस वंशमें अग्निके समान उत्पन्न हुए हैं; वे काठमें छिपी हुई अग्निके समान क्षमा कर रहे हैं, हे राजन् ! आप और आपके पुत्र वेलिके समान और पाण्डव बड़े शालवृक्षके समान हैं; बिना वृक्षके आश्रय वेलि नहीं बढ़ती, इस लिये आप पाण्डवोंका आश्रय लीजिये। हे अम्बिकापुत्र धृतराष्ट्र ! आप बन और पाण्डव सिंह हैं, बिना बनके सिंह और बिना सिंहके बन नहीं रहता। इस लिये आप दोनोंहीकी रक्षा कीजिये।

३७ अध्याय समाप्त।

विदुर बोले, हे महाराज धृतराष्ट्र ! मनुष्यका प्राणवायु ऊपरको जाता है, फिर घूमकर भोतर चला जाता है। जब कोई गृहस्थके घरमें आवे, तब उसे आसन दे, जल लाकर उसके पैर धोवे पश्चात् उसका कुशल पूछ कर अपना कुशल कहे; फिर उत्तम अन्न खानेको दे। वेद जाननेवाला ब्राह्मण जिससे मधुपर्क, गौ और भोजन न पावे, महात्माओंने उसका जीवन वृथाही कहा है। लोभसे, भयसे या दुष्टतासे जिसके घरसे बिना खाये अतिथि लौट जाय, उसका जीवन वृथा है। वैद्य, घाव करनेवाला, भ्रष्ट ब्रह्मचारी, दुष्ट, मद्यपीनेवाला, गर्भ गिरानेवाला, सेनाका नौकर, वेद वेचनेवाला, अर्थात् जो धन लेकर वेद पढ़ावे, और जिसको पाप प्यारा हो, इन मनुष्योंके पैर नहीं धोने चाहिये। जो नमक, कच्चे अन्न,

दही, दूध, सहद, तेल, घी, तिल; मांस, फल, मूल, साग, लाल कपड़ा, फूल और गुड़ बेचे उस ब्राह्मणके पैर नहीं धोने चाहिये। हे राजन्! जिसको क्रोध न हो, जो अन्य द्रव्य और लोहेको समान समझे, जिसको कुछ शोक न हो, जो लड़ाई और मेलको कुछ न समझे, जिसको निन्दा और प्रशंसा समान हो, जो प्रिय और अप्रियको कुछ न जाने; जो साधारण रूपसे घूमे उसीको भिक्षुक कहते हैं। जो मूल और साक खाता है, जो अपने मनको वशमें रखता है, और अपने कामोंमें सावधान हो, और जो नये घरमें आकर भी सन्देह नहीं करता वही महात्मा तपस्वी कहाता है। बुद्धिमानसे बैर करके मैं दूर हूं, ऐसा विश्वास नहीं रखना चाहिये; क्योंकि बुद्धिमानके बड़े लम्बे हाथ होते हैं, वह दूरहीसे अपने शत्रुओंका नाशकर देता है। विश्वास करने योग्य मनुष्यका विश्वास करना चाहिये और न विश्वास करने योग्य मनुष्यका विश्वास नहीं करना चाहिये, क्योंकि इसका विश्वास करनेसे सर्व्वनाश होजाता है। मनुष्यको उचित है कि किसीका प्रहसन न करे, अपनी स्त्रियोंको वशमें रक्खे, किसीका भाग न छीने, मीठा वचन कहे, कोमलता रक्खे और स्त्रियोंसे प्यारी बाणी कहे, परन्तु स्त्रियोंके वशमें न होजाय, महा भाग्यवती पुण्य करनेवाली, स्त्री पूजा करनेके योग्य हैं। स्त्री घरका धन और घरकी शोभा है, इस लिये उसकी रक्षा सदा करनी चाहिये। मनुष्यको उचित है कि पिताको घरका स्वामी, माताको रसोईकी स्वामिनी, और अपने तुल्य मित्रको गौओंका अधिकार देकर आप खेतीका काम करे; नौकरोंके द्वारा व्यापार, पुत्रोंके द्वारा ब्राह्मणोंकी सेवा, जलसे अग्निकी सेवा; और सत्यसे राजाकी सेवा करे, तथा पत्थरसे लोहेके काम करे। जो ऐसा करता है, उसका तेज सर्व्वत्र जा सकता है। पाण्डव लोग महा तेजस्वी, क्षमावान और कुलीन हैं; वे इस समय इस प्रकार छिप रहे हैं जैसे काठके भीतर अग्नि। जिस राजाकी सम्मतिको भीतर और बाहरका कोई मनुष्य न जान सके, वही राजा सब वस्तुओंको देख सकता है, और बहुत दिनतक राज्य करता है। राजाको उचित है कि कार्य्यसिद्धि होनेके पहिले किसीसे न कहे, जब सिद्ध हो जाय, तब सबमें प्रगट कर दे। राजाको उचित है कि धर्म्म और राज्यके कार्य्योंको ऐसे स्थानपर बैठकर विचारे, जहां कोई न जा सके। सम्मति करनेके ये स्थान हैं, पर्व्वतका शिखर, एकान्त अटारी और बिना तिनकेका जङ्गल। हे भारत! अपनी सम्मति शत्रु, मूर्ख मित्र और रोगीसे नहीं कहनी चाहिये और न बिना परीक्षा किये किसीको मन्त्री बनाना चाहिये। जिस राजाके धन, प्रजाके लक्षण और राज सम्बन्धी कार्य्योंको केवल मन्त्रीही जानते हैं, वही राजा राजोंमें श्रेष्ठ कहाता है। जिस राजाके सिद्ध हुए कामको सभासद जानें, जिसका मन्त्र गुप्त हो, उस राजाका प्रयोजन निःसन्देह सिद्ध होता है। जो मूर्ख भूलसे भी बुरा काम करता है, वह उन कार्य्योंके नष्ट होतेही नष्ट होजाता है। अच्छे कामोंके करनेसे सुख होता है और उन्हींके न करनेसे पछताना पड़ता है। जैसे बिना वेद पढ़ा ब्राह्मण श्राद्ध नहीं कर सकता; ऐसेही राज्यके छः गुण बिना जाने राजा मन्त्रियोंके वचन सुनने योग्य नहीं होता। हे पृथ्वीनाथ! जो हानि लाभको समझता है। राज्यके छः गुणोंको जानता है और उत्तम मनुष्योंका आदर करता है, सब पृथ्वी उसीके वशमें रहती है। जो वृथा क्रोध नहीं करता और न वृथा प्रसन्न होता है; जो कामोंको करके आप देखता है; जो अपने धनको आप

देखता रहता है; वही राजा पृथ्वीका राज्य करता रहता है। जो नाम और चव मात्रसे सन्ताप करता है अर्थात् भोगादिकोंसे सम्बन्ध नहीं रखता, जो सब सेवकोंको सुख देता है, और किसीका कुछ नहीं छीनता, वही राजा होने योग्य है। ब्राह्मण ब्राह्मणको, पति स्त्रीको, राजा मन्त्रीको तथा दूसरे राजाको जान सकता है। शत्रुको पकड़कर कभी नहीं छोड़ना चाहिये; बल रहनेपर अवश्य उसको मारही डालना चाहिये और जीते हुएसे दूर बैठना चाहिये। जीते हुए शत्रुको छोड़नेसे पुनः हानि होनेका भय रहता है। देवता, राजा, ब्राह्मण, बूढ़े, रोगी और बालकोंपर कभी क्रोध नहीं करना चाहिये। बुद्धिमानको उचित है कि मूर्खोंके करने योग्य बिना प्रयोजनकी लड़ाईको न करे, क्योंकि वैर न करनेसे अपकीर्त्ति नहीं होती और न कुछ आपत्ति आती हैं। जिसकी प्रसन्नतासे कुछ लाभ न हो और क्रोधसे कुछ हानि न हो, सेवक ऐसे स्वामीको इस प्रकार छोड़ देते हैं, जैसे नपुंसक पतिको स्त्री छोड़ती है। बुद्धिका फल धन लाभ नहीं है, और न मूर्खताका फल दरिद्रता है। इस लोक और परलोकके व्यवहारोंको पण्डितही जान सकता है, मूर्ख नहीं। विद्यावृद्ध, शीलवृद्ध, बुद्धिवृद्ध, जातिवृद्ध और धनवृद्धोंका मूर्ख लोग निरादर करते हैं। बुरे चालचलनवाले, मूर्ख, निन्दक, क्रोधी और अधर्म्मी पर आपत्ति पड़ती है। किसीसे छल न करना, दान करना, समायकी मर्य्यादाको न तोड़ना और सबके कल्याणकी बात कहना ये गुण शत्रुको भी मित्र बना देते हैं! किसीसे छल नहीं करनेवाला सब कर्म्म करनेमें समर्थ, उपकारको माननेवाला और सीधा मनुष्य धन रहित होनेपर भी सबका मित्र बना रहता है। धारणा, मनको और इन्द्रियोंको वशमें रखना, पवित्रता, दया करना, कोमल वाणी और मित्रोंसे प्रेम करना; ये सात गुण लक्ष्मीको बढ़ानेवाले हैं। जो पालन करने योग्य मनुष्योंको अन्न न दे, दुष्ट हो, उपकारको न माने और निर्लज्ज हो, ऐसे राजाको दूरहीसे छोड़ देना चाहिये। जो दोषरहित मनुष्यको क्रोध दिलाता है, और आपही दोषी होता है, वह सांपके समान रात्रिको सुखसे नहीं सोता। हे भारत! जिनके बिगड़नेसे कुछ दोष हो, अर्थात राज्य या धनमें हानि हो, ऐसे मनुष्यकी सदा देवताके समान पूजा करनी चाहिये। जो स्त्रियोंमें लीन हो, जो पागल और नीचोंसे संसर्ग रखता हो, और जो दुष्टोंके सङ्गमें बैठता हो, उन सबसे सदा सन्देह रखना चाहिये। जिस घरमें स्त्री, छली अथवा बालक स्वामी हो, वह घर इस प्रकार डूब जाता है, जैसे नदीमें पत्थर। हे भारत! जो केवल अपने प्रयोजनहीको देखता है, और अधिकताको इच्छा नहीं करता हम उसीको पण्डित मानते हैं, क्योंकि अधिकताही उपद्रवको मूल है। जिस मनुष्यकी छली, भांट, और वेश्या प्रशंसा करें, उसका जीनाही क्या? हे राजेन्द्र! आपने परम धनुषधारी, महा तेजस्वी पाण्डवोंसे धन छीनकर दुर्य्योधनको दिया है, सो आप थोड़ेही दिनमें मूर्ख दुर्य्योधनको इस प्रकार राज्यसे नष्ट देखेंगे, जैसे धनका अभिमानी बलि राज्यसे नष्ट होगया था।

३८ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे विदुर! जैसे सूतमें बंधी काठपुतली नचानेवालेके वशमें रहती है, तैसेही मनुष्यभी प्रारब्धके वशमें रहता है; उसीसे मनुष्य अच्छा और बुरा काम करता है, इससे हमको निश्चय होता है कि मनुष्य

पराधीन है! तुम और कुछ कहो हम सुनना चाहते हैं।

विदुर बोले, हे राजेन्द्र! बिना समयकी बात कहनेसे बृहस्पतिको भी निन्दा होती है।

हे भारत! कोई मनुष्य दान देनेसे, कोई मीठी बात कहनेसे और कोई अच्छी सम्मति देनेसे जगतका प्यारा होता है। साधु, बुद्धिमान और पण्डितका बैर नहीं करना चाहिये, अपने मित्रके लिये अच्छा काम करना चाहिये और शत्रुके लिये शत्रुताका काम करना चाहिये। हे राजेन्द्र! जिस समय दुर्य्योधन उत्पन्न हुआ था, उसी समय मैंने आपसे कहा था, कि आप इस एक पुत्रको फेंक दीजिये, क्योंकि इस एकके फेंकनेसे सौ पुत्र जीवेंगे; और इसके रखनेसे सौ पुत्रका नाश होजायगा। जिस बढ़तीसे नाश होनेका भय हो, उस उन्नतिको छोड़ देना चाहिये और जिस हानिसे बढ़तीको आशा हो, उस हानिकी भी स्वीकार करनी उचित है। हे राजेन्द्र! जिस हानिसे पीछे बढ़ती हो, वह हानि नहीं कहाती; हानि वही कहाती है जिससे कुछ उन्नति न हो। हे धृतराष्ट्र! कोई मनुष्य गुणका धनी होता है! आप गुणरहित धनवान लोगोंको छोड़ दीजिये।

धृतराष्ट्र बोले, हे विदुर! तुम जो कहते हो सो सब ठीक है, पण्डितोंको ऐसाही कहना चाहिये, इसीसे उन्नति होती है; परन्तु हम क्या करें अपने पुत्रोंको नहीं छोड़ सकते; किन्तु यह जानते हैं कि जहां धर्म्म है, तहां विजय होगी।

विदुर बोले, हे राजेन्द्र! अत्यन्त गुणवान होनेपर भी जिसको शील नहीं है, वही मनुष्योंके नाशकी इच्छा करता है, अर्थात् आपको कुलका नाश नहीं करना चाहिये। दुष्ट लोग दूसरेको निन्दा करते हैं, दूसरेके दुःखको अपना कल्याण समझते हैं, और रोज प्रातःकाल उठकर विरोधका उपाय सोचते हैं। जिनके दर्शनसे दोष लगता है, उनके सङ्ग रहनेसे बहुत भय होता है, उनसे धन लेने और देने दोनोंहीमें भय है। जो परस्पर विरोध कराते हैं, उन पापी, अपना प्रयोजन सिद्ध करनेवाले, दुष्ट और निर्लज्जोंके सङ्ग नहीं रहना चाहिये; तथा और भी अनेक दोषयुक्त मनुष्योंको छोड़ना उचित है, क्योंकि जब प्रेम नष्ट हो जाता है, तब सब सुखोंका नाश हो जाता है, इस लिये नीचके सङ्ग पहलेहीसे प्रेम नहीं करना चाहिये। जो मित्रताका सुख है, सो दुष्टके प्रेमसे नहीं होता है। दुष्ट मित्रको अपकीर्त्तिका यत्न करता है, और उसकी हानिका उपाय करता है; थोड़ा दोष होनेपर भी दुष्ट मित्र शान्त नहीं होता। ऐसे मूर्ख, छली, निर्लज्ज, दुष्ट मित्रको विद्वान बुद्धिसे विचार कर दूरसे छोड़ दें। जो जाति, दरिद्र, दीन और रोगियोंके ऊपर कृपा करता है, वह पशु और पुत्रोंके सहित कल्याणको प्राप्त होता है, जो अपने कल्याणकी इच्छा करें, उसको उचित है कि पहले अपने जातिवालोंकी वृद्धि करें। हे राजेन्द्र! इस लिये आप भी अपने कुलको वृद्धि कीजिये, ऐसा करनेसे आपका बहुत कल्याण होगा। हे भरतकुलसिंह! अपने वंशमें उत्पन्न हुए मूर्खकी भी रक्षा करनी चाहिये, फिर पाण्डव तो सब गुणोंसे भरे और आपकी कृपा चाहनेवाले हैं। हे पृथ्वीनाथ! आप वीर पाण्डवोंके ऊपर कृपा कीजिये और उनके निर्व्वाहके लिये कुछ ग्राम दे दीजिये। हे नरनाथ! ऐसा करनेसे लोकमें आपकी कीर्त्ति बढ़ेगी। आप कुलमें बूढ़े हैं, इस लिये आपहीको सब पुत्रोंका स्वामी होना चाहिये। हे राजेन्द्र! मुझकोभी आपके कल्याणके बचन कहने चाहिये, क्योंकि मैं आपका कल्याण चाहता हूं; हे तात! यदि आप अपना कल्याण

चाहते हैं, तो पाण्डवोंसे लड़ाई मत कीजिये। हे भरतकुलसिंह! जातिके सङ्गमें बैठ कर खाना चाहिये और उनसे विरोध न रखना चाहिये, जातिके सङ्ग भोजन करना चाहिये, प्रीति करनी चाहिये और अच्छी बात करनी चाहिये; उनसे विरोध कदापि नहीं करना चाहिये; क्योंकि जाति डुबा देती है और जातिही पार करती है। दुष्ट डुबा देते हैं और अच्छे उद्धार करते हैं। हे राजेन्द्र! आप पाण्डवोंके सङ्ग मित्रता कोजिये, ऐसा करनेसे आपको कोई शत्रु नहीं जीत सकेगा। जैसे विषमें बुझे बाणवाले व्याधेको देखकर हरिण घबड़ाते हैं, वैसेही जिस लक्ष्मीवान मनुष्यको देखकर जातिवाले घबड़ायं, उसके समान पापी और कौन होगा? हे पुरुषश्रेष्ठ! युद्धमें अपने पुत्र अथवा पाण्डवोंको मरा हुआ सुन पीछेभी आपका दुःख होगा, इस लिये इसी समय उसका विचार कर लीजिये। आप जानते हैं कि जीवन अनित्य है, इस लिये पहिलेहीसे ऐसा कर्म्म नहीं करना चाहिये जिससे बुढ़ापेमें चारपाईपर पड़कर सोचना हो। शत्रुका छोड़कर और कोई मनुष्य ऐसा नहीं है जो अनीति न करे, परन्तु बुद्धिमानका यह विचारना चाहिये कि जो बीत गया सो बीत गया अब आगेको अच्छाही कर्म्म करेंगे! हे राजन्! दुर्य्योधनने जो कुछ दोष किया है, उस सबको आप पाण्डवोंसे क्षमा कराइये, क्योंकि आप कुलमें बूढ़े हैं। हे पुरुषश्रेष्ठ! जब आप पाण्डवोंको राज्य दे दीजियेगा, तब जगतके सब महात्मा आपकी प्रशंसा करने लगेंगे और आपके सब दुःख नाश होजायंगे। जो पण्डितोंके उत्तम वचनोंको स्मरण करके काम करता है, वह बहुत दिनतक सुख और यशको भोगता है। जो ज्ञानी होकरभी मनुष्यके बुरे वचनोंको ग्रहण करता है, और फिर बिना विचारेही उसके अनुसार काम भी करता है, उसकी वृद्धि नहीं होती। जो पहले पापको बिना विचारेही काम करने लगता है, उस मूर्खकी हानि अवश्य होती है। हे राजेन्द्र! धनकी इच्छा, थोड़ा सोना, अज्ञानता, अपना कर्म्म, दुष्ट मन्त्रीका विश्वास और मूर्ख दूतका विश्वास यही छः राज्यसुखके द्वार हैं, जो राजा इन छः द्वारोंको बन्द करके राज्य करता है, वही बुद्धिमान कहाता है। जो राजा अर्थ धर्म्म और कामका विचार करके शत्रुओंसे युद्ध करता है, उसकी विजय होती है। मनुष्यको बिना विद्या पढ़े और बिना बूढ़ोंकी सेवा किये कोई काम नहीं करना चाहिये। धर्म्म और अर्थको वृहस्पतिके समान बुद्धिवाले मन्त्रीही समझ सकते हैं। हे राजन्! जो वस्तु समुद्रमें गिर गई, वह नष्ट हो गई और जिस मन्त्रीका बचन राजाने न सुना वह भी नष्ट होगया; मूर्खको कही बात नष्ट होगई और राखमेंकी हुई होम नष्ट होगई। बुद्धिमानको उचित है कि बुद्धिसे निश्चय करके, देखकर बुद्धिमानोंसे सुनकर अच्छे मनुष्यको अपना मन्त्री बनावे। हे राजेन्द्र! विनय अपकीर्त्तिका, पराक्रम अनर्थका, क्षमा क्रोधका और उत्तम आचरण बुरे लक्षणोंका नाश करते हैं। हे राजन्! भोजन, निवास, घर, कर्म्म और वस्त्रादिकोंसे मनुष्यके कुलकी परीक्षा होती है। जैसे मरे हुए मनुष्यको प्रसन्न करनेसे कुछ लाभ नहीं होता ऐसेही काम होनेके पश्चात उपाय करनेसे कुछ सिद्धि नहीं होती। पण्डितका सेवा करनवाले वैद्य, धार्म्मिक, सुन्दर मित्र, उत्तम वचन कहनेवाले और अपने प्रेमीकी रक्षा सदा करनी चाहिये। चाहे उत्तम कुलमें उत्पन्न हुआ हो चाहे बुरे कुलमें उत्पन्न हुआ हो, जो धर्म्मकी मर्य्यादाको नहीं छोड़े तथा जितेन्द्रिय और बुद्धिमान हो सो कुलीनोंसे अच्छा है। जिनके चित्तसे चित्त मिले हों, जो दोनोंके सुखसे सुख

मानते हों, जिन दोनोंकी बुद्धि समान हो, उनका प्रेम कभी नष्ट नहीं होता। जो मूर्ख तिनकोंसे छिपे हुए कुएंके समान छलसे प्रेम करते हैं, वह मित्र दूरसे छोड़ने योग्य हैं; क्योंकि उनकी प्रीति बुद्धिमानसे नहीं निबहती। मूर्ख, अभिमानी, क्रोधी, साहसी और अधर्म्मीसे प्रेम नहीं करना चाहिये। बुद्धिमान, धर्म्मात्मा, सत्यवादी, गम्भीर, प्रेमी, जितेन्द्रिय, मर्य्यादाको न छोड़नेवाले और महात्मा मनुष्यसे प्रेम करना चाहिये। अपनी इन्द्रियोंको विषयोंसे रोकना सब धर्म्मोंमें श्रेष्ठ है, क्योंकि इन्द्रियोंको बहुत विषयोंमें जाने देनेसे अत्यन्त बुद्धिमानकाभी नाश हो जाता है। पण्डितोंने मित्रको मानना, कामलता, किसी प्राणीकी हानि न चाहना, क्षमा और धारणा को आयु बढ़ानेवाले कर्म्म कहे हैं। जो उत्तम बुद्धिमानसे छीने हुए धनको पुनः देनेकी इच्छा करता है, वह अत्यन्त बुद्धिमान होनेपर भी नपुंसक कहाता है। जो यह विचारे कि मैं काम होनेके पश्चात् उपाय कर लूंगा, वह भी मूर्खही है। जो अपने कार्य्यके आरम्भ और समाप्तिको जानता है, उसकी हानि कभी नहीं होती। जो मनुष्य, मन, बचन और कर्म्मसे बुरा काम करता है, उसका अवश्य नाश होता है इस लिये अच्छे ही काम करने चाहिये। अच्छे काम करने, विद्या लाभ, और कामलता तथा पण्डितोंके दर्शन, यही कर्म्म लाभदायक हैं। सदा उद्योग करनाही लाभ, धन और सुखका मूल है, उद्योगी सुखी रहता है, और बहुत धन प्राप्त करता है। हे राजन्! उद्योगके समान उत्तम कर्म्म कोई नहीं है, उन्नति चाहनेवाला मनुष्य सदा क्षमा करे, असमर्थ सभीके ऊपर क्षमा करता है, परन्तु जो समर्थ होकर क्षमा करे, वही धर्म्मात्मा कहाता है। जो लाभ और हानिको समान समझता है, वही सदा क्षमा कर सकता है। जिस सुखके भोगनेमें धर्म्म और यशका नाश न हो, वही काम मनुष्यको करना चाहिये। कभी भूलकर भी अधर्म्मका काम करना उचित नहीं। हे राजेन्द्र! मूर्ख, रोगी, मद्य पीनेवाले और आलसियोंको धन नहीं मिलता। तथा जो मनुष्य इन्द्रियोंको अपने वशमें नहीं रखते और जिनको उत्साह नहीं है, वे भी कभी धनवान नहीं होते। जो कोमलतासे रहता है, लज्जा करता है और सत्य बोलता है, मूर्ख लोग उसको असमर्थ कहा करते हैं; परन्तु उसीकी उन्नति होती है। जो बहुत उद्योग करता है, दान करता है, युद्धसे हटता नहीं, अपनी प्रतिज्ञाको नहीं छोड़ता और सब कामोंको बुद्धिसे बिचारकर करता है, उस मनुष्यका सुख कभी नष्ट नहीं होता। अत्यन्त गुणवान और अत्यन्त निर्गुण इन दोनोंमें किसीके पास लक्ष्मी नहीं रहती है; क्योंकि लक्ष्मी अत्यन्त गुणोंकोभी इच्छा नहीं करती और निर्गुणसे तो, प्रसन्नही नहीं होती। जैसे पागल गौ नियमसे नहीं चलती, ऐसेही मूर्खोंका धनभी अच्छे मार्गोंमें नहीं जाता। वेदोंका फल यज्ञ है, विद्याका शील स्त्रीका पुत्र और धनका फल धर्म्म है। जो अधर्म्मसे पैदा किये हुए धनसे पितरोंका श्राद्ध करता है, उस श्राद्धका फल पितरोंको नहीं पहुंचता, क्योंकि सुख धर्म्मसे होता है। वन, जल; दुःखके स्थान, आपत्ति, भूल, और युद्धोंमें धर्म्मात्माको भय नहीं होता। अपनी उन्नति करनी, इन्द्रियोंको जीतना, सब कर्म्मोंको करना, भूल न करना, धारणा स्मरण रखना और कामोंको विचारकर करना, येही उन्नतिके मूल हैं। तपस्वियोंका तप, वेद जाननेवालोंका वेद, दुष्टोंका हिंसा और महात्माओंका क्षमाही बल है। जल, मूल, फल, दूध, घी और दयाका बचन इन सब वस्तुओंसे व्रतका नाश नहीं होता। जो

अपने विरुद्ध कर्म्मही उसे कभी नहीं करना चाहिये। धर्म धनसे होता है; धन कामको छोड़नेसे बढ़ता है। क्षमासे क्रोधको, साधुतासे दुष्टको, दानसे मूर्खताको, झूठसे सत्यको जीतता चाहिये। स्त्री, धूर्त, आलसी डरपोक, दुष्ट, अभिमानी, चोर, कृतघ्न और नास्तिकका कभी विश्वास नहीं करना चाहिये। जो सदा देवता और बूढ़ोंकी सेवा करता है, उसकी कीर्त्ति, आयु; यश और बल बढ़ते हैं। जो धन बहुत क्लेश अधर्म और शत्रुकी प्रार्थना करनेसे मिले, उसकी कदापि इच्छा नहीं करनी चाहिये। मूर्ख मनुष्य, बिना सन्तानका मैथुन, निर्धन प्रजा और राजाके रहित राज्यका सोच करना चाहिये। मार्ग मनुष्योंके लिये, जल पर्व्वतोंके लिये, भोजन करना स्त्रियोंके लिये और बुरा वचन मनुष्योंके लिये बुढ़ापा है। बिना पढ़े वेद, बिना व्रतका ब्राह्मण, झूठ बोलनेवाला मनुष्य, आश्चर्य कर्म्म करनेवाली पतिव्रता और वियोगिनी स्त्री, ये सब दुःखी कहाते हैं। सुवर्णका चांदी, चांदीका तांबा, तांबेका सीसा, और सीसेका लोहा मल है। सोनेसे निद्राको, कामसे स्त्रीको, इन्धनसे अग्निको और जलानेसे मद्यको नहीं जीतना चाहिये। जो दानसे मित्रोंको युद्धसे शत्रुओंको और भोजन वस्त्रसे कुटुम्बको जीतते हैं, उनका जीना सफल है। जिनके पास सहस्र रुपये हैं वे भी जीते हैं और जिनके पास सो हैं वेभी जीते हैं, इसलिये आप अपने राज्य बढ़ानेको इच्छाको छोड़ दें, तब सुखसे जीवेंगे। जगतमें जितना धन पशु और स्त्री हैं, उन सबको एक मनुष्य नहीं भोग सकता; यही विचारकर आप अपनी इच्छाको रोक दें। हे राजन्! हम फिरभी आपसे यही कहते हैं कि यदि आप अपने और पाण्डके पत्रोंको समान समझते हों, तो सबको समान दृष्टिसे देखें।

३९ अध्याय समाप्त।

विदुर बोले, जो आदर पाकर और अभिमानको छोड़कर अपनी शक्तिके अनुसार अच्छा काम करता है, वह शीघ्र सुखी होता है। एक महात्मा प्रसन्न होकर सब जगतका उपकार कर सकते हैं। जो धर्म्मको छोड़कर पापका आश्रय लेकर बड़े कामोंको भी नहीं करता, वह दुखोंसे निकलकर इस प्रकार सुख भोगता है, जैसे सांप पुरानी केंचुलीको छोड़कर सुखी होता है। झूठसे लाभ करना, राजासे किसीकी चुगली करनी और गुरुकी निन्दा करनी, ये ब्रह्महत्याके समान पाप हैं। निन्दा मृत्युका, बहुत बोलना लक्ष्मीका, किसीका आदर करना अभिमानका, और कामोंमें शीघ्रता करनी विद्याका शत्रु है। आलस्य, मदादिक पीना, भूल, चञ्चलता, बुरी सम्मति, कठोरता, अभिमान और न देना, ये सात विद्यार्थियोंमें दोष कहे जाते हैं। विद्यार्थीको सुख कहां और सुख चाहनेवाला की विद्या कहां? इस लिये सुख चाहनेवाला विद्याको और विद्या चाहनेवाला सुखको छोड़ दे। अग्नि काठसे, स्त्री पुरुषोंसे, समुद्र नदियोंसे, और काल प्राणियोंसे तृप्त नहीं होता। हे राजन्! आशा धारणाको, काल उन्नतिको, क्रोध लक्ष्मीको, यश दुष्टताको, न पालना पशुओंको, और क्रोधी ब्राह्मण राज्यको नाश कर देते हैं। बकरी, कांसा, चांदी, शहत, ज्योतिषी, वेद जाननेवाले, बूढ़े जातिके मनुष्य और कुलीन मनुष्य आपके घरमें सदा बने रहें। स्वयम्भू मनुने कहा है बरे, बैल, चन्दन, बीन, शीशा, शहत, घी, लोहा; तांबेका पात्र, शंख, शालिग्राम और गोरोचन ये सब घरमें रखने चाहिये. हे भारत! इन सबको रखनेका प्रयोजन ब्राह्मण और अतिथियोंकी पूजाही है। हे तात! अब हम सबसे उत्तम बात तुमसे कहते हैं, यह बात बहुत श्रेष्ठ और सबसे उत्तम है। मनुष्यको उचित है कि काम भय, लोभ और जीनेके लोभसे भी

धर्म्मको न छोड़े, क्योंकि धर्म्म नित्य और सुख दुःख अनित्य हैं ; जीव नित्य है, परन्तु जगतका कारण अर्थात अविद्या अनित्य है ; आप अनित्यको छोड़कर नित्यको ग्रहण कीजिये क्योंकि सन्तोषही परम लाभ है। हे राजेन्द्र! आप बिचारिये कि कैसे कैसे बलवान महात्मा गुणवान धन और धान्यसे भरे हुए महाराज समस्त पृथ्वीका राज्य करके और फिर सब सुखोंको छोड़कर मर गये। हे राजेन्द्र! मनुष्य अपने प्यारे मरे हुए पुत्रको जङ्गलमें छोड़कर चला आता है, फिर मनुष्य उसे चितामें जला कर बाल खोलकर रोता है, परन्तु उसके सङ्ग कोई नहीं जाता। मरे हुए मनुष्यके धनको कोई दूसरा भोगता है, मनुष्यको हड्डी रुधिर और मांसको अग्नि भक्ष कर देती है, मनुष्यके सङ्ग केवल पुण्य और पाप दोही वस्तु जाती हैं। मरे हुए मनुष्यको जातिवाले मित्र और पुत्र ऐसे छोड़कर चले आते हैं, जैसे फूल फलरहित वृक्षको पक्षी छोड़ते हैं। अग्निमें जलते हुए मनुष्यके सङ्ग केवल अपना किया हुआ कर्म्मही जाता है, इस लिये सबको उचित है कि यत्न करके धर्म्म करे। इस लोकके नीचे और ऊपर महा अन्धकार भरा है, परन्तु उस अन्धकारमें अधर्म्मी लोग जाते हैं, इस लिये आप अभीसे उसका विचार कीजिये तो वहां नहीं जाइयेगा, नहीं तो उसी अन्धकारमें पड़ियेगा। हे राजेन्द्र! हमने जो बचन आपसे कहे, यदि उनके अनुसारही आप काम कीजियेगा, तो सुख, यश और आनन्द पाइयेगा। हे भारत! आत्मा नदी है, उसमें सत्य रूपी जल भरा है, सत्य और धारणाही उसके दोनों तट हैं, दया तरङ्ग हैं, पांचो इन्द्री जल भरा है, काम और क्रोध बड़े बड़े ग्राह घूम रहे हैं, इस नदीमें स्नान करनेवाले महात्माही सुख पाते हैं। हे राजेन्द्र! आप धारणाकी नावपर बैठकर इस नदीके पर होइये। जो बुद्धि, बिद्या, धर्म्म, और अवस्थामें बूढ़े मनुष्य तथा अपने मित्रोंसे बूझकर करने और न करने योग्य कामोंको बिचारता है, वह कभी भ्रममें नहीं पड़ता, जो धारणासे लिङ्ग और पेटको, नेत्रसे हाथ और पैरको, मनसे नेत्र और कानको तथा कर्म्मसे मन और बचनको रक्षा करता है, वह कभी दुःख नहीं पाता। जो ब्राह्मण रोज स्नान करे, रोज जनेऊ बदले, रोज वेद पढ़े, पतितका भोजन न करे, सत्य बोले और गुरुकी सेवा करे, सो ब्राह्मण कभी अपने धर्म्मसे नष्ट नहीं होता। जो क्षत्री वेदोंको पढ़े, यज्ञ करे, प्रजाका पालन करे; गौ और ब्राह्मणके लिये सम्मुख युद्धमें शस्त्रसे मरे, वह स्वर्गमें जाता है। जो वैश्य वेदोंको पढ़े; समय पर ब्राह्मण, क्षत्री और अपने सेवकोंको धन दे और यज्ञके धूवेंको सूंघके पवित्र हो, सो सुख भोगता है। जो शूद्र ब्राह्मण क्षत्री और वैश्य इन तीनो वर्णोंको सेवा करे और उनको प्रसन्न करे वह मरकर स्वर्गमें जाता है। मैंने यह चारो वर्णोंका धर्म्म आपसे कहा। हे राजन्! इस समय पाण्डुके पुत्र क्षत्रधर्म्मसे नष्ट होते हैं; आप उनकी रक्षा कीजिये।

धृतराष्ट्र बोले, हे बिदुर! जो तुम हमसे कहते हो, हमारो बुद्धिभो वैसोही है, मैं सदा पाण्डवोंके सङ्ग ऐसाही करना चाहता हूं, परन्तु दुर्य्योधनको देखतेही मेरी बुद्धि नष्ट हो जाती है इससे हमें निश्चय होता है कि प्रारब्धको कोई नहीं नांघ सकता! प्रारब्धही बड़ा बलवान है पुरुषार्थको धिक्कार है।

४० अध्याय समाप्त।

उद्योग पर्व्वमें प्रजागर पर्व्व समाप्त।

अथ सनत्सुजातपर्व्व।

धृतराष्ट्र बोले, हे बिदुर! तुम्हारे बचन बहुत विचित्र हैं; इस लिये यदि तुम्हें और

कुछ कहना हो तो कह दो, हम बहुत श्रद्धासे सुनते हैं।

विदुर बोले, हे धृतराष्ट्र! सनतसुजान नामक कुमारने कहा है कि जगतमें मृत्यु कुछ वस्तु नहीं है, हे महाराज! वेही सनत्सुजात आपसे गुप्त और प्रगट विषयोंका वर्णन करेंगे। क्योंकि वे सब बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ हैं।

धृतराष्ट्र बोले, हे विदुर! तुम उन विषयोंको नहीं जानते हो, जो हमसे सनत्सुजात कहेंगे? यदि तुम जानते हो तो तुमही कहो।

विदुर, बोले, मैं शूद्रा स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हुआ हूं, इस लिये उन विषयोंको नहीं कह सकता, परन्तु महा बुद्धिमान सनत्सुजात मुनिको मैं जानता हूं। जो ब्राह्मणकुलमें उत्पन्न हुआ है, वही सब गुप्त बातोंको कह सकता है। आप उनका निरादर मत कीजियेगा, क्योंकि देवता भी उनका सत्कार करते हैं।

धृतराष्ट्र बोले, हे विदुर! तुम हमसे उस उपायका वर्णन करो जिसके करनेसे हम इसी शरीरसे सनत्सुजात मुनिको देखें।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! उसी समय विदुरने व्रतधारी सनत्सुजात मुनिका ध्यान किया। उनके ध्यान करतेही सनत्सुजात मुनि पहुंच गये, विदुरने उनको देखतेही शास्त्रविधिके अनुसार उनकी पूजा करी। जब मुनि शान्त होकर आसनपर बैठे तब विदुरने हाथ जोड़कर कहा, हे भगवन्! राजा धृतराष्ट्रके मनने कुछ सन्देह हुआ है, मैं उत्तर नहीं दे सकता, आप कहिये, उसके सुननेसे राजा धृतराष्ट्रके सब दुःख नष्ट हो जायंगे, तब इनके लाभ, हानि, प्रिय, अप्रिय, राग, द्वेष, मृत्यु और बुढ़ापा सब नष्ट हो जायंगे; क्योंकि इस समय इनको भय, क्रोध, भूख, प्यास अभिमान, अनिच्छा, आलस, काम, क्रोध, हानि और लाभ बहुत दुःख दे रहे हैं।

४१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! तब बुद्धिमान राजा धृतराष्ट्रने विदुरके वचनोंकी प्रशंसा करके और अपनी बुद्धिको स्थिर करके एकान्तमें सनत्सुजात मुनिसे पूछा।

धृतराष्ट्र बोले, हे सनत्सुजात! हमने सुना है कि आप कहते हैं कि मृत्यु कुछ वस्तु नहीं है, और यहभी सुना है कि इन्द्रादिक देवतोंने बहुत तपस्या करी तौभी वे अमर न हुए, इन दोनोंमें कौनसी बात सत्य है?

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, हे राजन्! आपने जो दो प्रश्न हमसे किये हम उन दोनोंहीका उत्तर आपको देते हैं, शङ्का मत कीजिये। हे क्षत्रिय! ये दोनोंही पक्ष सत्य हैं। पण्डित लोगोंने कहा है कि भूल हैं, क्योंकि हम भूलको मृत्यु और न भूलनेको अमृत कहते हैं; भूलहीसे राक्षसोंका निरादर होता है; भूल न करनेसे महात्माओंका नाश नहीं होता। मृत्यु सिंहके समान आकर किसीको नहीं खा जाती, क्योंकि मृत्युका रूप आजतक किसीने नहीं देखा, अनेक मूर्ख यमको मृत्यु कहते हैं, परन्तु यह सबही ठीक नहीं हैं, क्योंकि अपने मनमें यमराजकी कल्पना इस प्रकार कर ली जाती है, जैसे रसरीमें सांपकी। ब्रह्मचर्य्यही अमृत है। यमराज पितर लोकमें रहकर पाप और पुण्यका फल देते हैं; यमहीकी आज्ञासे क्रोध, लोभ और भूलरूपी मृत्यु मनुष्यका नाश करती है; जो अहङ्कारके वशमें होकर बुरा काम करता है, उसको आत्मासे योग कभी नहीं होता; मोहमें पड़ा हुआ मनुष्य उस लोभ और भूलरूपी मृत्युके वशमें होकर इस लोकसे मरकर नरकोंमें पड़ता है, फिर वहांसेभी इन्द्रियोंके वशमें होकर दूसरे जन्ममें जाता है; इसी कारणसे मृत्यु मरनेके नामसे प्रसिद्ध हुआ है। कुछ कर्म्म शेष रहनेसे मनुष्यको फल भोगनेकी इच्छा होती है, उस फल भोगनेकी इच्छाके

वशमें होकर मनुष्य पुनः जन्म लेता है; इसी प्रकारसे जन्म लेता है और मरता है, जन्म लेता है और मरता है। परन्तु अष्टाङ्ग योग करने और अच्छे काम करनेसे जीवका फिर जन्म नहीं होता। यही पहले कहा कर्म्म सब इन्द्रियोंसे अपने वशमें कर लेता है, इससे जीव मिथ्या कर्म्मोंको करने लगता है; ऐसा होनेसे यह कर्म्मगति नित्य हुई। उलटे कर्म्म करनेसे आत्मशक्तिका नाश होता है; तब जीव विषयोंका ध्यान करता है, वह ध्यान बुद्धिका नाश करता है; नष्ट हुई बुद्धि काम और क्रोधमें जाती है, काम और क्रोधही मूर्खोंके लिये मृत्युरूप होजाते हैं। जो बुद्धिमान् मनुष्य है, वह इस मृत्युको जीत लेता है, क्योंकि वह उस ध्यानहोके समय होनेवाले काम और क्रोधका बुद्धिसे निरादर करते हैं; इसीसे विद्वानको काम, क्रोधरूपी मृत्यु दुःख नहीं देते। विषयोंका ध्यान करनेवाला मनुष्य विषयोंमें पड़कर नष्ट हो जाता है। मनुष्य विषयोंको छोड़कर दुःखोंका नाश करे; क्योंकि विषयही अन्धकार रूप है, और अन्धकारही नरक है। मनुष्य इस नरकमें इस प्रकार गिरता है, जैसे कोई मतवाला गर्हेमें गिर पड़ता है। जो बुद्धिमान मनुष्य विषयोंको छोड़कर विषयोंकी जड़को काटता है; उसका मृत्यु क्या कर सकती है? हे क्षत्रिय! जैसे काठका बना सिंह मनुष्यको नहीं मार सकता, तैसेही बुद्धिमानको मृत्यु नाश नहीं कर सकती। हे धृतराष्ट्र! वही क्रोध, लोभ और मोहरूपी मृत्यु तुम्हारे शरीरमें घुस रही है; तुम ज्ञानी होकर भी इस मृत्युका नाश नहीं करते हो? मनुष्य ज्ञानहोसे इस मृत्युका नाश कर सकता है; कर्म्मसे नहीं। इस लिये तुम ज्ञानहोका आश्रय लो।

धृतराष्ट्र बोले, हे सनत्सुजात! हमने विद्वानोंके मुखसे सुना है, कि वेदोंमें लिखा है यज्ञ करनेसे मनुष्यको सनातन पवित्र और ब्राह्मणोंके लोक मिलते हैं; तब आप कैसे कहते हैं कि कर्म्मसे मृत्युका नाश नहीं होता?

सनत्सुजात बोले, हे धृतराष्ट्र! जो तुम कहते हो, इसमें तुम्हारा दोष नहीं है, क्योंकि सबही मूर्खतासे ऐसा कहा करते हैं, और मूर्खही लोग इस मार्गसे स्वर्गादिकोंको जाते हैं; और उसी स्वर्गादिके लिये कर्म्मोंका करना लिखा है, मोक्षके लिये नहीं। कामना रहित ब्रह्म अविद्याके वशमें होकर शरीरको धारण करता है और उसी अपना समझता है, फिर सब मार्गोंको छोड़कर एक ज्ञानरूपी मार्गसे जीव मोक्षको प्राप्त करता है।

धृतराष्ट्र बोले, हे महापण्डित! तुमने जो कहा कि परमात्माही शरीरको धारण करते हैं; सो हमारी बुद्धिमें नहीं आता; सो तुम कहो कि परमात्मापर आज्ञा करनेवाला कौन है, जिसकी आज्ञाके वशमें होकर ब्रह्मभी सुख और दुःखको भोगता है? उसका क्या काम है, और क्या सुख है?

सनत्सुजात बोले, हे राजन् धृतराष्ट्र! जीव और ब्रह्मको अलग माननेसे बड़ा भारी दोष होता है, जीव और ईश्वरका सम्बन्ध अनादि है; इस लिये जीवभी नित्य है; जीवको दुःख और सुख होनेसे ब्रह्मको कुछ विकार नहीं होता क्योंकि अज्ञानके वशमें होकर जीव बनते हैं। वेदोंमें लिखा है कि जो यह सब जगत दीखता है, उस सबको मायाके वशमें होकर परमेश्वरही अपनी शक्तिसे बनाते हैं, इस लिये जगत भी परमेश्वरसे भिन्न नहीं है, क्योंकि शक्ति और शक्तिमानमें कुछ भेद नहीं होता, परन्तु जगत अनित्य है।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे सनत्सुजात! इस जगतमें जो पाप और पुण्य करता है, सो

हमने सुना है कि पापसे पुण्य और पुण्यसे पाप नष्ट हो जाता है; इसमें क्या सत्य है।

सनत्सुजात बोले, हे राजन् धृतराष्ट्र! मनुष्यको पाप और पुण्य दोनोंहीका फल मिलता है; परन्तु मोक्ष होनेसे विद्वानको नित्य ज्ञान प्राप्त होनेके कारण दोनोंमेंसे एकका भी फल प्राप्त नहीं होता; परन्तु बिना मोक्षके पापके समय पापका और पुण्यके समय पुण्यका फल होता है। विद्वान धर्म्मसे पापका नाश करता है; क्योंकि पापसे धर्म्म बलवान है। साधारण मनुष्य इस शरीरको छोड़कर पाप और पुण्य दोनोंका फल भोगता है।

महाराज धृतराष्ट्र बोले; हे पण्डित! श्रेष्ठ धर्म्म करनेवाले ब्राह्मण मनुष्य इस शरीरको छोड़कर पाप और पुण्य दोनोंका फल भोगते हैं।

हे पण्डितश्रेष्ठ! जो धर्म्म करनेवाले ब्राह्मणोंके सनातन लोक हैं, उनका वर्णन आप हमसे कीजिये, हम उनको सुनना चाहते हैं और दूसरे कर्म्मके सुननेकी इच्छा नहीं करते।

श्रीसनत्सुजात बोले, हे राजन् धृतराष्ट्र! जैसे बलवान बलवानको देखकर युद्ध करनेकी इच्छा करता है, ऐसेही जो ब्राह्मण व्रतको देखकर उसको पूरा करनेकी इच्छा करते हैं; वे ब्रह्म लोकको जाते हैं; जो ब्राह्मण सदा धर्म्मही करते हैं, सो ज्ञान प्राप्त करके स्वर्गको जाते हैं। वेद जाननेवाले पण्डितोंने धर्म्मका प्रयोजन इस प्रकार लिखा है कि धर्म्मसे स्वर्ग वा इस लोकमें सुखको इच्छा न करनी चाहिये। धर्म्म बाह्य और आभ्यन्तरके भेदसे दो प्रकारका है; सो मनुष्यको यह दोनोंही करना उचित है; वह धर्म्म करनेवाला ब्राह्मण वा सन्यासी उन घरोंमें भोजन करे, जहां, वर्षाकालके तिनकोंके समान अन्न और जल भरे हों, अर्थात दरिद्रीके घरमें भोजन करने न जाय। जहां अपने गुण प्रकाश किये बिना अत्यन्त भय हो अर्थात् जहां हम विद्वान हैं, हम महात्मा हैं, ऐसा बिना कहे सुख न मिलता हो, जो महात्मा उन्ही स्थानोंपर बिना अपने गुण प्रकाश किये रहता है, वही महात्मा मुक्त कहलाता है, वही महात्मा है, अन्य पुरुष नहीं। जो दूसरेकी प्रशंसा और अपनी निन्दा सुनकर अपने चित्तको दुःख नहीं देता और महात्माओंके खाने योग्य श्रद्धावान ब्राह्मणके यहां भोजन करता है; वही महात्मा कहाता है; दूसरा नहीं। जो सन्यासी अपनी विद्या प्रकाश करके भिक्षा मांगकर खाता है, वह कुत्तेके समान वमन भोजन करता है। जो महात्मा ब्राह्मण अपनी जातिके बीचमें रहकर भी अपनी जातिवालोंको ऐसा समझता है कि हम इन सबसे अलग हैं, और ये हमसे अलग हैं; उसी ब्राह्मणको पण्डितोंने ब्राह्मण कहा है। ऐसा कौन ब्राह्मण है, जो बिना ज्ञानके उपाधिरहित, निराकार, निर्विकार एक ब्रह्मको जान सके? इसी प्रकार क्षत्रियादिक भी ज्ञानको प्राप्त करके आत्माको जान सकते हैं। जो अपने आत्माको उलटो आकारसे प्रकाशित करता है अर्थात् मूर्ख वा पापी होकर अपनेको पण्डित वा धर्म्मात्मा प्रकाशित करता है उस आत्माको चुरानेवालेने क्या पाप नहीं किया अर्थात उसने सब पाप किया। जो कभी नहीं थकता, दान नहीं लेता, सबको मानता है, जिसको कुछ उपद्रव नहीं रहते; जो अच्छा होनेपर भी अच्छे मनुष्योंके समान आचरण नहीं करता, वही ब्रह्मको जाननेवाला पण्डित ब्राह्मण है। जो मनुष्योंके धनको कुछ नहीं समझता; देवतोंकी पूजा और यज्ञको अच्छा समझता है; जो कभी नहीं डरता और कभी नहीं कांपता, वही ब्रह्मको जाननेवाला

ब्राह्मण है। जो सब यज्ञोंको करता है; वह सब वेद जाननेवाला ब्राह्मणभी ब्रह्म जाननेवाले ब्राह्मणके समान नहीं होता; क्योंकि वह ब्रह्मकी प्राप्तिका यत्न करता है; जिस कुछ कर्म्म करनेवाले मनुष्यको पण्डित लोग मानें, वही ब्रह्म जाननेवाला ब्राह्मण है। जो माननेवालोंका आदर नहीं करता और न माननेवालोंसे दुःख नहीं मानता, वही ब्राह्मण पण्डित और ब्रह्मको जानने वाला है। जो विद्वान ऐसा जानता है कि आंखको पलकके समान मानना और न मानना भी जगतका स्वभाव है; वही ब्रह्म जाननेवाला ब्राह्मण कहाता है। जो यह जाने कि अधर्मी, मूर्ख, छली लोग अपने स्वभावहीसे मानने योग्य मनुष्योंको नहीं मानते, वही महात्मा है; क्योंकि अभिमान और योग दोनों एक स्थानपर नहीं रहते; इस लिये विद्वानको उचित है कि मौन और आदरके स्थानको विचारे। हे चत्रिय! धन सुखका स्थान है, और सुखही ब्रह्मज्ञानका शत्रु है, इसीसे मूर्खोंको ब्रह्मज्ञान दुर्लभ है। सत्य बोलना, सबसे सीधे रहना, लज्जा करनी, विद्या और कभी भूल न करनी, यही ब्रह्मज्ञानके द्वार हैं, परन्तु ये सब द्वार बहुत कठिन हैं।

४२ अध्याय समाप्त।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे पण्डित श्रेष्ठ! मौन क्या है? क्यों किया जाता है? क्या विद्वान मौनहीसे मौनको प्राप्त करता है? महात्मा किस प्रकार मौनको प्राप्त करते हैं, सो हमसे आप कहिये।

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, हे राजन् धृतराष्ट्र! जहांसे मनके सहित वाणी लौट आती है, अर्थात् जहां मन और बचन नहीं जा सकता, उसकी प्राप्तिके लिये जो कर्म्म किया जाय, वही मौन कहाता है। हे राजन्! जहांसे वेद, शब्द और यह जगत उत्पन्न हुआ है और जो इस सब जगतमें व्याप्त होरहा है, उसको प्राप्तिके यत्नको मौन कहते हैं, अर्थात् ओंकारके जपहीको मौन कहते हैं।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे पण्डितश्रेष्ठ! जो ब्राह्मण ऋक, यजु, और साम वेदको पढ़कर पाप करते हैं, कहिये उनको पापका फल होता है, वा नहीं।

श्रीसनत्सुजत मुनि बोले, हम तुमसे सत्य कहते हैं कि ऋक, यजु और सामवेद कदापि पापोंसे मनुष्यको नहीं बचा सकते, यह सब पापी और छली मनुष्यको इस प्रकार छोड़कर चले जाते हैं, जैसे पंखवाले पची घोसलेको छोड़कर उड़ जाते हैं।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे पण्डितश्रेष्ठ! यदि तुम्हारा यह कहना सत्य है कि वेद बिना धर्म्मके मनुष्योंको पापसे नहीं बचा सकते, तो क्या सनातन ब्राह्मणोंकी वाणी पागलोंके बचनके समान झूठी हैं।

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, हे महानुभाव! ब्राह्मणोंकी वाणी झूठी नहीं हैं, उसका प्रयोजन यह है कि ईश्वरहीके नाम और रूपसे सब जगत प्रकाशित होता है; इसीसे ईश्वरका नाम विश्वरूप अर्थात जगतरूप है। वेद उसी ईश्वरका उपदेश करते हैं, उसीकी प्राप्तिके लिये तप और यज्ञ रूपी कर्म्म बताते हैं। विद्वान मनुष्य तप और यज्ञसे पवित्र होकर पापका नाश करता है; पाप नाश होनेसे ज्ञान होता है; ज्ञान होनेसे ब्रह्म प्राप्ति होती है; ऐसा न करनेसे अर्थात ज्ञान न होनेसे जब मनुष्यको यज्ञादि कर्म्म करनेपर अर्थ धर्म्म और कामकी इच्छा बनी रहती है, तब इस लोकसे मरकर स्वर्गमें जाता है और वहां अनेक सुख भोग कर फिर इस लोकमें आता है, तपस्वी ब्राह्मणोंके लोक हमने आपसे कहे।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे सनत्सुजात मुने! एकही तप विद्वान और अविद्वानोंके करनेसे दो प्रकारका कैसे होजाता है? सो आप हमसे कहिये।

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, हे क्षत्रिय! जो सब कामनाओंको छोड़ कर दिया जाय वह तपके बल और समृद्धके नामसे प्रसिद्ध होता है, और जो केवल पाखण्डके लिये किया जाता है, वह असमृद्ध और पापमय कहाता है। हे क्षत्रिय! तुमने जो हमसे पूछा उस सबका तपही मूल है; तप करनेसे अनेक वेद जाननेवाले ब्राह्मणोंकी मोक्ष हुई है।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे सनत्सुजात! आपने जो हमसे कहा कि "कामना-रहित तप उत्तम है" सो कामना क्या वस्तु है? सो आप हमसे कहिये जिससे हम इस गुप्त विषयको जानें।

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, क्रोध आदिक बारह, निर्दयता आदिक तेरह और धर्म्मादिक बारह गुण पण्डित ब्राह्मणोंने शास्त्रोंमें लिखे हैं; सो हम तुमसे कहते हैं; क्रोध, काम, लोभ, मोह, असन्तोष, किसीपर कृपा न करनी, डाह, अभिमान, अधिक सुखको इच्छा करनी, किसीकी उन्नतिको न सहना और दूसरेकी निन्दा करनी, ये मनुष्यके बारह दोष हैं, इनको सदा छोड़ना चाहिये। हे पुरुष-श्रेष्ठ! जो मनुष्य इन बारहमेंसे एकको भी सेवा करता है, वह दूसरे दूसरेमें इस प्रकार फँस जाता है, जैसे एक हिरनके मारनेसे व्याध दूसरे हरिणके लोभमें पड़ता है। जो पाप करनेवाले पापी मनुष्य सङ्कटमें पड़ते हैं, वे इन छः पापोंको करते हैं। अपनी प्रशंसा, बहुत यत्न करके दूसरेकी हानि करना, अत्यन्त अभिमान, क्रोध, चञ्चलता और किसीको रक्षा न करना, यही छः दोष हैं। सुखोंको न जानना, अत्यन्त मान, देकर पछताना, न देना, पापकी प्रशंसा करनी, और स्त्रियोंका वैर करना, ये सात और दोष हैं; सात ये और छः पहले कहे तेरह निर्दयतादि दोष हुए। धर्म्म अर्थात् अपनी वाणी और आश्रमके अनुसार कर्म्म करना, जिसमें किसीकी हानि न हो ऐसे सत्य बचन बोलना, इन्द्रियोंको वशमें रखना, तप करना, दूसरेकी उन्नतिको देख कर दुःख न मानना, क्रोध होनेपर भी उसको रोकना, दूसरेकी निन्दा नहीं करनी, यज्ञ, दान, अत्यन्त आपत्ति पड़नेपर भी सत्यको नहीं छोड़ना, और अर्थ सहित वेद पढ़ना, यही ब्राह्मणोंके बारह व्रत हैं। जो इन बारह व्रतोंको धारण करता है, वह समस्त पृथ्वीको अपने वशमें रख सकता है; जो इनमेंसे एक, तीन वा दोको धारण करता है, वह भी सब जगतके सुखोंको भोगता है। इन्द्रियोंको जीतना, त्याग और भ्रम न करना, यही तीन धर्म्मके लक्षण हैं, बुद्धिमान ब्राह्मणोंने इन्हीं तीनोंको धर्म्मका मूल कहा है। इन्द्री जीतनेके ये अठारह लक्षण हैं,—सत्य बोलना, किसीसे डाह न करनी, काम और धनमें चित्तका न जाना, क्रोध, शोक, अलोभ, निन्दा न करनी, चद्रता न करनी, बहुत दुःख न करना, बुरे कामोंमें चित्तको न जाने देना, धन प्राप्तिसे प्रसन्न होना, दूसरेसे प्रसन्न रहना, बहुत बुद्धि होना; यह अठारह गुण जिसमें हों, उसीको पण्डित लोग इन्द्रीजित कहते हैं। इसी प्रकार अभिमानीमें कहे हुए गुणोंसे उलटे अठारह दोष रहते हैं तथा औरभी आगे कहेंगे। छः गुणोंसे युक्त त्याग, बहुत श्रेष्ठ वस्तु है, परन्तु उसका करना बहुत कठिन है। त्याग करनेसे मनुष्य दुःखोंके पार हो जाता है। हे राजेन्द्र! वे छः प्रकारके त्याग ये हैं,—धन पाकर प्रसन्न न होना, यह पहला लक्षण है; यज्ञ करना परन्तु वैराग्यके सहित त्यागका दूसरा लक्षण

है। हे राजेन्द्र! कामको छोड़ना यह त्यागका तीसरा लक्षण हैं, इस तीसरे लक्षणसे जगतमें त्यागीको बहुत निन्दा होने लगती है; यह त्याग जैसे बिना भोगे छूटता है; वैसे भोगनेके पश्चात् नहीं छूटता, क्योंकि कर्म्म उत्पत्तिके पहलेहो उसको छोड़नेसे कुछ दुःख नहीं होता, अन्यथा छोड़नेमें अनेक दुःख होते हैं। दुःख होने पर दुःख न मानना यह त्यागका चौथा लक्षण है, अपनी प्यारी वस्तुको अर्थात् स्त्री पुत्रादिकोंको ईश्वरसे न मांगना यह त्यागका पांचवां लक्षण है, उचित मनुष्यके मांगनेपर दान देना यह त्यागका छठां लक्षण है; इस छहोंको करनेसे मनुष्य कभी भ्रममें नहीं पड़ता। दानके आठ लक्षण और हैं,— सत्य बोलना, सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञात नामक दो प्रकारको समाधि करना, तर्क करना, सबका छोड़नेको इच्छा करना। चोरी न करना, ब्रह्मचारी होकर रहना और कुछ वस्तु इकट्ठी न करनो, इन सबसे उलटे जो सब दोष हैं, वे अभिमानीके शरीरमें बास करते हैं, इस लिये उनको छोड़ना चाहिये। इसी प्रकार त्याग और अभिमान न करना; इनमें ये सब गुण उपजते हैं। प्रमादमें ये आठों दोष रहते हैं; इस लिये उसको छोड़ देना चाहिये। पांचो इन्द्री और छठे मनसे सब दोषोंको छोड़कर बीते हुए और आनेवाले दुःखोंसे छुटकर मोक्षको प्राप्त करे और सुखी हो। हे राजेन्द्र! तुम अपने मनको सत्यमें लगाओ, क्योंकि सत्यहीसे लोक स्थिर है, ऊपर कहे सब गुणोंमें सत्य प्रधान है, और सत्यहीमें अमृत बसता है, ब्रह्माने यह सत्य प्रतिज्ञा की है, कि बिना दोष छोड़े तप और व्रत नहीं हो सकते और व्रतोंमें सत्यही श्रेष्ठ है। इन सब दोषोंसे अलग जो तप है, उसीका नाम केवल समृद्ध तप है। हे राजेन्द्र! तुमने जो पूछा सो हमने संक्षेपसे कहा, यह हमारा वचन परम-पवित्र तथा जन्म, मरण और रोगोंका नाश करनेवाला है।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे पण्डितश्रेष्ठ! सनत्सुजात! कोई कहता है कि ईश्वर इस समस्त जगतमें स्थावर और जङ्गमरूप होकर व्याप्त है; कोई कहता है कि वाह्यशरीर पुरुष, छन्द पुरुष, वेद पुरुष और महापुरुष ये ईश्वरके चार भेद हैं। कोई कहता है,—क्षर, अक्षर, और उत्तम पुरुष इन भेदोंसे ईश्वर तीन प्रकारके हैं। कोई कहता है, कि शब्द-ब्रह्म और परब्रह्मके भेदसे ईश्वर दो प्रकारके हैं। कोई कहता है; ईश्वर एकही हैं, और कोई कहता है, कि ईश्वर और जगत अलग नहीं हैं। इन सबमें कौन सच्चा है सो आप हमसे कहिये।

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, हे राजेन्द्र! तीनों कालमें रहनेवाले एक ईश्वरको न जाननेसे अज्ञानियोंने ये सब अनेक भेद बना लिये हैं। हे राजेन्द्र! ईश्वर एकही है, और उसीको महात्मा लोग मानते हैं। इस प्रकार मूर्ख लोग वेदोंको बिना जाने यज्ञादिक अनेक कर्म्मोंको करने लगते हैं, परन्तु ये सब कर्म्म लोभके मूल हैं। जब सत्य नाश होता है, तब उस मनुष्यका सङ्कल्प भी छोटे सुखोंकी ओर जाने लगता है; तब वेदोंके प्रमाणसे मनुष्य यज्ञादिक करने लगता है। मनुष्य मनसे दूसरे वचनसे दूसरे और कर्म्मसे दूसरे यज्ञोंको करता है। तब सङ्कल्पोंहीमें पड़ा रहता है। सङ्कल्प दृढ़ नहीं है, इस लिये वचन आदिकको अपने वशमें करके व्रत करे। इस व्रतको छोड़ना नहीं चाहिये; क्योंकि सत्यव्रतही पण्डितोंका परम धर्म्म है। ज्ञान प्रत्यक्ष है, क्योंकि उससे शोक और मोह आदिक नाश हो जाते हैं; जैसे पण्डितका कर्म्म उसी समय फल देता है, वैसे ज्ञानभी उसी समय फल देता है। जैसे विद्यार्थीको

विद्याको बहुत दिनमें फल देती है, वैसेही तपभी बहुत दिनमें फल देता है, अर्थात् ज्ञानका फल प्रत्यक्ष और तपका फल अप्रत्यक्ष है। हे क्षत्रिय! इस लिये तुम बहुत बकनेवालेको ब्राह्मण मत समझो। जो कभी सत्यको न छोड़े उसीको ब्राह्मण जानो। हे क्षत्रिय! पहले समयमें मुनिने अथवा अनेक मुनियोंने जो कहा था, उन्हींका नाम अब उपनिषत होगया है; परन्तु वे पापसे मनुष्यकी रक्षा नहीं कर सकते। जो अर्थके समेत सब वेदोंको पढ़ते हैं, हम उनको भी वेदविद्याका जाननेवाला नहीं कह सकते। हे मनुष्यश्रेष्ठ! वेद स्वतन्त्र हैं, इसी लिये उनका नाम छन्द है; छन्दोंके पढ़नेवाले भी यदि ईश्वरको न जानें तो उनको आर्य्य और पण्डित नहीं कहना चाहिये। हे राजन्! वेदोंका जाननेवाला कोई पण्डित नहीं है और जो कोई है भी, तो वह ईश्वरको नहीं जानता; और जो ईश्वरको जानता है, वही वेदका जाननेवाला है। अहङ्कारादिक जड़ वस्तुओंमें कोई ऐसी वस्तु नहीं हैं जो वेदोंको जान सकता है। जो वेदको जानता है, वही ईश्वरको जानता है और जो ईश्वरको जानता है, वही सत्यको जान सकता है। जो वेदोंको जानता है, वह जानने योग्य ईश्वरको जान सकता है, अन्यथा वेद और वेदके जाननेवालेभी ईश्वरको नहीं जानते, तथापि वेद जाननेवाले ब्राह्मण वेदोंके प्रमाणसे ईश्वरको जानते हैं। जैसे वृक्षकी शाखा आदिक होती हैं, ऐसेही वेदभी ईश्वरका शरीर है; जैसे शाखाओंके देखनेसे वृक्षका बोध होता है वैसे वेदके जाननेसे परमेश्वरका बोध होता है। हम उसीको ब्राह्मण कहते हैं, जो वेदोंके अर्थोंको कहे; और सन्देहोंको नाश करे। ईश्वरके ढूढ़नेके लिये पूर्व्व, पश्चिम, उत्तर दक्षिण किसी दिशाकी आवश्यकता नहीं है; ईश्वरको ढूढ़नेके लिये केवल अपने आत्माहीको पूछना चाहिये। वेद पढ़ने और तप करनेसे स्वयं ईश्वर मिल जाता है। मनुष्यको उचित है कि चुप होकर एकान्तमें बैठे और मनसेभी कुछ कर्म्म करनेकी इच्छा न करे; ऐसा करनेसे आत्माहीमें ईश्वर मिलता है। वनमें रहने और मौनी होनेसे कोई मुनि नहीं होता, और जो घरमेंही रहकर उत्तम कर्म्म करता है वह मुनियोंसे श्रेष्ठ है। सब विषयोंको प्रकट करनेके कारण ज्ञानी वैयाकरण कहाता है, आत्म ज्ञानहीसे सब ज्ञान प्रगट होते हैं, इससे आत्म ज्ञानही जगतका व्याकरण है। जो सत्यमें रहकर प्रत्यक्ष भावोंको देखता है; सब विषयोंको जानता है; उसी विद्वानको ब्राह्मण कहना चाहिये। हे क्षत्रिय! हमने जो तुमसे कहा इसी प्रकार जो वेदोंको पढ़कर धर्म्म करे; वही ईश्वरको जान सकता है, और कोई नहीं।

४३ अध्याय समाप्त।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे सनत्सुजात! आप जो हमसे यह सनातन ब्रह्मज्ञानका वर्णन करते हैं, सो ज्ञान अत्यन्त दुर्लभ और सबसे श्रेष्ठ है आप हमसे ऐसा उपाय बतलाइये, जिससे हम उस ब्रह्मज्ञानको प्राप्त कर सकें!

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, हे क्षत्रिय! यह ब्रह्म ऐसी छोटी वस्तु नहीं है, जिसको शीघ्र प्राप्त कर लोगे। जब बुद्धि मनमें लीन होजाती है, तब विद्या प्राप्त होती है, परन्तु यह ब्रह्म-विद्या बिना ब्रह्मचर्य्यके नहीं प्राप्त होती।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे महामुने! आप जिस सदा सिद्ध सनातन ब्रह्मविद्याका वर्णन करते हैं और यह भी कहते हैं कि यह ब्रह्मविद्या अन्य कर्म्मोंके समान सुलभ नहीं है, और यहभी कहते हैं, कि यह ब्रह्मविद्या आत्माहीमें रहती है, तब उस ब्राह्मणोंके

पाने योग्य ज्ञानरूपी अमृतको प्राप्त करनेकी क्या अवश्यकता है। क्योंकि जो वस्तु अपने आत्माहीमें है, उसको प्राप्त करना और न प्राप्त करना क्या ?

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, हम तुमसे उस ब्रह्मविद्याका वर्णन करते हैं; इसको बूढ़े और गुरु लोगही जानते हैं, इसको प्राप्त करके मनुष्य इस लोकमें नहीं आता।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे ब्रह्मन्! जिस ब्रह्मचर्यके करनेसे ब्रह्मविद्या शीघ्र जानी जाती है, आप पहले उस ब्रह्मचर्यहीका हमसे वर्णन कीजिये।

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, जब मनुष्य गुरुके घरमें जाकर निष्कपट होकर उनकी सेवा करता है, उसी समयके कर्मको ब्रह्मचर्य कहते हैं। जो उस व्रतको पूरा पालन करता है, वह इस लोकमें शास्त्रकार होता है और अन्तको मोक्ष प्राप्त करता है। जो ब्रह्मज्ञानको छोड़कर इस लोकमें कामनाओंकी इच्छा करता है, वह अपने शरीरसे आत्माको दूर भगाता है। और जो सतोगुणको प्रधान मानकर आत्मज्ञानको प्राप्त करता है, वही ईश्वरको जान सकता है। हे भारत! माता और पिता सबके शरीरको बनाते हैं; परन्तु जिस जातिको अच्छे गुरु उपदेश करते हैं, वही पवित्र, अजर और अमर है; जो क्रमके अनुसार अपने पुत्रोंको ब्रह्मविद्या पढ़ाते हैं, वेही माता और पिता हैं, वेही उत्पन्न हुए पुत्रके कर्म्मोंको जानते हैं। गुरु सदा शिष्यको पढावे और शिष्य पवित्र तथा सावधान होकर सदा गुरुकी सेवा करे; गुरुसे अभिमान न करे, किसीपर क्रोध न करे, यह ब्रह्मचर्यका पहला लक्षण है। जो पवित्र विद्यार्थी गुरुकी सेवा करके विद्या पढ़ता है, वही विद्वान् होता है। विद्या प्राप्त करनाही ब्रह्मचर्यका प्रथम चरण है। उसके पश्चात मन, बचन, बुद्धि और प्राणोंसे गुरुकी सेवा करना ब्रह्मचर्यका द्वितीय चरण कहाता है। गुरुके समान गुरुको स्त्री और गुरुपुत्रकी सेवा करना ब्रह्मचर्यका यह भी दूसरा चरण है। विद्या पढ़नेके पश्चात जो कुछ आनन्द वा सुख प्राप्त हो, उस सबको यही जाने कि यह सब सुख गुरुकी कृपासे हुआ है, यह ब्रह्मचर्यका तृतीय चरण है; इस तृतीय चरणको प्रसन्न होकर करना चाहिये। गुरुको बिना गुरुदक्षिणा दिये कहीं न जाना और गुरुको दिये हुए धनको अपना दिया हुआ न जानना, यह ब्रह्मचर्यका चतुर्थ चरण है। पहिला चरण गुरुके घरमें रहनेसे मिलता है, दूसरा गुरुकी सेवासे, तीसरा उत्साहसे और चौथा शास्त्रसे प्राप्त होता है। पहले कहे धर्म्मादिक बारह गुण ब्रह्मचर्यके रूप हैं, और भी अच्छे कर्म्म तथा बल उसके अङ्ग हैं। यह ब्रह्मचर्यरूपी वृक्ष गुरुके यहां रहने और वेद पढ़नेसे फलता है। जो ऐसे अच्छे कर्म्म करनेसे धन मिले वह सब गुरुको दे देना पण्डितोंकी वृत्ति है। जो व्यवहार गुरुके सङ्ग करे, सोई गुरुके पुत्रके सङ्गभी करना चाहिये। इस प्रकार ब्रह्मचर्य धारण करके जो गुरुके घरमें रहता है, उसको प्रतिष्ठा और अनेक पुत्र प्राप्त होते हैं; वह जिधर जाता है उधरही सुख पाता है और सब मनुष्य उसके व्रतकी प्रशंसा करते हैं। इस ब्रह्मचर्यके प्रतापसे मनुष्य देवता होता है, और बुद्धिमान मुनि ब्रह्मलोकमें जाता है। इसी ब्रह्मचर्यके प्रतापसे अप्सरा और गन्धर्व्वोंने सुन्दररूप पाया है, इसीके प्रतापसे सूर्य्य उदय होते हैं। जैसे पारस लोहेको सुवर्ण बना देता है, ऐसेही इस ब्रह्मचर्यके प्रतापसे अनेक महात्मा परम पदको प्राप्त होगये। हे राजन्! जो इस ब्रह्मचर्यको करता है और शरीरसे तप करता है, सो पवित्र होता है, और अकालमृत्युको जीतता है। हे

क्षत्रिय! जो ब्रह्मज्ञानको प्राप्त करते हैं; वे अत्यन्त उत्तम कर्म्म करनेसे मिलने योग्य लोकोंको जीत लेते हैं। इस ज्ञानसे ब्रह्मकी प्राप्ति होती है, मोक्षके लिये और दूसरा कोई मार्ग नहीं है।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे पण्डितश्रेष्ठ! इस जगतमें सफेद, लाल और काले रङ्ग दिखाई देते हैं; सो आप कहिये कि ब्रह्म लाल है, काला है वा सफेद है?

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, हे क्षत्रिय! ब्रह्म लाल, सफेद, काला और सूर्य्यके समान वर्णवाला है, अर्थात सब वर्ण उसीके हैं। वह पृथ्वी आकाश, समुद्र, जल, तारे, बिजली, मेघ, वायु, देवता, चन्द्रमा, सूर्य्य, ऋक्, यजु, साम और अथर्व्व वेदमें नहीं रहता। हे राजन्! वह परमेश्वर और बड़ी बड़ी यज्ञोंमेंभी निवास नहीं करता; वह अपार अन्धकारसे दूर है; कालभी उसीमें मिल जाता है अर्थात वह कालके आधीन नहीं बरन कालही उसके आधीन है। वह परम-छोटा रूपवाला और पर्व्वतोंसेभी बड़ा है। वही प्रतिष्ठा, अमृत, लोक, ब्रह्म यशरूप है, वही सब प्राणियोंको उत्पन्न करता है और वही नाश करता है, पण्डित उसे रोगरहित, प्रकाशमान और अविकारी कहते हैं: उसीमें यह सब जगत स्थित है; उसीके जाननेसे मोक्ष प्राप्त होती है।

४४ अध्याय समाप्त।

श्रीसनत्सुजातमुनि बोले, शोक, क्रोध, लोभ, काम, मान, मोह, डाह, बहुत सोना, करनेकी इच्छा, प्रेम, किसीकी उन्नतिको न सहना और नीच कर्म्म करना, ये बारह महा दोष कहाते हैं, इनके करनेसे मनुष्यका नाश होजाता है; इन एक एकके करनेसेभी मनुष्य मूर्ख होकर अनेक पाप करने लगता है। लोभी, तेज स्वभाववाला, कठोर, अधिक बोलनेवाला, क्रोधी, तर्क वितर्क करनेवाला और निर्लज्ज, ये छः मनुष्य उत्तम धनको प्राप्त करके भी उसका भोग नहीं कर सकते। भोग चाहनेवाला, चञ्चलबुद्धि, महा अभिमानी, देकर पछतानेवाला, कृपण, दुर्व्वल, अपनी प्रशंसा करनेवाला और स्त्रियोंका शत्रु; ये सात मनुष्य पापी और निर्लज्ज कहाते हैं। धर्म्म, सत्य, तप, इन्द्रियोंको जीतना, किसीका बुरा न चाहना, लज्जा, त्याग, डाह न करना, दान, अच्छी बात सुनना, और क्षमा येही बारह ब्राह्मणके लिये महा व्रत हैं। जो इन बारह धर्म्मोंको करता है, वह इस समस्त पृथ्वीको अपने वशमें रख सकता है; जिसको इन बारहोंमेंसे एक वा दो वस्तु भी प्राप्त हुई हों, वह भी जगतके सुख भोगता है। इन्द्रिय जीतना, त्याग और भ्रम न करना, इन तीनोंमें सत्य बसता है; वेद पढ़े ब्राह्मणश्रेष्ठ इनही कर्म्मोंको करते हैं। चाहे अच्छा हो चाहे बुरा हो ब्राह्मणको दूसरेका दोष वर्णन करना अच्छा नहीं है, जो किसी दूसरेका दोष वर्णन करता है; वह मनुष्य अवश्य नरकमें जाता है। मदमें ये आठ दोष हैं, सो पहले कह चुके हैं; अब जो दोष नहीं कहे उनका वर्णन करते हैं,—बैर, विरोध, डाह, झूठ, काम, क्रोध, दूसरेके वशमें रहना, दूसरेका दोष कहना, राजाके यहां दूसरेकी निन्दा करनी, प्रयोजन नाश इत्यादि यह अठारह दोष हैं; इससे बुद्धिमान पुरुष कदापि उसमें उन्मत्त न होवे, क्योंकि मतवाला होना बहुतही निन्दनीय है! मित्रतामें छः गुण जानना चाहिये। मित्रोंके प्यारे कार्य्योंसे सुहृद लोगोंमें प्रसन्नता होती है, और अप्रिय घटना अथवा मित्रोंके दुःखसे वह दुःखी होते हैं, तीसरे वे अपनी अत्यन्त हितकारी वस्तुकोभी याचकोंको दान करते हैं, और मांगनेके अयोग्य चीजोंको भी मित्रोंके निमित्त निःसन्देह देते हैं। जिनके

हृदयके भाव अत्यन्त शुद्ध हैं, वह प्रार्थना करने और मांगनेपर अत्यन्त प्रिय ऐश्वर्य्य और प्रेमपात्र पुत्र कलत्रोंको भी दान कर सकते हैं। चौथे सुहृद पुरुष किसीको अपना सर्व्वस्व दान करके भी, मैंने इसका उपकार किया है वह विचारके उसके घरमें निवास नहीं करते। पांचवें वे मित्र आदिके ऊपर भार न देकर अपने उपार्जित धनकाही भोग करते हैं। छठवें मित्रके हितके निमित्त वे अपनी हानि सहनेमें भी विमुख नहीं होते। जो धनशाली गृहस्थ उक्त रीतिके अनुसार गुण-वान, दानशील और सतोगुणी होते हैं, वे शब्द आदि पांच विषयोंसे पांचों इन्द्रियोंको रोक लेते हैं। अपने अपने विषयोंसे इन्द्रियोंको रोकते हैं, इस तपस्याके बढ़नेसे, ज्ञान योगके बिनाही केवल उर्द्ध्वगति होती है, परन्तु ज्ञानकी भांति इसी लोकमें कृतकार्य्य नहीं हो सकते। जो लोग तीव्र रूपके वैराग्यके न होनेपर धैर्य्यसे भ्रष्ट होते हैं, उन लोगोंका "ब्रह्मलोकमें सब दिव्य सुखोंको भोगेंगा" इस प्रकारके सङ्कल्पहीसे वह तपस्या सहित होती है। जिससे सब यज्ञोंकी बढ़ती होती है, उसी सत्य सङ्कल्पके अनुरोधहीसे किसीको ; मनसे, किसीको बचनसे, और किसीको कर्म्मसे यज्ञ सिद्ध होता है, अर्थात कोई ध्यान आदि यज्ञोंको करते हैं, कोई स्वाध्याय और जप आदि यज्ञ करते हैं, और कोई कोई ज्योतिष्टो-मादि यज्ञोंका अनुष्ठान करते हैं। राजा जिस प्रकारसे नौकरोंपर प्रभुता करता है, उसी भांतिसे सङ्कल्प-रहित चिदात्मा सगुण ब्रह्मको जाननेवाला सत्य सङ्कल्प करनेवाला पुरुषका स्वामी होता है। तुम और भी थोड़ा सा हमारे मतको सुनो। सङ्कल्प रहित ईश्वर निर्गुण ब्रह्मके जाननेवाले ब्राह्मणके सङ्कल्पमें विशिष्ट रूपसे अधिष्ठान (निवास) करता है। अर्थात सगुण उपासकोंसे निर्गुण-उपासक ब्राह्मणोंमें सत्य सङ्कल्प आदि अधिक उत्पन्न होते हैं। ब्रह्मप्राप्तिका निदान स्वरूप इस योगशास्त्रको शिष्यवर्गको अवश्य पढ़ाना उचित है। पण्डित लोग कहते हैं, इसके अति-रिक्त, और सब शास्त्र केवल बचनके विकार मात्र हैं। इस योग-शास्त्रमें सम्पूर्ण जगतके प्रपञ्च कहे गये हैं, अर्थात सब योगीके आधीन हैं ; जो इसको जानते हैं, वे अमृत अर्थात मुक्त होते हैं। हे राजन्! कर्म्मको पूर्ण रीतिसे अनुष्ठान करने पर भी उससे सत्यकी जय अर्थात ब्रह्म-प्राप्ति नहीं हो सकेगी। हे क्षत्रिय! अज्ञानी मनुष्य होम करे, चाहे यज्ञ करे, उससे कभी मुक्ति न पावेगा, और न अन्त समयहीमें उसको मोक्ष हो सकता है। राग आदि बाह्य इन्द्रियोंके विषय रहित होकर अकेलाही उपासना करे, और मनमें भी किसी विषयके ध्यान न करे, तथा प्रशंसा और निन्दामें भी प्रीति और क्रोध न करे। हे क्षत्रिय! योगी पुरुष नौका पर चढ़े हुएकी भांति आरोपित, और सिद्धित अपवादके क्रमसे पहिले कहे हुए सब बातोंको जानकर दृष्टि भेदसे सब स्थानमें निवास करते हुए इसी लोकमें ब्रह्मका दर्शन करते हैं और उसीमें लीन होजाते हैं। हे विद्वन्! कर्म्मसे जो ब्रह्म-विद्या श्रेष्ठ है, उसे मैंने तुम्हारे समीप वर्णन किया।

४५ अध्याय समाप्त।

सनत्सुजात मुनि बोले, संसारकी उत्पत्ति, स्थिति और संहारका बीजस्वरूप, सब चेष्टा-ओंको करानेवाला, आनन्दरूप, तृप्तिरूप, उपाधिरहित, विज्ञानमय, सूर्य्यआदि रूपसे प्रकाशमान, महद्यश नाम ब्रह्म है। उसीकी इन्द्रियां उपासना करती हैं, और उसी मूल कारणसे सूर्य्य विराजमान है। योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन

करते हैं, अर्थात चित्तकी वृत्तिके निरोधरूपी योगसेही सर्व्व ऐश्वर्य्ययुक्त अखण्ड एकरस परमेश्वरका दर्शन मिलता है। ब्रह्म अव्याकृत नित्य वस्तु होकर भी शुक्र अर्थात आनन्द रूप चैतन्य प्रतिबिम्बको पाकर जगतके जन्म आदि कार्य्यों को करनेमें समर्थ होते हैं, और उसीसे वृद्धिको पाते हैं। भयङ्कर वस्तुओंको भी भय देनेवाले, वह स्वयं ज्योति स्वरूप हैं। सूर्य्यआदि तेजसे पदार्थोंमें रहकर सबको प्रकाशित करते हैं, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं।

पृथ्वी आदि पांच तत्व जलकी भांति एक रस ब्रह्ममें स्थित हैं। चैतन्य रूपसे प्रकाशमान जीव और ईश्वर पञ्चतत्वसे उत्पन्न हुआ पञ्चभौतिक शरीरके हृदयाकाशमें विराजमान हैं। सुषुप्ति कालमें जीव और प्रलयकालमें ईश्वरभी तन्द्रायुक्त हो जाते हैं, परन्तु परमात्मा तन्द्रारहित हैं। वह मायाके आवरणसे रहित सूर्य्यकाभी सूर्य्य अर्थात अपरिछिन्न, निर्म्मल, निर्व्विकार स्वरूप है; नित्य, प्रकाशमान और सबके ठहरनेका स्थान, उस परमात्माने इस जीव, ईश्वर, पृथ्वी और स्वर्गको धारण किया है। योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं। परमात्माने जीव, ईश्वर, स्वर्ग आदि समस्त लोक तथा सारे ब्रह्माण्डको धारण कर रक्खा है। उसीसे सब दिशा और नदी प्रवाहित हो रही हैं, और उसीसे यह महा समुद्र बना है; योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं। स्वयं अनिश्चित अर्थात विनाशशील होनेपर भी जिसके कर्म्मका कभी विनाश नहीं होता है, उसी शरीर रूपी रथमें इन्द्रिय रूपी घोड़ोंके सहित पूर्व्व कर्म्मोंके चक्रमें निवास करता हुआ, बुद्धिमान जीव हृदयाकाशमें उस दिव्य और अजर, अमर परमात्माके समीप जाता है, अर्थात इन्द्रियोंके वशीभूत होनेसे जीव उन्हींके द्वारा परमात्माको पाता है, नहीं तो शरीरके नष्ट हो जानेपर उसके किये कर्म्मोंका नाश न होनेसे दूसरे शरीरको ग्रहण करना पड़ता है; योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं। इस (परमात्मा) के रूपकी समता नहीं रहती, अर्थात वह अनुपम स्वरूप है, कोई पुरुषभी उसे नेत्रोंसे नहीं देख सकता। जो लोग मनीषी (मनके निग्रहसे) सूक्ष्म मन और हृदयमें उसको जानते हैं, वे अमृत अर्थात मुक्त होजाते हैं; योगी लोग उसी भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं; शुक्र नामक स्थानमें बहती हुई अविद्या नामकी नदी महाभय उत्पन्न करनेवाली है; वह चित्त, स्मरण, भ्रमण, दर्शन; वचन, शब्द, विषय, प्राण, अपान, संस्कार और सुकृत आदि बारह मार्गोंसे नित्यही बहती रहती है; मनुष्य लोग उसी अविद्या नदीके जल पान अर्थात उसीसे उत्पन्न हुए पुत्र और पशु आदिकोंसे तृप्त होते हैं, अर्थात उक्त पुत्र, पशु रूपी आदि मधुर फलोंकी इच्छासे इसमें बारम्बार घूमा करते हैं। जीव लोग जिस निवासके स्थानोंपर बार बार भ्रमण करते हैं, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमेश्वरका दर्शन करते हैं। इधर उधर घूमनेवाला जीवरूप भ्रमर पूरी तरहसे चिन्ता करता हुआ, अर्द्धमास अर्थात चन्द्रमा जिसमें भोग करते हैं, उसी प्रकार कर्म्मफलरूपी मधुपान करता है; अर्थात पारलौकिक फलोंको भोग करके फिर इस लोकके फलोंको भोगनेकी इच्छासे परलोकमें चन्द्रमाकी भांति आधे फलको भोगकर फिर आधे कर्म्म फलोंके सहित पुनर्व्वार इस लोकमें जन्म लेता है। जीवही अन्तर्य्यामी रूपसे सब प्राणियोंमें विराजमान है, और उसीने यज्ञोंकी कल्पना की है, अर्थात परमात्मासे जीवात्माही वैदिक मार्गका प्रव-

र्त्तक है ; जिसने यज्ञोंकी कल्पना की है, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं। पक्षहीन चिदात्मारूप, पक्षियोंकी भांति एक स्थानसे दूसरे स्थानमेंबास करनेवाला, संसार अबिद्यारूपी बिनश्वर वृक्ष और स्त्री पुत्र-रूपी पत्तोंसे युक्त होकर उन्हींके आश्रयमें पक्ष-युक्त होकर तथा वासनाके अनुरूप नाना दिशा-ओंमें अर्थात अनेक योनियोंमें घूमता रहता है। जो प्राण आदि उपाधिके सम्बन्धसे जीवत्वको प्राप्त होते हैं, योगी लोक उसी सनातन भग-वान परमेश्वरका दर्शन करते हैं। प्राण आदि उपाधि रूप दर्पणोंको, चित्त प्रति-बिम्ब भूत जीवको चिदाकाशसे पृथक कर देता है, उक्त प्राण आदि ब्रह्मसेही उत्पन्न हुए हैं। ब्रह्ममें उन सबके लीन होनेसे जब बिचार पूर्व्वक ब्रह्मसे वे पृथक किये जाते हैं, तब जीवईश्वर भेदके हेतु उपाधिसे जो असद्भाव हैं, वह दूर होकर एक मात्र ब्रह्मही शेष रह जाता है ; योगी लोग उसी सनातन भगवान परमेश्वरका दर्शन करते हैं। उसीसे वायु आदि पञ्चभूत उत्पन्न हुए हैं, और उसीमें लीन हो जायंगे। उसीसे अग्नि, प्राण, और सोम अर्थात भोक्ता भोग्य और इन्द्रिय आदि शरीर उत्पन्न होकर उसीमें ठहरे हुए हैं। यह दृश्यमान सब भूत-प्रपञ्च उसीसे उत्पन्न हुआ है ; मैं उसके स्वरूपको वर्णन करनेमें समर्थ नहीं हूं ; योगी लोग उसी भगवान परमेश्वर परमात्माका दर्शन करते हैं। प्राण-वायुमें अपान वायु, मनमें अपान वायु, बुद्धिमें मन, और परमात्मामें बुद्धिकाभी शेष हो जाता है, जिसमें बुद्धि लीन होजाती है, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमा-त्माका दर्शन करते हैं। जिस प्रकारसे हंस किसी किसी समयमें एक चरणको नहीं प्रदर्शित करता, उसी भांतिसे जाग्रत सुषुप्ति और स्वप्न और अनुपस्थित चारों पादसे युक्त हंसी (परमात्मा) अगाध संसार सागरपर तीन चरणसे घूमते हैं, और शेष एक चैतन्य भूतोंके अधार चरणको प्रकाशित नहीं करते। संसारमें तैजस और प्राज्ञ नाम उप-रके लोकोंमें, तीसरा चरण आने जानेमें व्याप्त है, उस शेषके अनुपस्थित सब भूतोंके आधार चौथे चरणको जो देखते हैं, उनका फिर मृत्यु वा जन्म नहीं होता, अर्थात ज्ञान होनेसे, अज्ञानसे उत्पन्न हुए जन्म, मरणका नाश होजाता है, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं।

अङ्गुष्ठमात्र पूर्ण अन्तरात्मा प्राण, मन, बुद्धि, और दश इन्द्रियात्मक लिङ्ग शरीरके संयोगसे नितग्रही इस लोक, परलोक, जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति अवस्थाओंको प्राप्त होते हैं। उस सर्व्वनियन्ता, स्तुति करने योग्य उपाधिसे युक्त, सर्व्वकार्योंके करनेमें समर्थ, मूल कारण परमात्माको प्रत्येक स्थानोंमें चैतन्य रूपसे प्रकाशित रहनेपर भी मूढ़ पुरुष उसको देख नहीं सकते। मनुष्योंकी मण्डलीमें कोई शम, दम आदि साधनाओंसे युक्त हैं ; परन्तु ब्रह्मतो सबके पक्षमें समान अर्थात निर्व्विकार देखे जाते हैं। मुक्त और बंधे हुए सबके लिये ब्रह्म एकही भांति हैं, परन्तु जो मुक्त हो गये हैं, वह ब्रह्मकी परा-काष्ठाको पहुंचे हैं ; अर्थात एक अवस्थामें जो दुःख रहता है, उस अवस्थाके पलट जाने-पर वह दिखा नहीं जाता। यह अवश्यही स्वीकार करना पड़ेगा; कि दुःखको उपाधिही धर्म्म है, इससे जैसे लाल रङ्गके फूलको स्फटिकके पास ले जाते हैं, तो उस पुष्पकी छायासे स्फटिक भी लाल रङ्गसे युक्त दीख पड़ता है, उसी प्रकार अज्ञान तथा उपाधिकी विशेषतासे दुःखका अनुमान होता है ; परन्तु सब प्रकारसे बासनाका त्याग होनेसे जिसकी मुक्ति हुई है, उसको फिर दुःखका सम्बन्ध

नहीं रहता, इस निमित्त वह अत्यन्तही आनन्दका पात्र है। जो सब प्राणियोंमें इसी प्रकारसे एक रस और समान है, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं। विद्वान पुरुष विद्यासे दोनों लोकोंको प्रकाशित करते घूमते हैं, उस समय उनका बिना किया हुआ अग्निहोत्रभी पूरा होजाता है, अर्थात ज्ञानसे सब कर्म्मके फल अलग होजाते हैं। इससे ब्रह्म-विषयक वचन जिसमें तुम्हारी नीचताको न सिद्ध करे, अर्थात तुम ज्ञानी होकर "मैं बड़ा हूं„ इसी वचनके कहनेके योग्य बने रहो, "मैं दास हूं" यह वचन जिसमें सब दिन न कहना पड़े। ब्रह्मका नामही "बुद्धि ज्ञान" है, जो लोग धीर अर्थात ध्यानसे युक्त हैं, वेही इसको प्राते हैं। जिसका नाम प्रज्ञान है; योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं।

वह वचन और मनसे जानने योग्य, जगतकी उत्पत्ति आदिका मूल-कारण, निर्व्वि-कार योगसे जाननेके योग्य परमात्मा इसी प्रकारका है। वह भोक्ता जीवको अपनेहीमें लीन करता है। जो पुरुष उस परम पूज्य पूर्ण परमात्माको जानते हैं, इसी लोकमें उनको मोक्ष मिलती है। जिसके जाननेसे पुरुषार्थको हानि नहीं होती, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं। जो सहस्रों पक्षके विस्तार पूर्व्वक दूर जाता है, वह मनके समान वेगवान होने पर भी शरीरमें स्थित परमात्माके निकट है, अर्थात योगियोंके हृदयाकाशमें बहुत दूरकी वस्तु भी निकटही देख पड़ती हैं। जिसमें दूरकी वस्तुभी समीपही रहती है; योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं। इसका स्वरूप नेत्र आदि इन्द्रियोंसे नहीं दीख पड़ता, शुद्धचित्तवाले पुरुषही चित्तशुद्धिसे इसका दर्शन कर सकते हैं। जब मनुष्य जगतकी मित्रता और मनके रोकनेमें समर्थ होता है और पुत्र आदिके नाश होने पर शोक नहीं करता, तबही उसकी चित्त शुद्धि हुई समझना चाहिये; जो लोग इस प्रकारसे चित्तकी शुद्धिको जान कर संन्यास अवलम्बन करते हैं, वेही अमृत अर्थात मुक्त होते हैं; योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं। सर्प जिस प्रकारसे बिलमें घुसकर अपने शरीरको छिपाता है, वैसेही कुलाचारी मनुष्य लोग गुरु परम्पराके उपदेशसे मद्य, मांस परस्त्री-गमन आदि पापोंसे भागते तथा छिपते फिरते हैं। उन सत्पुरुषोंके प्रति नीच बुद्धिसे युक्त विमूढ़ पुरुष उन्हें भ्रष्ट करनेकी चेष्टा करते हैं अर्थात वे वञ्चक लोग मद्य, मांस आदिके सेवनका उपदेश देकर उन सत्पुरुषोंको निन्दित करते हैं, इससे अच्छी प्रकारसे परीक्षा किये हुए मनुष्यके सङ्ग सहवास करना चाहिये; जिसको पानेके निमित्त साधुओंके सङ्ग रहनेका विधान किया गया है, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमा-त्माका दर्शन करते हैं।

जीवन्मुक्त पुरुषोंको इस प्रकार अनुभव होता रहता है कि देह आदि इन्द्रियां सब असत् हैं, इससे वे मुझे कभीभी असत-कृत अर्थात सुख, दुःख, बुढ़ापा, मृत्यु आदि धर्म्मसे युक्त नहीं कर सकतीं; जब हमारा जन्म, मरण, प्रवाहरूप मृत्युही नहीं है, तब देह वियोग भी नहीं है, और न जन्मही होता है। इससे जो सत्य और सब स्थानमें समान भावसे स्थित है, जिसे किसी स्थानमें भी कोई बाधा नहीं है, जो हर समय सब स्थानोंमें एक रूपसे निवास करता है, जिसके आधीन सब जगत है, जो अकेलाही कार्य्य कारण दोनोंकी उत्पत्ति और प्रलयका स्थान

है; योगी लोग उसी सनातन भगवान परमेश्वरका दर्शन करते हैं।

वह ब्रह्मस्वरूप पुरुष उत्तम कर्म्मोंसे सुखी और अधम कर्म्मोंसे दुःखीभी नहीं होते, अभिमानी पुरुषोंमेंही कर्म्मका फल दीख पड़ता है; ब्रह्मज्ञानी पुरुषको कर्म्मके फलोंमें नहीं बंधना पड़ता। क्योंकि ब्रह्मज्ञानी पुरुषके कैवल्य-अवस्थामें जिस प्रकारसे पाप पुण्यका अभाव होजाता है, वैसेही ब्रह्मज्ञ पुरुषमें भी मानना चाहिये। इसी प्रकारके योगसे युक्त होकर सब भांतिसे उसी ब्रह्मको प्राप्तिकी इच्छा करनी उचित है; योगी लोग उसी सनातन भगवान परमेश्वरका दर्शन करते हैं। निन्दायुक्त बचन भी उस ब्रह्मज्ञानीके हृदयका नहीं तपा सकती और "मैंने अध्ययन नहीं किया" "मैंने अग्निहोत्र नहीं किया है" ऐसी चिन्तासे भी उनके मनमें दुःख नहीं होता। ब्रह्म-विद्या उसको वही बुद्धि देती है, जिसका ध्यान-धारणा आदि कर्म्मोंके करनेवालेही पाते हैं। ब्रह्मविद्याके प्रभावसे शोक मोह और सर्व्वज्ञता मिलनेपर जिसकी प्राप्ति होती है; योगी लोग उसी सनातन भगवान परमेश्वरका दर्शन करते हैं।

इसी प्रकारसे जो गुरुके उपदेशके अनन्तर ध्यानयोगसे आत्माका सब भूतोंमें देखते हैं; अलग अलग विषयोंमें फंसे हुए दूसरे मनुष्योंको देखकर उन्हें शोक नहीं करना पड़ता। सब ओर बड़े और गहरे जलके स्थानमें थोड़े जलसेही प्यासे मनुष्यकी जिस प्रकारसे प्यास बुझ जाती है, उसी प्रकारसे सब वेदोंमेंसे आत्मज्ञानके उपयोगी सारभाग मात्रहीको, गुरुके उपदेशोंके द्वारा ग्रहण करनेसे, ध्यानसे युक्त आत्मजिज्ञासु पुरुषको इष्टसिद्धि मिलती है; हृदयमें बिराजमान अङ्गुष्ठमात्र महात्मा पुरुष नेत्र आदिसे नहीं देखा जा सकता है। वह जन्म मरणसे रहित होनेपर भी रात दिन सब स्थानोंमें विराजमान है। आत्मजिज्ञासु पुरुष उसीको आत्मा जानकर कृतकृत्य और सब कर्म्मोंसे छूट जाता है; इससे उपाधिसे उत्पन्न हुए अज्ञानको त्यागकर निर्म्मल, शुद्ध पवित्र होजाता है। मैंही माता, और पिता, पुत्र और भूत भविष्य तथा वर्त्तमानमें जो सब प्राणी दीख रहे हैं, सबको आत्मा हूं। हे भारत! मैं वृद्ध पितामह हूं, पिता और पुत्र तुम मेरेही आत्मा निवास करते हो; पर तुम मेरे नहीं और मैं तुम्हारा नहीं हूं। आत्माही हमारे निवासका स्थान और आत्माही मेरे जन्म आदिका कारण है। मैं इस कार्य्यरूपी जगतमें कपड़ेमें सूतकी भांति विद्यमान हूं; अजर हूं अर्थात मेरा विनाश नहीं है। मैं जन्म आदिसे रहित होनेपर भी रात दिन सब स्थानोंमें आलससे रहित होकर घूमता रहता हूं। मुझको अच्छी प्रकारसे जानके अर्थात सब प्राणियोंका अन्तरात्मा, सबका ईश्वर और सबका कर्त्ता समझकर परिणामदर्शी आत्म-जिज्ञासु पुरुष प्रसन्न होते हैं। सूक्ष्मसेभी सूक्ष्म परमात्मा सब प्राणियोंमें अन्तर्यामी रूपसे स्थित है। ब्रह्मज्ञानी पुरुष स्थावर, जङ्गम और सब भूतोंमें उस परमपिताको सब शरीर तथा हृदय-पुण्डरीकमें स्थित जानते हैं।

४६ अध्याय और सनत्सुजात-पर्व्व समाप्त।

अथ सञ्जययान-सन्धि-पर्व्व।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! विदुर और सनत्सुजातके सहित इसी प्रकारसे बात चीत करते हुए, राजा धृतराष्ट्रकी वह रात्रि व्यतीत हुई। रातके बीतनेपर सबेरे उठके सब राजा लोग सञ्जयको देखनेकी इच्छासे हर्षित होकर सभामें गये। पाण्डवोंके धर्म्म और अर्थसे भरी हुई बचनोंके

सुननेके निमित्त उत्सुक होकर धृतराष्ट्र आदि सम्पूर्ण राजा सभाकी ओर चले। अत्यन्त उत्तम, सोनेसे खचित, चन्दन आदि सुगन्धित जलोंसे छिड़की हुई, बड़ी भारी, विशाल और रमणीय-सभा रत्न, सुवर्ण, हाथी-दांत और लकड़ीके आसनोंसे पूरित, चन्द्रमाके समान निर्म्मल, प्रकाशमान, रुचिको आकर्षित करनेवाली अत्यन्त-विशाल राजसभामें सब राजा लोगोंने गमन किया। हे भरतर्षभ! वहांपर भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, शल्य, कृतवर्म्मा, जयद्रथ, अश्वत्थामा, विकर्ण, सोमदत्त, वाह्लिक, महा-बुद्धिमान विदुर, महारथ-युयुत्सु, और अन्य सब शूरवीर महाराज धृतराष्ट्रको सबके आगे सिंहासन पर बैठाकर उनके पीछे बैठ गये; और दुःशासन, चित्रसेन, सुबल-पुत्र-शकुनि, दुर्मुख, दुःसह, कर्ण, उलूक, और विविंशति ये सब दुर्य्योधनको आगे करके इन्द्रके पारिषदों तथा देवतोंको भांति उस सभामें जाकर बैठ गये। हे महाराज! परिघके समान भुजावाले उन सब शूरवीरोंके इकट्ठे होनेसे वह मनको हरनेवाली राजसभा सिंहोंसे भरी हुई पर्वतकी विशाल-कन्दराके समान शोभायमान होने लगी। ये सब सूर्य्यके समान तेजस्वी राजा लोग उस सभामें जाकर यथा योग्य आसनों पर बैठ गये।

हे भारत! उन सब राजाओंके आसनों पर बैठनेके अनन्तर द्वारपालने "सूत-पुत्र सञ्जय आये हैं" कहके निवेदन किया। अनन्तर सञ्जय शीघ्रही रथसे उतरकर, महाबली राजाओंसे भरी हुई उस राजसभाके बीचमें गये।

सञ्जय बोले, हे कौरव लोगो! तुम सुनो, मैं पाण्डवोंके समीप गया था; और वहांसे अभी आया हूं। पाण्डवोंने यथायोग्य वृद्धोंको प्रणाम, समान-अवस्थावालोंको कुशल-क्षेम, प्रीति प्रेम और आदरके सहित पूजा कही हैं। हे राजा लोगो! पहिले मैं महाराज धृतराष्ट्रकी आज्ञासे पाण्डवोंके समीप जाकर उनसे जो कुछ बचन कहा था, उसे आप लोग सुनें।

४७ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! मैं तुमसे राजाओंके बीचमें यह पूछता हूं, कि दुष्टोंके जीवनको नाश करनेवाले अत्यन्त-बल और विक्रमसे भरे हुए वीर-प्रधान महात्मा-अर्ज्जुनने क्या कहा है?

सञ्जय बोले, भावी-युद्धकी इच्छा करनेवाले महात्मा धनञ्जय अर्ज्जुनने कृष्णके सामने युधिष्ठिरकी आज्ञा तथा अनुमतिसे जो कुछ कहा है, उसे दुर्य्योधन सुनें। भुज-बल और पराक्रमसे युक्त, भयरहित वीरोंके अग्रगामी अर्ज्जुनने श्रीकृष्णके निकट मुझसे यह बचन कहा है, कि "हे सूत! तुम सब कौरवोंके बीचमें, और हमारे सङ्ग जो सदाही युद्ध करनेकी इच्छा करता है, उस मूढ़बुद्धि, कालसे घिरे हुए दुष्टात्मा कठोरबचन कहनेवाले सूत-पुत्र कर्णके सामने, और पाण्डव लोगोंसे युद्ध करनेके निमित्त जो सब राजा बुलाये गये हैं, उनके सम्मुखही धृतराष्ट्रपुत्रोंसे हमारे इस बचनको कहना, जिसमें वे मित्रोंके सहित मेरे कहे हुए सब बचनोंको सुन सकें, वही करना।" हे महाराज! जिस प्रकारसे देवता लोग वज्रधारी इन्द्रके बचनोंके सुननेको इच्छा करते हैं, मुझे मालूम होता है, कि पाण्डव और सृञ्जयोंनेभी उसी भांतिसे अर्ज्जुनके बचनोंको श्रवण किया। गाण्डीवधारी अर्ज्जुन भावी-युद्धके निमित्त उत्सुक होकर क्रोध पूरित लाल नेत्र करके यह बचन बोले, "दुर्य्योधन यदि अजमीढ़वंशमें उत्पन्न हुए राजा युधिष्ठिरके राज्यको नहीं लौटावेंगे; तो निश्चयही धृतराष्ट्र पुत्रोंका बिना भोग

किया हुआ, पूर्व्व जन्मका कोई पापकर्म्म उदय हुआ है। शस्त्रधारी भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव, बासुदेव, सात्यकी, धृष्टद्युम्न और शिखण्डी जिसके बीर तथा जो दूसरी प्रकारसेभी योद्धा हैं, पृथ्वी और स्वर्गको जलानेमें समर्थ हैं, उस इन्द्रके समान युधिष्ठिरके सङ्ग जिनकी युद्ध करनेकी इच्छा है, उनका पाप-कर्म्मके अतिरिक्त और क्या दोष कहा जा सकता है? दुर्य्योधन यदि इन्हीं सब कर्म्मोंके सहित युद्धकी इच्छा करते हैं, तो पाण्डवोंका सब प्रयोजनही सिद्ध हुआ हैं। युधिष्ठिरके अर्थसिद्धिके निमित्त तुम अब सन्धिका-प्रस्ताव मत करो, यदि इच्छा हो, तो युद्धही करो। धर्म्मात्मा-युधिष्ठिर जो इतने दिनतक बनबासी होकर निरन्तर दुःखकी शय्यापर सोते थे, इस समय दुर्य्योधन मरकर अत्यन्त-दुःखदायिनी, अनर्थकारी अन्तिम शय्याको पावेगा, अन्याय-व्यवहारोंसे दुष्टात्मा धृतराष्ट्रपुत्रने जो सबके ऊपर प्रभुता की थी, उसकी मृत्यु इस समय समीप है। तुम लज्जा, ज्ञान, तपस्या दम, बीरता, धर्म्मकी रक्षा और बलसे भरे हुए युधिष्ठिरसे उन सबकी अनुरक्त करो। हमारे विनययुक्त, सरल स्वभाव, बल, और तपस्या, दम, धर्म्म और सत्यसे भरे हुए महाराज युधिष्ठिर अनेक भांतिके कपटवाद और बहुत दुःखोंको पाकरभी सब क्लेशोंको सह रहे हैं। महात्मा जेष्ठ-भ्राता धर्म्मराज-युधिष्ठिर जिस समय अनमने होकर, अनेक वर्षोंसे रोके हुए अपने महाघोर रोषको छोड़ेंगे, उसी समय दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पछताना पड़ेगा। सन्ध्याके समय जिस भांति जलती हुई यज्ञकी अग्नि सूखे काठोंको जला देती है; उसी भांतिसे धर्म्मराज युधिष्ठिर क्रोधसे प्रज्वलित होकर, दुर्य्योधनकी सेनाको भस्म कर देंगे; जिसको देखकर अवश्यही उसको पछताना पड़ेगा। जब रथमें गदा लिये हुए क्रोधी और अत्यन्त वेगशाली भीमसेनको क्रोधसे विष उगलते हुए देखेगा, तभी दुर्य्योधन युद्धके निमित्त पश्चाताप करेगा। जिस समय सेनाके अग्रगामी, शस्त्रधारी गदा लिये हुए भीमसेनको दुर्य्योधन साक्षात कालके समान सब बीरोंका संहार करता हुआ देखेगा, तभी हमारी बातोंको स्मरण करेगा। जब भीमसेनसे मारे गये हाथियोंको पहाड़ोंके शिखरके समान लहू उगलते दुर्य्योधन देखेगा, तभी युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। जैसे सिंह गौओंके बीचमें जाता है, वैसेही कुरु-सेनामें गदा लेकर भीमसेन प्रवेश करके, जब धृतराष्ट्र-पुत्रोंका बध करेंगे, तभी दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पछताना पड़ेगा। जब भीमसेन युद्धमें शत्रुओंके दलको मर्द्दन करते हुए, अकेलेही रथों और पदातियोंको गदासे मारेंगे और हाथियोंको प्रास तथा फरसेसे बन काटनेकी भांति काटकर, दुर्य्योधनकी सब सेनाको विच्छिन्न करेंगे; उसी समय वह युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा; जब अग्निके समान तृणके घरोंसे युक्त गांवको भांति धृतराष्ट्र-पुत्रोंको दुर्य्योधन भीमके बलसे भस्म होता देखेगा तभी उसको युद्धके निमित्त पछताना पड़ेगा। रथियोंमें श्रेष्ठ विचित्र शब्दोंको करनेवाले नकुल, दहिनी ओरके तूणीरसे सैकड़ों वाणोंकी बर्षा करते हुए, रथियोंको एकाबारगी मारके गिरावेंगे; तभी दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पछताना पड़ेगा। सब दिन सुखोंको भोगनेवाले नकुलने बनमें बहुत दिनोंतक जिस दुःख-शय्यामें शयन किया था, उसको स्मरण करके जब सर्पके समान अपने क्रोधरूपी विषको उगलेंगे, तभी दुर्य्योधनको युद्धसे निमित्त पश्चात्ताप करना पड़ेगा। हे सञ्जय! जिस समय प्राणोंको त्यागनेवाले राजा लोग, युधिष्ठिरकी आज्ञासे शत्रुओंको

सेनाकी ओर रथोंपर चढ़के दौड़ेंगे; तब उन्हें देखकर दुर्य्योधन अवश्यही पश्चात्ताप करेगा। बालक होकरभी जिस समय तरुणोंकी भांति सब शस्त्रके जाननेवाले, वीरतासे भरे हुए, प्रतिबिन्ध्य आदि द्रौपदीके पांचो पुत्र अपने प्राणोंकी आशाको छोड़कर दुर्य्योधनकी सेनापर चढ़ धावेंगे, तभी उसको युद्धके निमित्त पछताना पड़ेगा। जब बधके निमित्त उद्यत सहदेव धीर-गति और निःसन्देह-चक्र, सुवर्णके तारोंके पुञ्जसे खचित, वायुके समान शीघ्र चलनेवाले घोड़ोंके रथपर चढ़कर, अपने वाणसे राजाओंके शिरको काटके पृथ्वीमें गिरावेंगे, महा भयङ्कर युद्ध-कौतुकके आरम्भ होनेपर, सब शस्त्रोंके जाननेवाले उस नकुलको दहिने, वायें तथा चारों ओर उपस्थित होते जब दुर्य्योधन देखेगा, तभी युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। लज्जा शील, दक्ष, सत्यवादी, महा-बलशाली, सब धर्म्मोंको जाननेवाले, क्षिप्रकारी, वेगवान सहदेव जिस समय युद्धमें गान्धारराज शकुनिपर आक्रमण करके शत्रु-सेनाको विक्षिप्त करेंगे, तभी दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पछताना पड़ेगा। सब शस्त्रोंसे पूरित रथके युद्धको जाननेवाले द्रौपदी-पुत्रोंकी महा-विषधर विषैले सर्पकी भांति युद्धके निमित्त आते हुए देखकर, दुर्य्योधनको अवश्य युद्धके लिये पश्चात्ताप करना पड़ेगा। कृष्णके समान सब शस्त्रोंको जाननेवाला अभिमन्यु जिस समय अपने वाणोंकी मेघकी भांति बरसावेगा, और सब शत्रुको सेनाका बल मर्दन करेगा, तभी दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पछताना पड़ेगा। बालक होकर भी जुवाकी भांति जिस समय सुभद्रा-पुत्र अभिमन्युको, कालरूपके समान शत्रुसेनाके ऊपर गिरता हुआ दुर्य्योधन देखेगा, तभी युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। सिंहके समान बलवान शीघ्रहस्त, युद्धके सब कर्म्मोंको जाननेवाले, प्रभद्रक, नामक वीर लोग जिस समय सेनाके सहित धृतराष्ट्र पुत्रोंको विक्षिप्त करेंगे, तभी दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पछताना पड़ेगा। जिस समय सेनाके सहित धृतराष्ट्र-पुत्र, महारथ बूढ़े विराट और द्रुपदको पृथक पृथक सेनाको लिये हुए युद्धकी ओर आते देखेंगे, तभी दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पछताना होगा शस्त्रधारी द्रुपदराज जब रथपर चढ़कर क्रोधपूर्व्वक सहजहीमें वीरोंके मस्तकको फूलके समान पृथ्वीमें गिराने लगेंगे, तभी दुर्य्योधन युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। शत्रुपक्षके वीरोंको मारनेवाले विराटराज जब मेरे आनेके समय मत्स्य-देशीय सेनाको लेकर शत्रु-सेनामें प्रवेश करेंगे; तभी दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पश्चाताप करना होगा। मत्स्यराज विराटके जेठे पुत्र उत्तरको जिस समय पाण्डवोंके निमित्त संग्राम-भूमिमें शस्त्र धारण किये हुए दुर्य्योधन देखेगा, तभी युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। मैं यही संशय-रहित सत्य बचन कहता हूं, कि कौरवोंमें मुख्य शान्तनुपुत्र भीष्मके शिखण्डीके हाथसे मारे जानेपर, फिर हमारे शत्रु लोग कदापि जीते न बचेंगे। सेनापति शिखण्डी जिस समय अच्छी प्रकारसे रक्षित-रथपर चढ़के रथी लोगोंको मारेंगे, और दिव्य रथपर आरूढ़ सब सेनाको मर्दन करते हुए जब भीष्मको ओर दौड़ेंगे, तभी दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करना होगा। बुद्धिमान द्रोणाचार्य्यने जिसे सब गुप्त-अस्त्रोंका भेद बतलाया है, उस धृष्टद्युम्नको जब दुर्य्योधन सृञ्जयोंकी सेनाके सम्मुख खड़ा देखेगा, तभी युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। शत्रुओंके वाणोंको सहनेमें समर्थ जिस समय पराक्रमी सेनापति-धृष्टद्युम्न, अपने वाणोंसे धार्त्तराष्ट्रोंको मर्दन करके द्रोणाचार्य्यके समीप

पहुंचेंगे ; तभी दुर्योधन युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। तेजस्वी, बुद्धिमान, बलवान और लक्ष्मीवान यदुवंशियोंमें श्रेष्ठ वृष्णि सिंह सात्यकी जिस सेनाके अग्रणी हैं, उसको कौन शत्रु रोक सकेगा? यदि तुम लोग यह कहो, कि लोकमेंसे दूसरे किसी रथारूढ़ पुरुषको सहायरूपसे मत वरण करो, तो हम शिनि-पौत्र सब शस्त्रोंके जाननेवाले महाबलसे युक्त अकेले सात्यकीहीको वरण करेंगे। यह सब शस्त्रोंको जाननेवाला महारथ सात्यकी युद्धमें अद्वितीय, कालके समान और भयसे रहित है। इसकी छाती बड़ी, भुजा लम्बी और धनुषका परिमाण चार हाथ है। शिनि-वंशाधिपति सात्यकी जिस समय हमारी आज्ञासे शत्रु-सेनामें प्रवृष्ट होकर मुख्य मुख्य वीरोंको अपने वाणोंमें व्याकुल करेंगे, तभी दुर्योधनको युद्धके निमित्त पश्चताप करना पड़ेगा। वह दृढ़ सरासनको धारण करनेवाला दीर्घबाहु महा-वीर सात्यकी, जब युद्धके निमित्त यत्न अवलम्बन करते हैं, तो शत्रु लोग इस प्रकारसे उनके आगेके भाग जाते हैं, जैसे सिंहको देखके गऊ भागती हैं। दीर्घबाहु, दृढ़धन्वा सब शस्त्रोंके जाननेवाले, शीघ्रहस्त वह महात्मा सात्यकी पर्व्वतोंको भी तोड़ सकते हैं, और सब लोकोंके संहार करनेमें भी समर्थ हैं, रणभूमिमें वह आकाशमें स्थित सूर्य्यकी भांति बिराजमान होते हैं। अस्त्रोंके चलानेके विषयमें सात्यकीको विहित और दूसरी बहुत प्रकारकी आश्चर्य-प्रद शिक्षा मिली हुई है। अस्त्रोंके चलानेकी क्रियाको पण्डितोंने जिस भांतिसे कहा है, सात्यकी उन सब गुणोंसे पूर्ण हैं। युद्ध-भूमिमें जब युद्धवंशियोंमें श्रेष्ठ सात्यकीके सफेद-घोड़ोंसे युक्त सुवर्ण खचित रथको दुर्योधन देखेगा, तभी उसको युद्धके निमित्त पश्चात्ताप पड़ेगा। जिस समय सुवर्ण और मणियोंसे प्रकाशित सफेद घोड़ोंके सहित भयङ्कर कपि-ध्वजासेयुक्त हमारे रथको रणभूमिमें चलता हुआ दुर्योधन देखेगा, तभी वह युद्धके निमित्त सन्तापित होगा। उस महा-युद्धमें जब मैं गाण्डीव धनुषको चढ़ाऊंगा, उस समय मेरे धनुषका बज्र-समान महा-शब्दको सुनकर और अपनी सेनाको मेरे वाणोंकी वर्षाके आगे गौओंके समान भागती हुई देखकर, वह दृढ़ सहायक रहित नीच-बुद्धि मूढ़ दुर्योधन युद्धके निमित्त पछतावेगा। शत्रुओंके छोड़े हुए वाणोंको, जब मेरे वाणोंसे कटकर पृथ्वीमें गिरता देखेगा तभी दुर्योधन युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। पक्षी लोग जैसे वृक्षकी चोटीसे फलको तोड़के खाते हैं, उसी प्रकारसे हमारे वाण बीरोंके मस्तकोंको काटके ढेर लगा देंगे ; उसको देखकर दुर्योधनको युद्धके निमित्त पछताना होगा। युद्धमें जब मुख्य मुख्य रथी, गजपति, और घुड़सवारोंको हमारे वाणोंसे मरकर पृथ्वीमें गिरते देखेगा, तभी दुर्योधनको युद्धके निमित्त पछताना पड़ेगा। जब अपने भाइयोंको शत्रुओंके अस्त्रोंके मार्गमें न पहुंचतेही भागता हुआ देखेगा, तभी दुर्योधन युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। मुख बाये हुए कालके समान जिस समय मैं अपने गाण्डीव धनुषको लेकर मूसल-धार मेघकी वर्षाकी भांति सब अग्निके समान जलते हुए वाणोंको बरसाके पैदल तथा रथी आदि सेनाका संहार करूंगा, तब वह मन्दबुद्धि दुर्योधन युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। दुर्योधन जब अपनी सब सेनाको मेरे वाणोंसे चारों ओर भागती, घायल चेत-रहित, प्यासी, थकी हुए वाहन और भयसे व्याकुल देखेगा ; तभी वह युद्धके निमित्त पछतावेगा। जब देखेगा कि पराक्रमशील मुख्य मुख्य राजा, बीर, हाथी, घोड़े, सब मारे गये हैं, बाकी सब आर्त्तनाद कर रहे हैं,

कितनेही मर गये, और कितनेही मर रहे हैं, उनके केश, हड्डी और शिर इधर उधर पड़े हैं, उसी समय वह मन्दबुद्धि दुर्य्योधन सन्तापित होगा। जब शैन्य-सुग्रीव आदि घोड़ोंके रथपर बैठे हुए कृष्णको, मुझको, गाण्डीव-धनुष, दिव्य-शंख पाञ्चजन्य, दोनों अक्षय तूणीर और देवदत्त शंखको देखेगा, तभी धृतराष्ट्रपुत्र दुर्य्योधन युद्धके विषयमें पश्चात्ताप करेगा। जैसे युगोंके अनन्तर अन्य युग उत्पन्न होता है, उसी भांतिसे मैं कालरूपके समान उपस्थित होकर, दुष्टोंके समूहको भगाते हुए जब अपने अग्निके समान बाणोंसे कौरवोंको जलाने लगूंगा, तभी दुर्य्योधन पुत्र सहित सन्तापित होगा। क्रोधके वशवर्ती मन्द-बुद्धि धृतराष्ट्रपुत्र बन्धु बान्धव और सेनाके सहित ऐश्वर्य्य-भ्रष्ट होनेसे अभिमान रहित, हतबुद्धि और शरीरसे कांपता हुआ अवश्यही पश्चात्ताप करेगा।

किसी दिन सवेरेही हमारी सन्ध्या, बन्दना, स्नान आदि क्रियाओंके समाप्त होनेपर एक बूढ़े ब्राह्मणने आकर हमको यह प्यारा बचन कहा, "सव्यसाचिन्! तुमको अत्यन्तही कठिन कर्म्म करना होगा। उस समय या तो कारवाहन इन्द्र बज्र लेकर तुम्हारे आगे आगे चलेंगे, अथवा बसुदेवनन्दन कृष्ण शैव सुग्रीवयुक्त रथपर चढ़के तुम्हारी पृष्ठ-रक्षा करेंगे। ब्राह्मणके उस बचनको सुनकर मैंने बज्रधारी इन्द्रको तिरस्कार करके इस युद्धमें कृष्णहीको सहायक रूपसे बरन किया है। उन्हीं कृष्णको मैंने दस्युओंके (डाकुओंके) बधके निमित्त प्राप्त किया है। मालूम होता है, देवता लोगोंने हमारे ऊपर प्रसन्न और अनुकूल होकरही ऐसे बिधान किये हैं। कृष्ण युद्धमें प्रवृत्त न होकरभी अन्तःकरणसे जिसके जयकी अभिलाषा करेंगे, उसके इन्द्र आदि भी शत्रु हों तौ भी वह सबको जीत सकता है, मनुष्योंकी तो बातही क्या है? जो पुरुष अत्यन्त वीरतासे युक्त महातेजस्वी बासुदेव कृष्णको युद्धमें जीतनेकी इच्छा करता है, वह बाहुसे अगाध समुद्रको तरनेके अभिलाषीके समान है। जो मूर्ख अपने हाथकी हथेलीसे कैलास पर्व्वतको तोड़नेकी इच्छा करता है, वह पर्व्वतका कुछभी नहीं कर सकता, बल्कि उसकी हथेलीही नखोंके सहित फट जाती है। जिसके गर्भसे प्रद्युम्नका जन्म हुआ है उस यशस्विनी रुक्मिणीको जिन्होंने एकही रथपर युद्धमें भोजबंशीय राजाओंको जीतकर बलपूर्व्वक भार्य्या रूपसे ग्रहण किया था, उन कृष्णको जो युद्धमें जीतनेकी इच्छा करे, वह जलती हुई अग्निको भी हाथसे बुझा सकता है, चन्द्रमा और सूर्य्यके तेजको छीन सकेगा, और बलपूर्व्वक देवतोंका अमृतभी हर लानेमें समर्थ होगा। देवताओंके भूषण स्वरूप कृष्णने अपने बलसे गान्धार लोगोंके तेजको पूर्ण रीतिसे मथकर नग्नजीत नृपतिके सब पुत्रोंको पराजित करके सुदर्शन राजाको छुड़ाया था। इन्होंने वक्षस्थलकी चोटसे पाण्डु-राजाको मारा और दन्तकूट युद्धसे कलिङ्ग लोगोंको मर्दन किया था। इन्हींसे भस्म होकर वाराणसी (काशी) नगरी अनेक वर्षोंतक बिना राजाके सूनीही पड़ी रही। एकलव्य नामक प्रसिद्ध निषादराज जिसको ये युद्धमें दूसरेसे न जीतने योग्य समझते थे, वह पर्व्वतके ऊपर जम्भासुरकी भांति कृष्णके हाथहीसे मरकर मृत्युको पहुंचा। और भी इन्होंने बलदेवके सङ्ग मिलकर वृष्णि और अन्धक लोगोंकी सभाके बीचमें जाकर महा-दुष्ट उग्रसेनपुत्र कंसको मारा था, और उसको मारकर उग्रसेनको राज्य दिया था। इन्होंने मायावी, भयरहित, आकाशमें स्थित शाल्व-राजसे सौभके सहित युद्ध किया था, और सौभसे शतघ्नी शक्ति ले ली थी, तब कोईभी

मरण-धर्म्मशील पुरुष इनके पराक्रमको सह सकता है? असुरोंका प्राग्ज्योतिषपुर नामक एक नगर था; वहांपर भूमिपुत्र नरकासुरने अदितिके अत्यन्त सुन्दर दोनों मणिजटित कुण्डलोंको हरकर उसी स्थानमें रक्खा था। मृत्युके भयसे रहित इन्द्र समेत सब देवता लोगभी इकट्ठे होकर उसे युद्धमें नहीं हरा सके, अनन्तर कृष्णके प्रसिद्ध बल, विक्रम और अक्षय शस्त्रोंको देख, और दस्यु (डाकुओं) के संहार करनेका उनका मुख्य धर्म्म समझ, इन्होंको देवतोंने उसके बधके निमित्त नियुक्त किया था। देवतोंके समूहसे पूजित श्रीकृष्णने इस कठिन कर्म्मको अङ्गीकार किया था। इन्हीं महावीर कृष्णने उन्मोचन नगरमें छः हजार वीरोंको मारके और मुरासुर तथा अन्यान्य दूसरे राक्षसोंके झुण्डको संहार करके, मुरके बनाये हुए तीक्ष्णधार और भयङ्कर पाशको तोड़ते हुए वहांसे आगे निकले। यहीं पर महाबल नरकासुरके साथ अति बलशील महात्मा कृष्णका युद्ध हुआ था। उससे वह वायुसे उड़ाये हुए तिनकेकी भांति मरकर पड़ुलको पहुंचा था। अमित प्रभावयुक्त विद्यावान कृष्णने इस प्रकारसे मुर और नरकासुरको मारा था; और मणि जटित कुण्डलको लेकर लक्ष्मी और यशके पुञ्जसे पूरित होकर लौट आये थे। तब देवताओंने इनके इस कठिन कर्म्मको देखकर कहा, कि युद्धमें प्रवृत्त होनेसे तुम्हें कुछभी परिश्रम न होगा, आकाश और जलआदि सब स्थानोंमें तुम्हारी गति होगी, और शस्त्र सब तुम्हारे शरीरमें नहीं प्रवेश कर सकेंगे, इस प्रकार देवताओंने वर दिया था, उससे कृष्णभी कृतार्थ हुए थे। इस प्रकारके अमित-गुणसे भरे हुए अनन्त पराक्रमी महाबली वासुदेव कृष्णको दुर्य्योधन जीतनेकी इच्छा करता है; क्योंकि वह दुष्टात्मा सदा उनको बांधने (कैद करने) का यत्न करता है; परन्तु ये हम लोगोंके शील और प्रेमसे सब सह रहे हैं। दुर्य्योधन हमारे और कृष्णके बीचमें झगड़ा उत्पन्न करानेकी युक्ति और प्रार्थना करता है; परन्तु पाण्डवोंमें कृष्णकी आत्मीयता और मित्रता तथा स्नेहको घटाना कैसा कठिन और असाध्य कार्य्य है, वह कुरुक्षेत्रके युद्धहीमें जाकर समझ सकेगा। मैं राज्यके पानेमें उत्सुक होकर शान्तनुपुत्र भीष्म, पुत्र सहित द्रोणाचार्य्य और कृपाचार्य्यको नमस्कार करके युद्धमें प्रवृत्त होऊंगा। जो पापबुद्धि पुरुष पाण्डवोंसे युद्ध करनेके निमित्त उत्साही होगा, हमारे विचारमें धर्म्मसे उसकी मृत्यु खड़ी है; अर्थात यदि धर्म्म है, तो अवश्यही उसकी मृत्यु होगी। उन पापियोंने केवल कपटजुएके खेलमें हम लोगोंको बारह वर्षके निमित्त जीता था। हम लोग राजपुत्र होकरभी इतने दिनोंतक महा दुःखको सहकर बनबास किया था, और एक वर्ष छिपकरभी निवास किया, इससे पाण्डवोंके जीते हुए उन लोगोंके राज्यपद पर बैठकर धार्त्तराष्ट्र लोग अब कैसे आनन्दित रह सकते हैं? हम लोगोंके युद्धमें प्रवृत्त होनेपर यदि वह इन्द्र आदि देवतोंकी सहायतासेभी हम लोगोंको जीतनेमें समर्थ होजाय, तब यह बात अवश्य माननी होगी कि धर्म्मसे अधर्म्म-आचरणही श्रेष्ठ है, और संसारमें कोईभी सत्कर्म्म विद्यमान नहीं है। दुर्य्योधन यदि इस जीवात्माको कर्म्मबद्ध और हम लोगोंको अपनेसे अधिक न समझेगा, तो कृष्णकी सहायतासे मैं निश्चयही उसको इष्ट मित्रोंके सहित मारनेकी इच्छा करता हूं। हे नरेन्द्र! यदि दुर्य्योधनका हम लोगोंके राज्यको हर लेनेका पाप निष्फल न होगा; और हम लोगोंका पुण्य-कर्म्म जो हमने उसको गन्धर्वोंके हाथसे छुड़ानेमें किया था,

वह भी यदि वृथा न होगा, तब इन दोनों पक्षोंको बिचारकर देखनेसे दुर्य्योधनको पराजयही होनी उचित है। हे कौरवो! मैं जो वचन कह रहा हूं, वह तुम लोग देखोगे, युद्धमें प्रवृत्त होकर धृतराष्ट्रपुत्र जीते न बचेंगे। युद्धके अतिरिक्त कुछ अन्य उपाय करनेसे कौरव लोग जीते बच सकते हैं, परन्तु युद्ध करनेसे वे लोग कभी भी न बचेंगे। मैं कर्णके सहित धार्त्तराष्ट्रोंको मारकर सब राज्यको ले लूंगा, इससे तुम लोगोंको जो कुछ करना हो, उसे इसी समय करो, अपनी अभिलषित वस्तुओंका भोग लो। वर्त्तमान और भविष्यको बहुतसी दैवी घटनाओंसे कौरवोंका नाश और पाण्डवोंके विजयसूचक वृत्तान्त विदित होंगे। इसी प्रकार उत्तमरूपसे ज्योतिष जाननेवाले, शीलवन्त, कुलीन सम्वत्सरके फलोंके जाननेवाले, सूर्य्य चन्द्रमाके ग्रहण आदि विज्ञानमें निपुण और नक्षत्रोंके संयोगको निश्चय करनेवाले, दिव्यप्रश्नोंके लगानेवाले (भविष्य घटनाओंके बतानेवाले;) शृगालोंके आगमनके फलोंको कहनेवाले, कौन नक्षत्र किस ग्रहसे वेधा गया है इत्यादि विषयोंके विचार करनेवाले, शुभ और अशुभ मुहूर्त्तोंको बतानेवाले वृद्ध-ब्राह्मणभी यदि उपस्थित न हों, तौभी प्रत्यक्ष देखनेवाले छाणसिंह कृष्णभी ऐसे बहुतसे लक्षणोंको निःसन्देह देख रहे हैं, जिससे हम लोगोंके अजातशत्रु युधिष्ठिर शत्रुओंको पराजयके निमित्त अपनेको कृतकार्य्य समझ सकते हैं। और मैं भी शान्त होकर उन सब होनेवाले वृत्तान्तोंको ज्योंका त्यों देख रहा हूं। मेरे योग प्रभाववाली प्राचीन दृष्टिमें कुछभी व्याघात (रद बदल) नहीं हुआ है। मैं निश्चयही जानता हूं, कि युद्धमें प्रवृत्त होनेसे धृतराष्ट्रके पुत्र जीते न बचेंगे। मेरे गाण्डीव धनुषके रोदे बिना चढ़ायेही चढ़ जाते हैं, बिना चोटकेही धनुष चढ़ानेका स्थान कम्पित हो रहा है, बाण सब तूणीरमेंसे निकलकर चलनेको उद्यत होते हैं। अपनी पुरानी केंचलीको छोड़कर जैसे सांप बाहर होता है, वैसेही मेरी यह तरवारभी प्रसन्न होकर मियानमेंसे निकल रही है; और ध्वजाके ऊपरसे भी "हे किरीटिन! कब तुम्हारा रथ रथ जुतेगा" इस प्रकारके भयङ्कर बहुतसे वचन सुन पड़ते हैं। रातको सियार बड़ेजोरसे बोलते हैं, और आकाशमें राक्षसोंका समूह गिरता हुआ दीखता है। मेरे सफेद घोड़ोंसेयुक्त रथको देखकर हरिण, सियार, मोर, कौए, गिद्ध, बगुले और सोनेके पंखके समान पंखवाले पक्षी सब पिछाड़ी गिरते हुए दीखते हैं, क्योंकि मैं अकेलाही बाणोंकी वर्षा करता हुआ योद्धाओंको यमपुरीमें पहुंचा सकता हूं। सन्ध्याके समय बहुत घने बनको जलानेवाली अग्निके समान मैं योद्धाओंको मारनेका दृढ़ निश्चय करके अलग अलग अस्त्र शस्त्रोंको लेकर महा अस्त्र स्थूणाकर्ण, पाशुपतास्त्र और ब्रह्मास्त्र तथा इन्द्रने मुझको जो कुछ अस्त्र दिये हैं सबको चलाकर शत्रुकी ओरके राजपुरुषों और राजाओंमेंसे किसीको भी बाकी न छोड़ूंगा। हे सञ्जय! तुम उन लोगोंसे कहना कि, ऐसाही करके मैं शान्त होऊंगा, क्योंकि यही मेरा मुख्य और स्थिर अभिप्राय है। हे सूत! देखो! दुर्य्योधनको कहांतक मोह उत्पन्न हुआ है, कि जिसको इन्द्र आदि देवताओंको सहायता पाकर भी कोई युद्धमें नहीं जीत सकता, उनके सङ्गमें बलपूर्व्वक विरोध करना वह उत्तम समझता है। जो हो, सम्प्रति शान्तनुनन्दन बूढ़े भीष्म, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा और विदुर जो वचन कहते हैं, वही होवे; सब कौरव लोग आयुष्मान होवें।

४८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! अनन्तर शान्तनुपुत्र भीष्म उन इकट्ठे हुए सब राजाओंके बीचमें दुर्य्योधनसे यह बचन कहने लगे। पहिले समयमें एक बार बृहस्पति और शुक्राचार्य्य ब्रह्माके समीप गये थे, और इन्द्रके सहित सहित बसु आदित्य साध्य, आकाशमें रहनेवाले सप्तऋषि, गन्धर्व्व और अप्सरा आदि सब स्वर्गवासी भी वहां जाकर लोकवृद्ध विप्रेश्वर पितामहको नमस्कार करके अपने अपने समूहके सहित यथा योग्य स्थानमें बैठ गये। उसी समय प्राचीन देव नर और नारायण ऋषि अपने असीम तेज प्रभावसे उन सबके मन और तेजको ग्रहण करते हुए सबहीको नांघकर वहांसे चले। इससे बृहस्पतिने ब्रह्मासे पूछा, कि हे पितामह! आपकी उपासना न करनेवाले ये दोनों कौन हैं? इनका वृत्तान्त हम लोगोंसे कहिये। ब्रह्मा बोले, पृथ्वी और स्वर्गको प्रकाशित करनेवाले, तेजसे प्रज्ज्वलित, महासत्त्व, महापराक्रमी और महाबलसे युक्त जो ये दोनों ऋषि सबको व्यापके तथा अतिक्रम करके चले गये हैं, येही नरनारायण हैं। अपनी तपस्यासे तेजस्वी होकर ये मनुष्यलोकसे ब्रह्मालोकमें पहुंचे हैं। हेब्रह्मन्! इन्होंने कर्म्मसे सब लोकोंके आनन्दको बढ़ाया है; महाबुद्धिमान इन दोनों परम तेजस्वी महात्माओंमें परस्पर अभेद होनेपरभी देवता और गन्धर्व्वोंसे पूरित होकर राक्षसोंके विनाश करनेके निमित्त दो शरीरको धारण किये हैं। ब्रह्माके उस बचनको सुनकर इन्द्र बृहस्पति आदि देवतोंके सहित वहां गये, जहां नर-नारायण तपस्या करते थे। वहां जाकर उस समय जो देवता और असुरोंमें महायुद्ध होरहा था, उस महाभयसे छूटनेके निमित्त वर मांगनेको प्रार्थना करी हे भरतसत्तम! तब उन्होंने कहा, कि "क्या प्रार्थना है, कहो।" ऐसा बचन सुनकर इन्द्र बोले, आपलोग मेरी सहायता कीजिये। अनन्तर उन्होंने इन्द्रसे कहा, कि "तुम जो इच्छा करते हो, वह पूरी होगी।" इन्द्रने उनके प्रतापसे शत्रुओंको जीता था। महातेजस्वी नरदेवने युद्धमें पौलोम और कालखञ्ज आदिक इन्द्रके सौ सौ हजार शत्रुओंका संहार किया था। लड़ाईके समय जम्भासुर नरदेवको ग्रास करनेके निमित्त उद्यत हुआ था, तब इन्होंने घूमते हुए रथपर बैठकर भालेके सहारेसे उसका शिर काटा था। इन्होंने समुद्रके पारमें जाकर साठ हजार निवातकवच नामक राक्षसोंको जीतके हिरण्यपुर नगरको पीड़ित किया था। पराये देशोंके जीतनेवाले महाबाहु अर्ज्जुनने इन्द्रके सहित सब देवतोंकोभी पराजित करके अग्निको तृप्त किया था। इसो प्रकारसे दैत्य दानवोंका बध किया था। ऐसे महाबली और बड़े पराक्रमी इन दोनोंपुरुषोंका एकत्र समागम देखा। सुनते हैं, कि वेही प्रथम देव नर और नारायणने वीरोंमें श्रेष्ठ वासुदेव और अर्ज्जुन रूपसे अवतार लिया है मनुष्य लोकमें इन्द्रके सहित सब देवता लोगभी इनको नहीं जीत सकते। कृष्णही नारायण और अर्ज्जुन नरदेव जाने गये हैं। एकही आत्माने दो होकर नर नारायण रूपको धारण किया है। ये वीरताके कर्म्मोंसे अक्षय ध्रुव लोकोंमें व्याप्त हो रहे हैं, और जहांपर युद्ध करनेका समय पहुंचता है, वहांही बार बार अवतार लेते हैं। इसी निमित्त वेदके जाननेवाले नारदने यदुवंसियोंसे यह सब वृत्तान्त वर्णन करते हुए कहा था, कि युद्धही इनका कर्त्तव्य कर्म्म है। हे तात दुर्य्योधन! जब सनातन महात्मा कृष्ण अर्ज्जुनको तुम एकही रथ पर बैठे देखोगे; जब शङ्ख, चक्र, गदा हाथमें लिये हुए कृष्णको और गाण्डीव धनुषके सहित अर्ज्जुनको अस्त्र शस्त्रोंसे युक्त देखोगे, तभी हमारी इन बातोंको स्मरण करोगे। यदि यदि हमारी बातोंको

न मानोगे, तो समझोगे कि निश्चयही कौरवोंके नाशका समय उपस्थित हुआ है। हे तात! धर्म्म और अर्थसे तुम्हारी बुद्धि भ्रष्ट होगई है; तुम यदि मेरी बातोंको ग्रहण न करोगे, तो अनेक ज्ञाति-बन्धुओंको मरे हुए सुनोगे; सब कौरव लोग तुम्हारे ही मतके अनुवर्त्ती हैं, परन्तु तुम परशुरामजीके शापसे ग्रस्त होन सूत पुत्र कर्ण, सुबल-पुत्र शकुनि और अपने सहोदर भाई दुःशासनके मत और बचनोंको कल्याणकारी समझते हो।

कर्ण बोले, हे पितामह! तुमने मुझे जो कुछ बचन कहे, यह तुम्हारे कहने योग्य न थे, क्योंकि मैं निज धर्म्मसे पतित न होकर क्षात्रधर्म्ममें स्थित हूं। विशेषतः मुझमें ऐसा कोई दुश्चरित्र भी नहीं है, कि जिससे तुम मेरी निन्दा करोगे। धृतराष्ट्रके पुत्र लोग किसी समयमें भी मेरे किञ्चित मात्र पापको नहीं जानते; मैंने दुर्य्योधनके सङ्गमें भी कभी बुरा आचरण नहीं किया, बल्कि यही कल्याण साधनका कार्य्य करूंगा, कि युद्धमें सब पाण्डवोंको मार डालूंगा। पहिले जिनके साथ विरोध हो चुका है, सज्जन लोग उनके सङ्ग फिर किस प्रकारसे सन्धि कर सकते हैं? राजा धृतराष्ट्रके प्रिय-कार्य्योंको करना मेरा अत्यन्त कर्त्तव्य कर्म्म है और दुर्य्योधनकेभी प्यारे कामोंको करना उचित है; क्योंकि येही राज्यपद पर प्रतिष्ठित हुए हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कर्णकी ऐसी बातोंको सुनकर शान्तनुपुत्र भीष्म महाराज धृतराष्ट्रसे बात करते हुए फिर यह बचन बोले, कि कर्ण "पाण्डवोंको मारूंगा" यह कहकर सदा अपनी बड़ाई किया करता है; परन्तु यह महात्मा पाण्डवोंके सोरहवें अंशका एक अंशभी नहीं है। तुम्हारे दुराचारी पुत्रोंको जो भारी अनर्थमें पड़ना होगा, वह इसी सूतपुत्रका कर्म्म जानना चाहिये। तुम्हारा पुत्र मन्दबुद्धि दुर्य्योधन इसीका सहारा लेकर महाबली, शत्रुओंके जीतनेवाले देवपुत्र पाण्डवोंको अपमानित किया करता है। पाण्डवोंने अकेलेही जिन कठिन कर्म्मोंको किया है, क्या कर्ण कभी भी वैसे कर्म्मोंको करनेमें समर्थ हुआ है? विराट नगरमें जब अर्ज्जुनने अपने बल विक्रमको प्रकाश करके इसके प्यारे भाईको मारा था, उसे देखकर उस समय इसने क्या किया था? अर्ज्जुनने सब कौरवोंको जिस समय अकेलेही जीतकर अच्छी प्रकारसे सबको मोहित और मूर्च्छित करके सबके वस्त्रोंको बलपूर्व्वक हरण किया था, तब क्या यह विदेशमें गया था? वहां पर क्या यह उपस्थित नहीं था, घोषयात्रामें जब गन्धर्वोंने तुम्हारे पुत्रोंको हरण किया था, तब यह सूतपुत्र कहां था, जो इस समय बैलकी भांति आस्फालन कर रहा है। वहांपर भी महात्मा भीम अर्ज्जुन, नकुल और सहदेवनेही आकर उन गन्धर्वोंको जीतकर दुर्य्योधनको छुड़ाया था। हेभरतर्षभ! इस व्यर्थ बड़ाई करनेवाले धर्म्म और अर्थके लोपक कर्णकी ऐसीही बहुत मिथ्या बातें सुनी जाती है; इससे तुम इन सब बातोंका बिचार करके अपने मङ्गल कामनाके निमित्त कार्य्य करो।

भीष्मकी बात सुन महात्मा भरद्वाजपुत्र सब राजाओंके बीचमें उनके बचनोंकी प्रशंसा करते हुए महाराज धृतराष्ट्रसे यह बचन बोले, कि अर्थ-लिप्सुओंके बचन अनुसार कार्य्य करना आपको उचित नहीं है। युद्धके पहिले पाण्डवोंसे मेल करनाही मैं कल्याणकारी समझता हूं। सञ्जयने अर्ज्जुनको कही हुई जिन सब बचनोंको सभामें सुनाया है; उन सबकोहो मैं स्वीकार करता हूं; अर्ज्जुन अवश्य उन बचनोंके अनुसार कार्य्यको पूराकरेगा, क्योंकि त्रिलोकमें उसके समान धनुर्द्धारी दूसरा कोईभी विद्यमान नहीं है।

महाराज धृतराष्ट्र द्रोण और भीष्मके अर्थसे भरे हुए वचनोंका अनादर करके सञ्जयसे पाण्डवोंकी वातोंको पूछने लगे। उन्होंने जब भीष्म और द्रोणाचार्य्यको वातोंका पूरा उत्तर न दिया उसी समय कौरव लोग अपने जीवनसे निराश होगये।

४८ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! हमारी प्रीतिके निमित्त जो सब सेना आकर इकट्ठी हुई है, उसको सुनकर धर्म्मपुत्र राजा युधिष्ठिरने क्या कहा? भावी युद्धके लिये वे कैसा बन्दोबस्त कर रहे हैं? भाई और पुत्रोंमें कौन कौन उनकी आज्ञा पानेके निमित्त मुंह जोह रहे हैं। मेरे चद्रबुद्धिवाले पुत्रोंके ठगने और अपमान करने पर कुपित हुए धर्म्मपुत्र धर्म्मचारी राजा युधिष्ठिरको "शान्ति अवलम्बन कीजिये" ऐसा वचन कहके युद्धसे कौन निवारण कर रहा हैं?

सञ्जय बोले, हे महाराज! पाण्डवोंके सहित पाञ्चाल लोग राजा युधिष्ठिरका मुंह जोहते हुए ठहरे हैं और वे भी सब पर अनुशासन कर रहे हैं। पाण्डव और पाञ्चालोंका रथसमूह अलग अलग आकर राजा युधिष्ठिरको प्रसन्न कर रहा है। उदय होते हुए प्रभात कालके सूर्य्यके समान पाण्डव और पाञ्चाल योद्धा कुन्तीनन्दन महाराज युधिष्ठिरको स्तुति और प्रशंसा करते हैं; ब्राह्मण चत्रिय और वैश्योंकी कुमारी कन्याये युद्धके निमित्त उद्यत हुए युधिष्ठिरके देखनेके निमित्त आके इकट्ठी होती हैं।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! पाण्डव लोग पाञ्चाल तथा दूसरे सोमक वंशियोंकी, जिन जिन सेनाओंके सहारे हम लोगोंसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं, उसको तुम मुझसे वर्णन करो।

वैशम्पायन मुनि बोले, कि सञ्जय कौरवोंकी सभामें धृतराष्ट्रके प्रश्नोंको सुनकर, कुछ सोचकर बारम्बार कठिनतासे लम्बी सांस लेते हुए दैवात् मूर्च्छित हो गये! तब सभाके बीच कौरवोंके समीप बैठे हुए महाराज धृतराष्ट्रसे विदुरने कहा, कि हे महाराज! सञ्जय मूर्च्छित होकर पृथ्वीमें गिरके बुद्धिहीन और चेतरहित होनेसे कुछ बात नहीं कह सकते हैं।

धृतराष्ट्र बोले, सञ्जयने महारथ कुन्तीपुत्रोंसे भेंट की थी। मालूम होता है, कि उन पुरुषव्याघ्रोंने इनके चित्तको बहुत उत्तेजित कर दिया है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, सञ्जय कौरवोंसे आश्वासित होकर सावधान हुए और उठकर सभामें कौरवोंके समीप महाराज धृतराष्ट्रसे कहने लगे, हे राजेन्द्र! मैंने महारथ पाण्डवोंको मत्स्यराजके मन्दिरमें ठहरे हुए प्रवासके कारण शरीरसे कृश अवलोकन किया है। हे महाराज! पाण्डवोंने जिन लोगोंके सहित आपसे युद्ध करनेका निश्चय किया है, उनका नाम सुनिये। वह बुद्धिमान धृष्टद्युम्नके सहित आपसे युद्ध करनेकानिश्चय करते हैं। जो धर्म्मात्मा काम, क्रोध, लोभ, मोह, भयाओर अर्थसे भी कभी सत्यको नहीं छोड़ते, धर्म्मात्माओंमें श्रेष्ठ महात्मा जो धर्म्म विषयमें प्रमाण स्वरूप हैं, उन अजातशत्रु युधिष्ठिरके वशमें पाण्डव लोगोंने आपसे युद्ध करनेका किया है! जिसके बाहुबलके समान पृथ्वीमें कोई भी वीर विद्यमान नहीं है, जिस धनुर्द्धारीने सब राजाओंको अपने वशमें किया था, जिन्होंने काशी मगध, अङ्ग और कलिङ्ग देशवासियोंको युद्धमें जीता था, उसी भीमसेनके सहित पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। जिसके बलवीर्य्यके प्रभावसे युधिष्ठिरादि चार मुख्य मनुष्य-श्रेष्ठ वीर जतुगृहसे सहसाभूमिके रास्ते

निकाले गये थे, जिन्होंने मनुष्य-भक्षी हिड़म्ब राक्षससे उन लोगोंको बचाया था, उसी भीमसेनके सहित पाण्डव तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। सिन्धुराज जयद्रथने जब द्रौपदीको हरण किया था, उस समय जिस कुन्तीपुत्र वृकोदरने उसे छुड़ाया था, और जिन्होंने वारणावत नगरमेंसे प्रायः जलते हुए सब पाण्डवोंको मुक्त किया था, पाण्डव लोग उसी भीमसेनके सहारे तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। द्रौपदोकी प्रीतिको पूरी करनेके निमित्त जिन्होंने महा भयङ्कर गन्धमादन पर्व्वतके शिखर पर जाकर क्रोधवश नामक राक्षसोंको मारा था, जिसकी दोनों भुजाओंमें दश-हजार हाथियोंका बल है, उसी भीमसेनके सङ्ग पाण्डवोंने तुमसे युद्ध करनेका निश्चय किया है। जिस वीरने पहिले अग्निको तृप्त करनेके निमित्त कृष्णकी सहायतासे इन्द्रको जीत लिया था; जिसने साक्षात शूलधारी उमापति महादेवको युद्धसे प्रसन्न किया था, जिस धनुषधारीने सब राजाओंको वशीभूत किया था, उसी अर्ज्जुनको सङ्ग लेकर पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। जिन्होंने म्लेच्छोंसे भरे हुए पश्चिम दिशाको जीत कर उन्हें अपने वशवर्त्ती किया था, वेही विचित्र-वीर नकुल वहांपर योद्धारूपसे निश्चित किये गये हैं। हे कुरुश्रेष्ठ! पाण्डवोंने उसी धनुर्द्धारी बीरबर सुकुमार और सुन्दर माद्रीपुत्र नकुलके सहित तुमसे युद्ध करनेका निश्चय किया है। जिन्होंने काशी, मगध, अङ्ग और कलिङ्ग देशोंको पहिले युद्धमें जीता था, उसी सहदेवके सहित पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। हे राजन्! पृथ्वीमें अश्वत्थामा, धृष्टकेतु, रुक्म और प्रद्युम्न जिसके बलके समान हैं, माद्रीके आनन्दवर्द्धन उसी पाण्डवोंके छोटे-भ्राता सहदेवके सङ्ग तुम्हे महा भयङ्कर युद्ध करना होगा। हे भरतर्षभ! जिसने पहिले काशीराजकी कन्या होकर मरण पर्य्यन्त भीष्मके बधकी इच्छा करके कठिन तपस्या की थी, अनन्तर पाञ्चाल राजाके मन्दिरमें कन्या रूपसे जन्म लेकर दैवात् पुरुषत्वको पाया है, जो स्त्री और पुरुषोंके सब गुण और अवगुणोंको भली भांति जानते हैं, युद्धदुर्म्मद जो पाञ्चालपुत्र कलिङ्गराजको युद्धके निमित्त मिले थे, उसी महाधनुषधारी उग्रमूर्त्ति शिखण्डीके सहित पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। भीष्मके मारनेके निमित्त बनके यक्षने जिसको स्त्रीसे पुरुष बनाया है, उसी कालके समान शिखण्डीके सङ्ग पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। केकय देशीय महाधनुर्द्धारी और वर्म्मसे युक्त शूरवीर जो पांच भाई हैं, उनके सङ्ग भी पाण्डवलोग तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। जो लम्बी भुजावाले, शीघ्र अस्त्र चलानेमें निपुण, धैर्य्यवन्त और सत्य बिक्रमी हैं, उस वृष्णिवीर युयुधानके सहित पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। जो बल, वीर्य्यमें कृष्णके समान और इन्द्रिय निग्रहमें युधिष्ठिरके तुल्य हैं, उसी अभिमन्युके सहित पाण्डवोंने तुमसे युद्ध करनेका निश्चय किया है। अज्ञात-वासमें जिन्होंने पाण्डवोंकी रक्षा की थी, उसी महात्मा विराटके सङ्ग तुमको युद्ध करना होगा। काशीपति महारथ राजा वाराणसी धाममें प्रतिष्ठित हैं, वे भी पाण्डवोंके योद्धा हुए हैं; पाण्डवोंने उन्हीं काशीराजके सङ्ग आपसे युद्ध करनेका निश्चय किया है। महायशस्वी, महावीर्य्यवान, महारथ शिशुपालपुत्र धृष्टकेतु क्रुद्ध होनेसे संग्राममें कालस्वरूप होजाते हैं, जिन्होंने एक अक्षौहिणी सेनाके सहित युधिष्ठिरको सहारा दिया है, उन्हीं चेदीराजके सङ्ग पाण्डव लोग तुमसे युद्धमें मिलनेका निश्चय करते हैं। बालक होकर भी युद्धमें दुर्जय, विषैले सर्पकी तरह भयङ्कर

मूर्त्तिको धारण करनेवाले, द्रौपदी-पुत्रोंके सहित पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। देवताओंमें इन्द्रके समान जिन्होंने पाण्डवोंको सहारा दिया है, पाण्डवलोग उन्हीं कृष्णके सङ्ग आपसे युद्धमें मिलना निश्चय करते हैं। हे भरतर्षभ! उन्होंने चेदिपतिके भ्राता शरभ और करवर्षके सहित भी आपसे युद्ध करनेका निश्चय किया है। जरासन्धके पुत्र सहदेव और जयत्सेन पाण्डवोंके युद्धकार्य्यके निमित्त निश्चित हुए हैं। अत्यन्त बलसमूहसे घिरे हुए महा तेजस्वी द्रुपदराज भी पाण्डवोंके निमित्त अपने प्राणको समर्पण करके युद्धके निमित्त तैयार हैं। इनको छोड़कर और भी पूरब तथा उत्तर देशके दूसरे बहुतसे राजाओंका सहारा लेकर धर्म्मराज युधिष्ठिर सग्रामके निमित्त तैयार हैं।

५० अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! तुमने जिन लोगोंका नाम बतलाया है, वे सबही महा-उत्साहसे भरे हैं; परन्तु वे सब लोग मिलके एक तरफ रहें; और भीम उन सब लोगोंके समान अकेलाही एक ओर रह सकता है। हे तात! जैसे व्याघ्रसे, महा-रुरुको भय लगता है; तैसेही भीमसेनसे मुझे अत्यन्त भय लगता है। सिंहसे जैसे पशुओंको डर लगता है, उसी भांति वृकोदरसे भयभीत होकर लम्बी और गर्म्म सांस लेते हुए मुझे सारी रात नींद नहीं आती। उस इन्द्रके समान तेजस्वी महाबाहु भीमके सङ्ग युद्धमें उसके बलको सह सके, ऐसा वीर मैं इस सेनाके बीचमें किसीको नहीं देखता। वह अमर्षण, दृढ़ बैर, टेढ़ा स्वभाव, बहुदर्शी, महारव, महावेग, महा-उत्साह, महाबाहु और महाबलसे युक्त कुन्तीपुत्र कुरु-श्रेष्ठ भीमसेन, युद्धमें दण्डधारी यमराजके समान गदा धारण करके अत्यन्त मोहग्रस्त मेरे पुत्रोंको नाश कर देगा। मैं अपने अन्तःकरणसे ब्रह्म-दण्डके समान उसकी लोहमयी अष्ठकोनसे युक्त सोनेके तारोंसे खिचो हुई भयङ्कर गदाको देख रहा हूं। युवा अवस्थाका बल पाकर जैसे सिंह मृगोंके झुण्डमें घूमता है, वैसेही भीम-सेनभी मेरी सेनामें घूमेगा। वह बहुत भोजन करनेवाला भीमसेन, अकेलाही बाल्य-अवस्थामें भी मेरे पुत्रोंके ऊपर कठिन पराक्रम प्रकाश करता था। बाल-अवस्थामें भी वह युद्धमें प्रवृत्त होकर मतवाले हाथीके समान दुर्य्योधन आदि मेरे पुत्रोंको मर्द्दन करता था, उसको स्मरण करनेसे अबभी मेरा हृदय कांपता है। हमारे पुत्र सदाही उसके बलको देखकर दुःखी रहते थे, इससे वही महापराक्रमी भीमसेन गृहविच्छेदका कारण हुआ है। मुझे ऐसा दीखता है कि भीम क्रोधसे मूर्च्छित होकर युद्धमें मनुष्य, हाथी, घोड़े और सम्पूर्ण सेनाको ग्रास कर रहा है। हे सञ्जय! अस्त्रोंके चला-नेमें द्रोणाचार्य्य और अर्जुनके समान, शीघ्र चलनेमें वायुके समान; और क्रोधमें रुद्रके समान युद्ध दुर्म्मद शूरवीर भीमसेनको कौन मनुष्य संग्राममें मार सकता है? उस शत्रु-संहारकारी भीमने उसी समयमें मेरे पुत्रोंको नहीं मार डाला, इसीको मैं अपना परम लाभ समझता हूं। जिस भीमने पहिले महा परा-क्रमी यक्ष और राक्षसोंका बध किया है, उसके बल और वेगको मनुष्य कैसे सह सकेंगे? हे सञ्जय! वह बालक अवस्थामेंभी कभी मेरे वशमें नहीं हुआ था, तब इस समय मेरे कुमार्गी पुत्रोंसे क्लेश पाकर अब कैसे मेरे वशमें होगा? वह अत्यन्त निठुर और महाक्रोधी है। यदि हारभी जायगा, तौभी कभी न नवेगा, जो भीम क्रोधसे भरा हुआ सर्व्वदा टेढ़ी चालसे देखता रहता है, और जिसकी दोनों भौंहोंका मध्यभाग सिकुड़ा रहता है, वह किस प्रकारसे शान्ति अवलम्बन कर सकता है? भीमका जैसा

बल, वीर्य्य और रूप है, उसे मैंने पहिलेही उसकी बालक अवस्थामें व्यासजीके मुखसे यथार्थ और दृढ़निश्चय पूर्व्वक सुना था, कि "भीम अत्यन्त पराक्रमी, महाबली, गौरवर्ण, शाल-वृक्षके समान ऊंचा, कदमें घोड़े और हाथि-योंसेभी अधिक है। बहुत धीमे स्वरसे बोलने-वाला और मधुवर्णके समान उसके नेत्र हैं। वह प्रचण्ड-मूर्त्ति महा पराक्रमी भीमसेन युद्धमें क्रोधित होकर लोहमयी गदा लेकर-रथ, हाथी, घोड़े और मनुष्योंको मारेगा, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। हे तात! पहिले मैंने उसके प्रतिकूल आचरण करके उस महाक्रोधी प्रहार करनेवालोंमें श्रेष्ठ भीमका अपमान किया है, इस समय मेरे पुत्र लोग उसकी सोनेसे खिची हुई लोहमयी अठकोनी महाभयङ्करी गदाके प्रहारको कैसे सह सकेंगे? हे तात! मेरे पुत्र लोग महाभयङ्कर असंख्य बाणोंसे वेगवान भीमसेन रूपी महा-समुद्रसे कैसे पार होंगे? मैं बार बार अपने पुत्रोंको निवारण करता हूं, परन्तु वे अभिमानी महामूढ़ निर्बुद्धि लोग कुछभी नहीं मानते। ये लोग केवल मधुहीको देखते हैं, किन्तु उसके निकटहीमें जो महा भयकी सम्भावना है उसको कुछभी नहीं विचारते हैं। जो लोग उस नर-रूपी यमराजसे युद्ध करनेको जायंगे, वे लोग भीमसे ऐसे मारे जायंगे जैसे सिंहसे हरिणोंका समूह मारा जाता है। हे तात! सोनेके तारोंसे खिची हुई, चार हाथ लम्बी, छः कोनोंसे युक्त, बहुत तेजसे भरी हुई, दुःखको उत्पन्न करने-वाली गदाको चलनेपर मेरे पुत्र उसके वेगको कैसे सह सकेंगे? जिस समय भीम गदा लेकर हाथियोंके मस्तकको तोड़ेगा, और भयङ्कर शब्द करता हुआ हाथियोंकी ओर दौड़ेगा, तथा रथके मार्गको रोकके मुख्य मुख्य वीरोंको मारेगा, उस समय जलती हुई अग्निके समान उसके समीपसे क्या कोई मनुष्य छुटकारा पावेगा? महाबाहु भीम मेरी सेनाको भगाकर मार्ग बनावेगा और गदा हाथमें लेकर नाचता हुआ प्रलयकालके समान दिखलावेगा। हे सञ्जय! फूले हुए वृक्षोंके तोड़नेवाले मतवारे हाथीकी भांति भीमसेन संग्राममें मेरे पुत्रोंकी सेनामें प्रवेश करेगा, रथोंको रथी और सार-थीसे सूना कर देगा; घोड़े, हाथी और रथकी ध्वजाओंको काटेगा, तथा रथी और गजारोहियोंको पूरी तरहसे पीड़ित करेगा; वह हमारी सेनाको इस प्रकारसे भगा देगा, जैसे गङ्गाके बढ़े हुए प्रवाहमें किनारेके सब वृक्ष टूट टूटके बह जाते हैं। जिस वीर भीम-सेनने कृष्णकी सहायतासे जरासन्धके अन्तःपुरमें जाकर उसको मारा था; उस भीमके डरसे भयभीत होकर हमारे पुत्र, नौकर और दूसरे राजा लोग अवश्यही इधर उधर भाग जायंगे। हे सञ्जय! मगधराज बलवानोंमें श्रेष्ठ बुद्धि-मान् जरासन्धने सब पृथ्वीके राजाओंको अपने वशमें करके उन्हें पीड़ित किया था। भीष्मके प्रतापसे कौरव, नीतिज्ञ अन्धक और वृष्णी लोग जो उसके वशवर्त्ती नहीं हुए, यह केवल दैवकी कृपाही समझनी चाहिये। महाबाहु भीमसेनने इस प्रकारके महावीरके स्थानमें जाकर, विना कुछ शस्त्र ग्रहण कियेही केवल बाहुबलके सहारेसे उसे मारा था, इससे बढ़के दूसरी और कौनसी बात होगी? भीमसे कौन अधिक बलवान हो सकता है? हे सञ्जय! युद्धके समयमें वह महाविषैले सर्पकी भांति विष उगलता हुआ, बहुत दिनसे रुके हुए अपने बल और तेजपुञ्जको मेरे पुत्रोंके ऊपर अवश्य त्याग करेगा। जैसे देवतोंके राजा इन्द्र वज्र लेकर दानवोंकी सेनाका नाश करते हैं, वैसेही भीमसेनभी गदा लेकर मेरे पुत्रोंका नाश कर देगा; न सहने योग्य, रोकनेसे न रुकने-वाला, टेढ़ा-स्वभाव, वेगवान, महापराक्रमी, लाल नेत्रवाले भीमसेनको, जैसे मैं अपने सम्मुख

आया हुआ देखता हूं। वह वृकोदर गदा, धनुष, रथ, कवचसे रहित होनेपरभी, यदि अपनी दोनों भुजाओंके बलसेही युद्धमें प्रवृत्त हो, तौभी कोई बलवान पुरुष उसके अगाड़ी नहीं ठहर सकेगा। भीष्म, द्रोण और ब्राह्मण-श्रेष्ठ कृपाचार्य्यभी मेरी भांति बुद्धिसेयुक्त भीमके बलको जानते हैं। ये मनुष्योंमें श्रेष्ठ महावीर पुरुष युद्धमें मरनेसे श्रेष्ठ व्रत समझते हैं, इस निमित्त युद्धकी तैयारी करके मेरी सेनाके अगाड़ी खड़े होंगे। हे सञ्जय! प्रारब्ध सब ठौर सबकोही कम, समान अथवा अधिक बलवान है, विशेष करके पुरुषोंके लिये तो मुख्यही है। क्योंकि मैं पाण्डवोंकी युद्धमें निश्चय जय होगी, इस बातको जानता हूं; तौभी अपने पुत्रोंको नहीं रोक सकता हूं। भीष्म आदि ये सब महाधनुर्धारी वीर लोग इन्द्रसे प्रगट हुए पुराने मार्ग अर्थात् युद्धकर्म्मको करके राजाओंके योग्य यश और कीर्त्तिकी रक्षा करते हुए, महासंग्राममें अपने प्राणोंको छोड़ेंगे। हे तात! इन लोगोंके समीप जैसे मेरे पुत्र हैं, वैसेही पाण्डव लोगभी हैं, ये सब लोग भीष्मके पौत्र (नाती) और द्रोणाचार्य्य तथा कृपाचार्य्य-के शिष्य हैं; तब ये तीनों बूढ़े महात्मा पुरुष मेरे यहांसे जो कुछ अपनी अभिलषित वस्तु पाते वा पाचुके हैं, उसके निमित्त अपनी स्वाभाविक उदारतासे युद्धमें अवश्यही प्रत्युपकार करनेके निमित्त पुरुषार्थ करेंगे। क्योंकि पण्डित लोग कहते हैं, कि क्षत्रियधर्म्मको ग्रहण करनेवाले शस्त्रधारी क्षत्रियोंको युद्धमें मरनाही सबसे उत्तम है। इससे हे सञ्जय! जो सब लोग पाण्डवोंसे युद्ध करनेकी इच्छा करते हैं, उनकेही निमित्त मैं शोक करता हूं। अहो! विदुरने मुक्तकण्ठसे कहकर जिस भयको सूचना दी थी, वही भय अब आकर उपस्थित हुआ है। हे तात! ज्ञान दुःखको नाश करनेवाला है, यह मेरे विचारसे सिद्ध नहीं होता है; क्योंकि यह आनेवाला भावी दुःख ज्ञानकोभी मात करता है। लौकिक वृत्तान्तों-को जाननेवाले जीवन्मुक्त ऋषि लोग भी जब सुखमें सुखी और दुःखमें दुःखी होते हैं, तब पुत्र, कलत्र, पौत्र, राज्य और बन्धुबान्धवोंसे युक्त और नाना विषयोंमें सहस्रों भांतिसे आसक्त रहकर मैं जो दुःखोंमें दुःखी होऊंगा इसमें कौनसी विचित्रता है? यह जो बड़ा भारी सन्देह उत्पन्न हो रहा है, उसमें क्या मेरा कल्याण होगा? मैं पूरी रीतिसे अनुसन्धान करकेभी केवल अन्तमें कौरवोंका विनाशही देखता हूं। जुवेका खेलनाही कौरवोंके लिये महाविपदमें पड़नेका कारण मालूम होता है। ऐश्वर्य्य चाहनेवाला, मन्दबुद्धि दुर्योधनने केवल लोभहीके वशमें होकर इस पाप कर्म्मको कराया था। मुझे मालूम होता है, यह शीघ्र अदल बदल होनेवाले कालचक्रका घूमनाही धर्म्म है। इस कालचक्रमें मैं ऐसा फंस रहा हूं कि उससे छुटकारा नहीं पा सकता। हे सञ्जय! इस समय मैं कहां जाऊं ..ा करूं? किस प्रकारके कार्य्योंको करूं? ये मन्दबुद्धि कौरव लोग शीघ्रही कालके वशमें होकर नष्ट होजायंगे। हे तात! जब मेरे सौ पुत्र मार जायंगे, तब मैं परवश होकर कैसे स्त्रियोंके रोदनको सुनूंगा। हा! किस प्रकारसे मेरी मृत्यु होगी? सन्ध्या कालमें वायुकी सहायतासे बढ़ी हुई अग्नि जिस प्रकारसे सूखी हुई तृण और लकड़ियोंको भस्म कर देती है, वैसेही भीमसेन अर्ज्जुनके साथ मिलकर मेरे पुत्रोंको मार डालेगा।

५१ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, जिसकी झूठी बात कभीभी सुननेमें नहीं आती, और अर्ज्जुन ऐसे जिसके वीर योद्धा हैं, उस युधिष्ठिरको तीनो भुवनके राज्यकी भी प्राप्ति हो सकती है।

मैं ऐसे किसी मनुष्यकोभी नहीं देखता जो गाण्डीवधारी अर्ज्जुनके विरुद्ध अस्त्र धारण करके उसका सामना करनेमें समर्थ हो। जिस समय अर्ज्जुन गाण्डीव धनुषको लेकर प्रकाशमान हृदयको छेदनेवाले सब वाणोंको छोड़ने लगेगा, उस समय कोईभी उसके समान बलवान होकर उसे नहीं रोक सकेगा। सब शस्त्रोंके जाननेवाले बलवानोंमें श्रेष्ठ, युद्धमें कभी पीछे न हटनेवाले, बल और वीर्य्यसे भरे हुए, पुरुषोंमें श्रेष्ठ द्रोणाचार्य्य और कर्ण यदि उसके सन्मुख संग्राममें गमन करें, तो जगतमें हमारी सेनाके जीतनेकी सबको आशा होगी; पर यथार्थमें हमारी विजय न होगी; क्योंकि कर्ण बहुतही दयालु शापग्रस्त और असावधान है, और द्रोणाचार्य्य बूढ़े तथा दोनों ओरके गुरु हैं। इधर अर्ज्जुन महाबलवान, दृढ़ धनुषधारी और सावधान चित्त हैं। ये सब लोग शूरवीर और सब, शस्त्रोंके जाननेवाले, तथा बहुतही यश और बड़ाईको पाये हुए हैं। इससे इन लोगोंका बहुतही कठिन युद्ध होगा, और ये कभी भी पीछे न हट सकेंगे। ये लोग देवताओंके ऐश्वर्य्यकोभी त्याग सकते हैं, पर विजयको नहीं छोड़ सकते। इससे द्रोण, कर्ण, अथवा अर्ज्जुनके मारे जानेसे युद्धमें शान्ति होनी सम्भव है, पर अर्ज्जुनको मारनेवाला तथा जीतनेवाला कोईभी विद्यमान नहीं है। जो मनुष्य मेरे मन्दबुद्धि पुत्रोंके निमित्त अपने सब उद्योग और सेनाकी सहायतासे युद्ध करनेके निमित्त तैयार है, उसके क्रोधकी शान्ति इस समय कैसे हो सकती है? और दूसरे बहुतसे मनुष्य अस्त्र विद्याको जानते हैं, सबको जीतते हैं, और विजयी कहलाते हैं; पर अर्ज्जुनहीकी अकेली (इकसर) विजय सुननेमें आती है। हे सूत! तैंतीस वर्ष बीता होगा, कि अर्ज्जुनने खाण्डव वनमें अग्निको तृप्त किया था, और उसी समयमें सब देवतोंकोभी जीता था; अधिक क्या कहूं, मैंने कहीं भी उसकी हार नहीं सुनी। हे तात! समान शील और उत्तम चरित्रसे भरे हुए कृष्ण जिसके युद्धमें सारथी बनेंगे, इन्द्रके विजयकी तरह उसको अवश्यही जय होगी। सुनता हूं कि अर्ज्जुन रथी, कृष्ण उसके रथपर सारथी और रोदेसे चढ़ा हुआ गाण्डीव धनुष यह तीनों तेजसे भरे हुए पदार्थ एकही स्थानपर मिले हैं। हम लोगोंमें वैसा धनुषभी नहीं है; और योद्धाभी नहीं है। परन्तु दुर्य्योधनके वशवर्त्ती मन्दबुद्धि, भाग्यहीन लोग इन बातोंको नहीं जानते हैं। हे सञ्जय! शिरपर गिरनेसे जलती हुई बिजलीभी बाकी छोड़ती है, पर अर्ज्जुनके धनुषसे छूटे हुए बाण कुछभी शेष नहीं रहने देते। मुझको प्रत्यक्षही ऐसा दीखता है, कि अर्ज्जुन अपने बाणोंको छोड़ता हुआ हमारी सेनाका वध कर रहा है, और बाणोंकी अत्यन्त वर्षा करके देहसे शिरको काट काट गिरा रहा है; गाण्डीव धनुषसे छुटे हुए अग्निके समान सब बाण तेजसे भरे हुए मेरी सेनाको जला रहे हैं; और अर्ज्जुनके रथके शब्दको सुनकर हमारी सेना मारे डरके व्याकुल होकर सब दिशाओंमें इधर उधर भाग रही है। जिस प्रकारसे प्रचण्ड अग्नि जलती हुई बड़े वेगसे तृण आदिको जला देती है, वैसेही अर्ज्जुनके अस्त्रोंको अग्निभी मेरे पुत्रोंको जला देगी। हे तात। आततायी अर्ज्जुन जब अनेक चोखे और उत्तम पानीसे बुझे हुए बाणोंको छोड़ता हुआ विधाताके भेजे हुए सबके नाश करनेवाले कालके समान न सहने योग्य होजायगा, जब सुननेमें आवेगा कि कौरवोंके घर, युद्धके आगे और उनके चारों ओर अशुभ फल देनेवाली घटनायें हो रही हैं, तभी कौरवोंके विध्वंसका समय आवेगा।

५२ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, बलवान पाण्डव लोग जैसे सब कार्य्योंमें निपुण हैं, वैसेही उनके सहायक लोगभी अपने प्राणांको अर्पण करके युद्ध करनेको तैयार हैं। हे तात! शत्रुओंकी ओरके पाञ्चाल केकय, मत्स्य, मगध आदि देशोंके बलवान राजाओंका वृत्तान्त जो तुमने अभी वर्णन किया है, वे इच्छा करनेसे इन्द्र समेत इस पृथ्वीको अपने वशमें कर सकते हैं; जितेन्द्रिय पुरुषोंमें श्रेष्ठ श्रीकृष्ण उनके विजयके निमित्त निश्चय करते हुए वहांपर विराजमान हैं। जिन्होंने थोड़ेही समयमें अर्ज्जुनके समीपमें सब शस्त्र विद्याओंको पढ़ा था, वही शिनिवंशो सात्यकी बाणोंको बीजकी भांति युद्धमें बोवेंगे। पाञ्चालराज-पुत्र, कठिन कर्म्मोंको करनेवाला धृष्टद्युम्नभी मेरी सेनासे युद्ध करेगा। युधिष्ठिरके क्रोध और अर्ज्जुनके पराक्रम तथा नकुल और सहदेवसे भी मुझे बहुतही डर लगता है। हे सञ्जय! वे मनुष्येन्द्र जिस समय अमानुषी कर्म्मोंको करते हुए शरजालका विस्तार करेंगे, उस समय मेरी सेना किसी प्रकारसे भी उससे नहीं निस्तार पा सकेगी। इसी निमित्त मैं इतना आक्षेप कर रहा हूं। पुरुषश्रेष्ठ पाण्डुनन्दन युधिष्ठिर देखनेके योग्य; मनस्वी लक्ष्मीवान, ब्रह्मतेजसे युक्त, मेधावी, सुकृतबुद्धि, धर्म्मात्मा मित्र, नौकर, युद्ध करने योग्य वीरोंसे युक्त, महारथ, महावीर सहोदर भाइयों ससुर वर्गसे उत्पन्न धृष्टद्युम्न आदिक समेत धैर्य्यशाली, सरल स्वभाव, विनय सम्पन्न, लज्जावान, सत्यपराक्रमी बहुत शास्त्रोंको जाननेवाले, कृतात्मा, वृद्धसेवी और जितेन्द्रिय हैं। उस सब गुणसे पूर्ण जलते हुए प्रचण्ड अग्निके समान पाण्डवरूपी अग्निमें कौन बुद्धिहीन और चेतरहित पुरुष पतङ्गकी भांति गिर सकता है? जलनेवाली वस्तुओंके मिलनेसे जैसे थोड़ी अग्निभी प्रबल होजाती है, वैसेही तपस्यासे कृश होनेपर भी ऊंचे स्वभाववाले राजा युधिष्ठिरको मैंने कपट व्यवहारोंसे ठगा है; इस लिये वे युद्धसे मेरे बुद्धिहीन पुत्रोंका नाश कर देंगे। हे कौरवगण! उन लोगोंके सङ्ग युद्ध न करनाही मैं कल्याणदायक समझता हूं, इस समय तुम लोगभी अच्छी प्रकारसे मालूम कर लो। युद्धमें सम्पूर्ण कुलका नाश हो जायगा, इससे यदि युद्ध न करना तुम लोगोंको उत्तम जंचता हो, तो मैं शान्तिके निमित्त यत्न करूं। यही मेरी बुद्धिकी सीमा और अन्त है, और इसीसे मेरे मनमें शान्ति हो सकती है। मुझको दुःख पाता हुआ देखकर युधिष्ठिर कभी भी उपेक्षा न करेंगे; क्योंकि वह जब अधर्म्मसे कलह उत्पन्न होनेके विषयमें मुझेही कारण कहके निन्दा करते हैं, तब प्रार्थना करनेसे कभी झगड़ेमें प्रवृत्त न होंगे।

५२ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, हे महाराज! आपने जो कुछ कहा वह सबही सत्य है। युद्ध होनेसे गाण्डीव धनुषसे जो क्षत्रियोंका नाश होगा, वह प्रत्यक्षही दीख पड़ता है; परन्तु सब दिन धीर स्वभावसे रहकर और अर्ज्जुनके सब तत्वोंको जानकरभी, जो आप पुत्रोंके वशमें होकर चलते हैं, इसीको मैं नहीं समझ सकता हूं। हे भरतर्षभ! आप पहिलेहीसे पाण्डवोंको ठगते चले आते हैं, इससे सब दिन अपराध करके अब यह समय आपके विलाप करनेका नहीं है। हे महाराज! जो ज्येष्ठतात, श्रेष्ठ सुहृद और पूर्ण रीतिसे सावधान चित्त हैं, उनका हित-साधन करनाही सब भांतिसे कर्त्तव्य कर्म्म है। बुरा करनेवाला मनुष्य कभीभी गुरु नहीं कहा जाता। जुएके समयमें आपके पाण्डवोंको हारा हुआ सुनकर "यह जीता गया, यह मिला", कहकर बालककी भांति हंसी की थी, और उन लोगोंका बहुतसी कड़वी बातोंसे तिरस्कार

होते सुनकरभी आपने उपेक्षा की थी; आपने समझा था, कि मेरे पुत्रोंने सम्पूर्ण राज्यको जीत लिया, परन्तु थोड़ेही दिनोंमें कुलका नाश होगा, इसे आपने न विचारा। हे महाराज! जङ्गलोंसे युक्त कुरुराज्य आपका पैतृक राज्य है, उसके अतिरिक्त आपने वीरोंसे उपार्जित समस्त पृथ्वीका राज्य पाया है; पाण्डवोंने अपने बाहुबलसे पृथ्वी उपार्ज्जन करके आपको समर्पण किया था, परन्तु आप अपने मनसे समझते हैं कि मैंने स्वयं यह सब राज्य प्राप्त किया है। हे राजेन्द्र! पाण्डव लोग जब जुवेमें हारकर बनको जानेके निमित्त तैयार हुए, तब आपने बालककी भांति बारबार हंसी की थो; इसीसे अर्ज्जुनने आपके पुत्रको गन्धर्व्वराजके हाथमें पड़ा हुआ महा विपतसमुद्रमें डूबता देखकर गन्धर्बोंसे युद्ध करके दुर्य्योधनको छुड़ाया था। हे राजन्! अर्ज्जुनके वाणोंकी वर्षासे समुद्रभी सूख सकता है, और मनुष्योंकी तो बातही क्या है? हे महाराज! वाण चलानेवालोंमें अर्ज्जुन, धनुषोंमें गाण्डीव, सम्पूर्ण लोकोंमें कृष्ण, चक्रोंमें सुदर्शन और ध्वजाओंमें अर्ज्जुनके रथमें बन्दरवाली ध्वजा श्रेष्ठ है। वह ध्वजाधारियोंमें मुख्य, सफेद घोड़ोंसे युक्त, कपिध्वजासेयुक्त, रथके सहित, काई एक तेजोंके सङ्ग उद्यत होके कालचक्रके समान हम लोगोंको निःसन्देह मारेगा। हे भरतर्षभ! भीम अर्ज्जुन जिसके मुख्य वीर योद्धा हैं, वही इस सम्पूर्ण पृथ्वीका सबसे मुख्य राजा है, और उसीकी यह समस्त पृथ्वी है। हे राजन्! तुम्हारी सेनाको भीमसेनके हाथसे घायल होकर भागती हुई देखके दुर्य्योधन आदि कौरव अवश्यही नाशको प्राप्त होंगे। हे राजेन्द्र! तुम्हारे पुत्र और उनके अनुयायी सब राजा लोग भीम अर्ज्जुनके भयसे डरकर कभी युद्धमें विजय न कर सकेंगे। मत्स्य, पाञ्चाल, केकय, शाल्व, सूरसेन आदि आपके अनुयायी इस समय नहीं हैं। अब वे आपके विरुद्ध हैं, क्योंकि वे लोग युधिष्ठिरकी ओर हैं, और उनकी उपासना करते हैं। उनके ऊपर उन लोगोंकी भक्ति है, इसी कारणसे वे लोग सदाही आपके पुत्रोंके विरुद्ध आचरण करते हैं। हे महाराज! सब प्रकारसे धर्म्मात्मा, मारनेके अयोग्य पाण्डवोंको जिस पुरुषने बुरे कर्म्मोंसे दुःख और क्लेश दिया है, और इस समय भी उनके सङ्ग शत्रुता कर रहा है, उसी आपके पुत्र पापबुद्धि दुर्य्योधनको अनुचरोंके सहित सब भांतिसे वशीभूत करनाही मुख्य कर्त्तव्य कार्य्य है; और उनके निमित्त शोक करना आपको उचित नहीं है। पासा खेलनेके समय भी बुद्धिमान् विदुर और मैंने आपसे यही वचन कहा था। हे राजेन्द्र! आप जो असमर्थकी भांति पाण्डवोंके प्रति इस प्रकारका विलाप करते हैं, यह सबही व्यर्थ है।

५४ अध्याय समाप्त।

दुर्य्योधन बोले, हे महाराज! आप कुछभी भय न कोजिये, और हम लोगोंके निमित्त शोकभी मत कोजिये। हे प्रजानाथ! हम लोग शत्रुओंके जीतनेमें खूबही समर्थ हैं। हे भरतर्षभ! जिस समय पराये राज्यको जीतनेवाले मधुसूदन कृष्ण महाबल चक्रसे युक्त होकर बनवासी पाण्डवोंके निकट गये थे; और उनके पीछे केकय, धृष्टकेतु, द्रुपद, धृष्टद्युम्न तथा अन्य राजा लोग भी जाकर इकट्ठे हुए थे;—जब कृष्णके सङ्ग सब राजालोगोंने इन्द्रप्रस्थके समीप इकट्ठे होकर सब कौरवोंके सहित आपकी निन्दा करी थी, और काले हरिणके चमड़ेको पहरनेवाले युधिष्ठिरकी उपासना करते हुए इष्ट मित्रोंके सहित आपके मूलच्छेदके अभिलाषी हुए थे; और उनको "फिरभी राज्यको लेना उचित है" ऐसी राय दो थी;—तब उस वृत्तान्तको सुनकर मैंने

कौरवोंके नाशसे भय-भीत होकर भीष्म, द्रोण और कृपाचार्य्यसे यह सब वृत्तान्त कहा था, कि हे महात्मन् ! मुझे मालूम होता है, कि पाण्डव लोग हम लोगोंके किये नियममें नहीं स्थित रहेंगे, क्योंकि श्रीकृष्ण हम लोगोंको जड़ सहित नाश करनेकी इच्छा करते हैं; मेरे विचारमें विदुरको छोड़कर और आप लोगोंके सहित सब कौरव मारे जायंगे; कुरुसत्तम धर्म्मात्मा धृतराष्ट्र भी बोध होता है, कि न मारे जायंगे। श्रीकृष्ण हमलोगोंका मूल सहित नाश करके यह सम्पूर्ण कुरुराज्य युधिष्ठिरको देनेकी अभिलाषा करते हैं। इस विषयमें हम लोगोंको क्या करना उचित है? क्या हम अधीनताई स्वीकार करें, अथवा पलायन करें, या प्राणकी आशाको छोड़के शत्रुके सङ्ग युद्ध करेंगे? शत्रुओंसे युद्ध करनेसे निश्चयही मेरी हार होगी, क्योंकि सब राजा लोग युधिष्ठिरके वशमें हैं, विशेष करके राष्ट्रके सब पुरुष हम-लोगोंपर विरक्त हुए हैं; मित्रलोग भी कुपित होगये हैं, राजालोग तथा अपने मनुष्य भी सब तरहसे मुझे धिक्कार दे रहे हैं। ऐसी अवस्थामें अवनति स्वीकार कर लेनेमें भी कुछ दोष नहीं है, क्योंकि सन्धि करना, सब दिनसे हमलोगोंमें प्रचलित है; परन्तु युद्धही करनेकी मेरी इच्छा है; तब जो प्रज्ञाचक्षु महाराज धृतराष्ट्र मेरे निमित्त महाक्लेश पावेंगे। उसी निमित्त मैं शोक कर रहा हूं; हे प्रजानाथ! आपके और सब पुत्र भी मेरे सङ्ग शत्रुओंके अवरोध करनेमें तत्पर हुए थे, सो बातभी आपको पहिलेहीसे मालूम है, - इसीसे वे महारथ पाण्डवलोग इष्ट मित्र और बन्धुवान्धवोंके सहित धृतराष्ट्रके कुलका नाश करके अपने वैरको समाप्त करेंगे।

हे तात! अनन्तर भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य और अश्वत्थामा मुझे बड़ी भारी चिन्तामें मग्न हुए देखकर बोले, हे परन्तप! यदि शत्रु लोग हम लोगोंसे विरोध करें, तो उसके निमित्त तुम कुछभी भय और शङ्का मत करो। युद्धमें खड़े होनेसे शत्रु लोग कभी भी हम लोगोंको पराजित नहीं कर सकेंगे। हम लोग अकेलेही सब राजाओंको जीतनेमें समर्थ हैं। सब लोग आवें, हम अपने तीक्ष्ण बाणोंसे उसके घमण्ड तोड़ देंगे। हे भारत! पहिले कुलश्रेष्ठ भीष्मने पिताके मरनेपर अत्यन्त क्रोध करके एकरथसे अकेलेही समस्त पृथ्वीके राजाओंको जीत लिया था, और महा क्रोधसे भरकर कितनेही भूपालोंका संहार किया था; इससे सब लोग डरकर भीष्मकी शरणमें आये थे। वह यही भीष्म हैं, यह हम लोगोंके सङ्ग मिलकर शत्रुओंको अवश्यही जीतनेमें समर्थ होंगे; इससे तुम अपने भयको दूर करो। इन महातेजस्वी महारथ पुरुषोंके बलका उस समय मुझको निश्चय हुआ था। हे राजेन्द्र! समस्त पृथ्वी उस समय शत्रुओंके वशमें थी, यह ठीक है; परन्तु अब वे लोग हमको जीत न सकेंगे। हे भरतर्षभ! शत्रुरूप पाण्डव इस समय सहायता रहित और बलहीन हुए हैं; और पृथ्वी इस समय मुझसे प्रतिष्ठित है। हे परन्तप! मैंने सब राजाओंको सम्मान और आदरसे अपनी ओर कर लिया है, वे लोग सुख, दुःख तथा सब कार्य्योंमें मेरे अनुगामी हैं। यह आप निश्चय जानिये कि मेरे निमित्त ये सब राजा लोग अग्निमें भी प्रवेश कर सकते हैं; और समुद्रमेंभी डूब सकते हैं; आपको भयसे दुःखी और दूसरेकी बड़ाई करते देखकर ये सब आपको पागल समझके हंसी करते हैं। हे कुरुसत्तम! इन भूपालोंमें हर एक वीर पाण्डवोंकी गतिको रोकनेमें समर्थ हैं। विचार पूर्व्वक देखिये; आपको सब कोई बड़ा समझते हैं; इससे आप अपने भावी भयको दूर कीजिये। मेरी समस्त सेनाको इन्द्रभी नहीं जीत सकते; वरन ब्रह्माभी यदि मेरी

सेनाका नाश किया चाहैं, तौभी हमारी सेनाको नाश न सकेंगे। हे प्रजानाथ! युधिष्ठिरने हमारी सेना और हमारे प्रतापसे भयभीत होकरही नगरकी आशा छोड़कर केवल पांच गांव मांगे हैं। हे भारत! आप जो भीमको बड़ा सामर्थी समझ रहे हैं, वह भी वृथा है, मेरे सम्पूर्ण प्रभावको आप नहीं जानते हैं, इसीसे ऐसा समझते हैं। गदायुद्धमें इस सारी पृथ्वी पर कोई भी मनुष्य मेरी समान नहीं है। गदायुद्धमें मुझे कोईभी आजतक नहीं हरा सका, और भविष्यमें भी नहीं जीत सकेगा। मैंने स्थिरचित्तसे गुरुके घरमें रहकर, अत्यन्त क्लेशोंको सहके सब युद्धविद्या सीखी है; इससे क्या भीम, क्या दूसरे मनुष्य, मुझे किसीसे भी भय नहीं है। मैं जब शिष्य होकर बलदेवजीकी उपासना करता था, उस समय उनको यह निश्चय हुआ था, कि "गदायुद्धमें दुर्य्योधनकी समान दूसरा कोईभी नहीं है।" सम्प्रति मैं युद्ध करनेमें हलधारी बलदेवकी समान हूं, और बलमें मुझसे अधिक कोईभी नहीं है। भीम युद्धमें मेरी गदाकी चोटको कभीभी नहीं सह सकता। हे पृथ्वीनाथ! यदि मैं क्रोधित होकर एकबारभी भीमके ऊपर अपनी गदाका प्रहार करूं, तो उसी प्रहारसे उसे यमपुरीमें पहुंचा सकता हूं। हे राजेन्द्र! भीमसे भयकी बात तो दूर है, मैं सदाहीसे उसको गदा लिये हुए, देखनेकी इच्छा करता रहता हूं। क्योंकि यही मेरी सब दिनकी मनोकामना और मनोरथ है। युद्धमें मेरी गदाकी चोटसे भीम अवश्यही मरकर पृथ्वीमें गिर पड़ेगा। मेरी गदाकी चोट एकबार पूरी रीतिसे बैठनेपर, पर्व्वतोंके सहित हिमाचलभी सहस्र टुकड़े हो सकता है। "गदा युद्धमें दुर्य्योधनके समान कोई नहीं है" इस बातको भीमभी अच्छी प्रकारसे जानता है, और कृष्ण अर्ज्जुनभी सब समझते हैं। इससे हे राजन्! आप भीमसे उत्पन्न हुए भयको दूर कीजिये, महायुद्ध जब उपस्थित होगा, तब उसे मैं अवश्य मारूंगा; आप कुछभी दुःखी न होइये। हे भरतर्षभ! भीमके मेरे हाथसे मरनेपर, समान-धनुर्द्धारी अथवा कुछ उससेभी बाण और शस्त्रविद्यामें श्रेष्ठ पुरुष, अपने बाणोंकी वर्षासे अर्ज्जुनको विक्षिप्त कर देंगे। हे महाराज! भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा, कर्ण, भूरिश्रवा, प्राग्ज्योतिषपुरके महाराज, शल्य और सिन्धुराज जयद्रथ; इनमेंसे एक एक पुरुषभी सब पाण्डवोंको मारनेमें समर्थ हैं, और ये सब मिलके उन लोगोंको क्षणभरमें यमपुरीको पहुंचावेंगे। सब राजाओंकी सेना अकेले अर्ज्जुनको क्यों न जीत सकेगी, इसमें कोईभी कारण नहीं दीख पड़ता। भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य और अश्वत्थामाके बाणोंसे सैकड़ों बार विकल होकर अर्ज्जुन छिप जायगा और परवश होकर अवश्यही यमपुरीमें गमन करेगा। हे भारत! गङ्गानन्दन पितामह भीष्म शान्तनुसेभी अधिक, ब्रह्मर्षिके समान और देवताओंसेभी अजेय होकर उत्पन्न हुए हैं। कोई मनुष्यभी भीष्मको मारनेवाला नहीं है, क्योंकि इनके पिताने प्रसन्न होकर इन्हें बरदान दिया है, कि "जबतक तुम मरनेकी इच्छा न करोगे, तबतक तुम्हारी मृत्यु न होगी।" हे महाराज! द्रोणाचार्य्यभी महर्षिभरद्वाजके वीर्य्यसे द्रोणी (दोनी) से पैदा हुए हैं, परम अस्त्रको जाननेवाले अश्वत्थामा उन्हीं द्रोणाचार्य्यके वीर्य्यसे उत्पन्न हुए हैं, और आचार्य्यश्रेष्ठ श्रीमान कृपाचार्य्य महर्षि गौतमके वीर्य्यसे सरस्तम्बसे उत्पन्न हुए हैं। मुझे यह ठीक निश्चय है, कि कोईभी इनको नहीं मार सकता। हे महाराज! अश्वत्थामाके पिता माता और मामा तीनों अयोनिसे उत्पन्न हुए हैं; वह महापराक्रमी अश्वत्थामाभी हमारे पक्षमें हैं। ये सब महारथ वीर देवताओंके समान

हैं; युद्धमें ये इन्द्रकोभी भयसे पीड़ितकर सकते हैं। हे भरतर्षभ! अर्ज्जुन इन महारथोंमेंसे एक एककी ओरभी नहीं देख सकता; ये सब मिलकर तो अवश्य अर्ज्जुनका बध करेंगे, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। हे राजेन्द्र! मेरी समझमें कर्णभी भीष्म, द्रोण और कृपाचार्य्यके समान हैं! परशुराम जीने स्वयं इनको कहा था, कि तुम मेरी समान हुए! औरभी इनका स्वाभाविक गर्भसे उत्पन्न हुआ कवच और कुण्डल था, उसको इन्द्रने अपनी प्यारी स्त्री शचीके निमित्त इनसे ब्राह्मणका वेष बनाकर मांगा और उसे पाकर कर्णको अपनी महा भयङ्कर अमोघ-शक्ति दी है। तब इस प्रकारकी शक्तिसे रक्षित होकर इस शत्रुओंके जलानेवाले महावीर कर्णसे अर्ज्जुन कैसे जीता बचेगा? हे राजन्! हाथमें पड़े हुए फलकी भांति, अवश्यही हम लोगोंकी विजय होगी, और शत्रुओंको इस भूमण्डल पृथ्वी भरमें निःसन्देह पराजय होगी। हे भारत! यह पराक्रमी भीष्म एक दिनमें दश हजार शत्रुओंकी सेनाके योद्धाओंको मार सकते हैं, और द्रोण, कृपाचार्य्य तथा अश्वत्थामाभी उन्हीके समान नाश कर सकते हैं। संशप्तक क्षत्रिय लोग कहते हैं, कि यातो हमही अर्ज्जुनको मारेंगे, अथवा अर्ज्जुनही हम लोगोंको मारेगा।" इस प्रकारसे उन्होंने स्थिर और दृढ़ प्रतिज्ञा की है। दूसरेभी अर्ज्जुनको मारनेके निमित्त बहुतसे राजालोग निश्चय करके बैठे हैं, और उसको असमर्थ समझते हैं। इतने परभी आप पाण्डवोंसे ऐसे भयभीत क्यों हो रहे हैं? हे परन्तप! भीमके मारे जाने पर शत्रुओंमेंसे कौन हम लोगोंके सङ्ग युद्ध कर सकेगा? यदि आप जानते हैं, तो मुझसे कहिये। हे राजन्! वे लोग पांचो भाई, धृष्टद्युम्न और सात्यकी; यही जो सात योद्धा हैं, वेही शत्रुओंके श्रेष्ठ-बल हैं; परन्तु हम लोगोंकी ओरका उत्तम बल भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा, कर्ण, सोमदत्त, बाह्लिक प्रागज्योतिषाधिपति, शल्य, अवन्तीपति विन्द और अनुविन्द, जयद्रथ और आपके पुत्र दुःशासन, दुःसह, दुर्मुख, श्रुतायु, चित्रसेन, पुरुमित्र विविंशति, शल्य, भूरिश्रवा और विकर्ण, ये सब मुख्य सेनापति हैं। हे महाराज! मैंने ग्यारह अक्षौहिणी सेना संग्रह करी है; और शत्रुओंके यहां केवल सात अक्षौहिणी सेना इकट्ठी हुई है; इससे हमारी सेनासे भी शत्रुओंकी कम सेना है; तब आप किस प्रकारसे निश्चय करते हैं, कि मेरी पराजय होगी? हे राजेन्द्र! बृहस्पति कहते हैं, कि शत्रुओंकी सेना, अपनी सेनासे तृतीयांश कम होने पर उसके सङ्ग युद्ध करना उचित है। हमारी यह सेनाभी शत्रुओंसे तृतीयांश अधिक है। फिर मैं शत्रुओंकी सेनाको अनेक गुणोंसे हीन देखता हूं, और अपनी सेनाको अनेक गुणोंसे गुणी देखता हूं, हे भारत! इससे हमारे बलकी अधिकता और पाण्डवोंकी अल्पता आदि सब वृत्तान्तोंको जानकर भी आपको मोहमें पड़कर शोक करना उचित नहीं है। पराये देशको जीतनेवाले दुर्य्योधनने धृतराष्ट्रसे यह सब वचन कहकर, शत्रुओंके ओरको सब बातोंको जाननेके अनन्तर इन कार्य्योंको करना उचित है, ऐसी इच्छा करते हुए सञ्जयसे फिर पूछने लगे।

५५ अध्याय समाप्त।

दुर्य्योधन बोले, हे सञ्जय! कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर सात-अक्षौहिणी सेनाको पाकर युद्धकी कामनासे राजाओंके सङ्ग कैसी इच्छा करते हैं?

सञ्जय बोले, हे राजन्! युधिष्ठिर युद्ध होनेके निमित्त अत्यन्तही प्रसन्न हैं; भीम और अर्ज्जुन ये दोनों भी आनन्दित हो रहे हैं और नकुल सहदेव भी किञ्चित मात्र भय नहीं

करते हैं। कुन्तीपुत्र अर्ज्जुनने अस्त्रप्रयोजन, मन्त्र परीक्षा करनेके निमित्त अभिलाषी होकर सब दिशाओंको प्रकाशित करते हुए, अपने दिव्य रथको जुतवाया था। हे महाराज! मैंने अर्ज्जुनको बिजलीसे युक्त बादलकी भांति देखा था। उन्होंने सब तरहसे सोच विचारकर मुझसे यह बचन कहा है, कि "हे सञ्जय! मैं जो कौरवोंको जीतंगा, उसका यह पहिला लक्षण देखो।' यथार्थमें अर्ज्जुनने मुझसे जो कुछ कहा, मैंभी वही समझता हूं।

दुर्य्योधन बोले, कि तुम जुएमें हारे हुए पाण्डवोंका पक्ष करके उनकी प्रशंसा करते हो; जो हो, सम्प्रति अर्ज्जुनके रथके घोड़े और ध्वजा किस प्रकारके हैं; उसका वर्णन करो।

सञ्जय बोले, हे पृथ्वीनाथ! त्वष्टा-विश्वकर्म्माने इन्द्र और ब्रह्माके सङ्ग मिलकर अर्ज्जुनके रथमें अति विचित्र रूपके चित्रोंको बनाया है। देव-मायाकी सहायतासे विश्वकर्म्माने उसकी ध्वजापर छोटी और बड़ी बड़ी बहुत मूल्यवान मूर्त्तियोंको बनाया है। और भी भीमसेनकी प्रार्थनासे पवनपुत्र हनुमान अपनी निज मूर्त्तिको उस ध्वजापर रक्खेंगे। विश्वकर्म्माने उस रथमें ऐसी माया रची है, कि वह सब ओरसे तिरछा और एक योजन ऊपर तक व्याप्त रहता है, तौभी वृक्ष आदिसे उसकी गति नहीं रुक सकती

आकाश-मण्डलमें जैसे इन्द्र-धनुष नाना-वर्णोंसे युक्त होकर शोभायमान तथा प्रकाशित होता है, और यह नहीं मालूम पड़ता, कि यह क्या वस्तु है, तैसे ही विश्वकर्म्माने भी उस ध्वजाको बनाया है; उसमें अनेक प्रकारके रूप दीख पड़ते हैं। अग्निसे उत्पन्न हुआ धुआं जैसे अनेक प्रकारका रूप धारण करता हुआ आकाशको ओर जाता है वैसे ही विश्वकर्म्माकी बनाई वह ध्वजा भी ऊपरको उठी है; उसकी बोझा और रुकावट कुछभी नहीं होती। हे राजेन्द्र! उस कपिध्वजासे युक्त रथमें, गन्धर्व्व-राज चित्ररथके दिये हुए वायुके समान चलनेवाले सौ घोड़े जुते हैं। पहिले उनको ऐसा वर मिला हुआ है, कि बार बार मारे जानेपर भी उन घोड़ोंकी संख्या कभी कम न होगी। राजा युधिष्ठिरके रथमें भी अर्ज्जुनके घोड़ोंके समान बलवान और हाथीदांतके समान सफेद और बड़े बड़े घोड़े जुते हैं। भीमसेनके रथमें वायुके समान शीघ्र चलनेवाले और सप्त ऋषिके समान तेजस्वी घोड़े जुते हुए हैं। काले शरीरवाले तीतरपक्षीके समान चित्रित हृष्टपुष्ट घोड़े सहदेवके रथमें जुते हैं; उनके भ्राता अर्ज्जुनने प्रसन्न होकर उन्हें प्रदान किया था; वीरवर अर्ज्जुनके घोड़ोंसे भी ये घोड़े उत्तम हैं। वायुके समान बली और वेगवान् इन्द्रके दिये हुए पीले रङ्गके घोड़े, नकुलके रथमें लगे हैं; और उन्हींके समान अवस्था, बल, पराक्रम तथा वायुके तुल्य वेगवान् घोड़े अभिमन्यु आदि कुमारोंके रथमें लगे हैं।

५६ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! पाण्डवोंकी प्रीतिके निमित्त, दुर्य्योधनकी सेनासे युद्ध करनेके वास्ते, किन लोगोंको तुमने आया हुआ देखा है?

सञ्जय बोले, हे महाराज! अन्धक और वृष्णिवंशमें श्रेष्ठ कृष्णको, और चेकितान, युयुधान सात्यकीको मैंने वहांपर उपस्थित देखा। ये लोग एक एक अक्षौहिणी सेना लेकर पाण्डवोंकी सहायताके निमित्त वहांपर आये हैं। पाञ्चाल-राज द्रुपद वीर्य्यवान धृष्टद्युम्न आदि पुत्रोंसे युक्त और शिखण्डीसे रक्षित होकर एक अक्षौहिणी सेनाके सहित आये हैं। राजा विराट बलवान सूर्य्यदत्त और मदिराक्ष आदि भाइयों तथा पुत्रोंके सहित अक्षौहिणी सेनाको लेकर, शंख और उत्तर नामक पुत्रोंसे रक्षित

होकर पाण्डवोंकी सहायताको आये हैं। जरासन्धके पुत्र मगधराज सहदेव और चेदिराज धृष्टकेतु, ये दोनों भी एक अक्षौहिणी सेना लेकर वहांपर आये हैं। लाल-ध्वजाओंसे युक्त केकय राजपुत्र पांचों भाई एक अक्षौहिणी सेनाके सहित दुर्य्योधनसे युद्ध करनेके निमित्त वहांपर उपस्थित हुए हैं। जो लोग पाण्डवोंके निमित्त दुर्य्योधनकी सेनासे युद्ध करनेके लिये वहांपर आये हैं,—उन सबको मैंने वहांही तक देखा है। जो मनुष्य, देवता, गन्धर्व्व और आसुरी व्यूहकी रचनाको जानते हैं, वही महावीर धृष्टद्युम्न वहांपर सेनापति बनाये जायंगे। हे राजन्! शान्तनु-पुत्र भीष्म शिखण्डीके हिस्सेमें कल्पित हुए हैं, विराट-राज मत्स्यदेशीय वीरोंके सहित शिखण्डीके पृष्ठ-रक्षक बनेंगे। मद्रराज बलवान शल्य युधिष्ठिरके हिस्सेमें चुन गये हैं; उसमें कोई कोई कहते हैं, कि हम लोगोंके मतमें ये दोनों वीर समान नहीं हैं। सौ भाई और पुत्रोंके सहित दुर्य्योधन तथा पूर्व्व, पश्चिमके औरभी बहुतसे राजा लोग भीमसेनके हिस्सेमें चुने गये हैं। और अर्जुनके हिस्सेमें सूर्य्यपुत्र कर्ण, अश्वत्थामा, विकर्ण और सिन्धुराज जयद्रथ आदि कई वीर चुने गये हैं। इनके अतिरिक्त जो लोग पृथ्वी भरमें असाधारण और महावीर हैं उन्हें भी अर्जुनने अपनेही हिस्सेमें रक्खा है। महा धनुर्धारी केकेयराजपुत्र पांचो भाइओंने केकय देशीय वीरोंकोही अपने भागमें निश्चित किया है, और केवल केकय देशियोंहीको नहीं; बरन मालव, शाल्व, तथा त्रिगर्त्तोंके मुख्य और प्रसिद्ध दोनों संशप्तक वीरभी इन्हींके हिस्सेमें निश्चित किये गये हैं। सुभद्रानन्दन अभिमन्युने दुर्य्योधन और दुःशासनके पुत्रोंको तथा बृहद्बल राजाको अपने हिस्सेमें निश्चित किया है। हे भारत! सेनाकी ध्वजाओंसे युक्त राजा द्रुपदकेपुत्र धृष्टद्युम्न आदि द्रोणाचार्य्यसे युद्ध करेंगे। चेकितान सोमदत्तके सङ्ग द्वन्द्वयुद्ध करनेकी इच्छा करते हैं; और सात्यकी भोजराज कृतवर्म्माके सङ्ग द्वन्द्वयुद्ध करनेकी अभिलाषा करते हैं। युद्धमें महाघोर शब्दको करनेवाले माद्रीपुत्र सहदेवने तुम्हारे साले सुबलपुत्र शकुनिको अपने हिस्सेमें निश्चित किया है; और इस धूर्त्तके पुत्र उलूक और सारस्वतोंको नकुलने अपने हिस्सेमें चुना है। हे राजन्! इससे अतिरिक्त और दूसरे राजा लोग जो युद्ध करनेको आये हैं, पाण्डवोंने उन सबकोभी अपने अपने नामके अनुसार सबका बिभाग करके अलग अलग हिस्सेमें चुन लिया है। इसी प्रकारसे उनकी सब सेना यथायोग्य अलग अलग हिस्सोंमें बांटो गई है। इस समय पुत्रोंके सहित आपको जो कुछ करना हो, उसको शीघ्रही कीजिये।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! काल प्रेरित मेरे पुत्र लोग जीवित रहना नहीं चाहते हैं; युद्धमें महा बलवान भीमसेनके साथ जिसका युद्ध होगा, उसके जीनेकी आशा कैसे की जा सकती है? पृथ्वीके सब राजा मृत्युके वशमें होकर यज्ञके पशु तथा अग्निकी ज्योतिमें पतिङ्गोंकी भांति गाण्डीव धनुषकी अग्निमें प्रवेश करेंगे। शत्रुता करनेवाले महात्मा पाण्डव लोग, युद्धमें मेरी सेनाको अवश्य तितर बितर करके भगा देंगे, इसे मैं अपने मनमें खूबही जानता हूं। कौन मनुष्य पाण्डवोंके युद्धसे भागती हुई मेरी सेनाको आसरा देनेवाला होगा? पाण्डव लोग सबही अत्यन्त शूरवीर कीर्त्तिमान, प्रतापी सूर्य्य और अग्निके समान तेजस्वी तथा युद्धको जीतनेवाले हैं। हे सञ्जय! जिस सेनाके युधिष्ठिर नायक, कृष्ण रक्षक, और अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव, सात्यकी, द्रुपद, धृष्टद्युम्न, उत्तमौजा, युधामन्यु, शिखण्डी, क्षत्रदेव, उत्तर, वक्र, काशी, चेदी, मत्स्य और पाञ्चालदेशीय सम्पूर्ण सृञ्जय और प्रभद्रक आदि वीर योद्धा हैं; जिनको इच्छाके विना इन्द्रभी बलसे यह पृथ्वी

नहीं ले सकते हैं; जो लोग पर्व्वतोंकोभी ताड़नेमें समर्थ हैं; उन्ही अलौकिक प्रतापशाली सब गुणोंसे भरे हुए रणधीर वीरोंके सङ्ग हमारा यह दुष्टपुत्र युद्ध करनेकी इच्छा करता है। मेरे बहुत बिलाप करनेपरभी वह कुछ नहीं सुनता है।

दुर्य्योधन बोले, हे राजेन्द्र! हम दोनों एकही जाति और सब पृथ्वीके राजा हैं; तब आप किस निर्मित्त केवल पाण्डवोंके जयकी सम्भावना करते हैं। हे नरनाथ! पाण्डवोंकी तो बातही क्या है, साक्षात शचीपति इन्द्र देवताओंके सहित भी इन अत्यन्त तेजस्वी महा धनुद्धारी भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, कर्ण, जयद्रथ और अश्वत्थामाको युद्धमें नहीं जीत सकते हैं। शस्त्रधारी वीर योद्धा और अत्यन्त पराक्रमी राजा मेरी सहायताको आये हैं, वे सबही मेरे निर्मित्त प्राणोंको त्याग करके भी पाण्डवोंसे युद्ध करेंगे; ये सब लोग पाण्डवोंकी सेनाकी जीतनेमें समर्थ हैं। पाण्डव लोग मेरी सेनाको ओर देखभी न सकेंगे। पुत्रोंके सहित पाण्डवोंसे युद्ध करनेमें मैं सब प्रकारसे समर्थ हूं, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। हे पिता! जो सब राजा हमारी प्रीतिके निर्मित्त यहां आये हैं, वे पाण्डवोंको अपने बाणोंके जालसे ऐसे बांध लेंगे, जैसे व्याधा तांतके फांससे हरिनकी पकड़ता है। पाण्डव और पाञ्चाल लोग हमारे बहुतसे महावीर रथियोंके बाणोंसे पीड़ित होकर अवश्यही भागनेमें तयार होंगे।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! मेरा यह पुत्र उन्मत्तकी भांति व्यर्थ प्रलाप कर रहा है; धर्म्मराज युधिष्ठिरको यह कभीभी पराजय करनेमें समर्थ न होगा। उन यशस्वी धर्म्मके जाननेवाले महात्मा पाण्डवों और मेरे पुत्रोंमें जितना बल है, उसको भीष्मही जानते हैं; क्योंकि ये उन महात्माओंसे युद्ध करनेके निर्मित्त इच्छा नहीं करते हैं। परन्तु तुम फिरभी मेरे निकट पाण्डवोंकी चेष्टाका वर्णन करो। कौन मनुष्य उन तेजसे जलते हुए, महा तेजस्वी महाधनुर्द्धारी पाण्डवोंको घृतसे अग्निकी भांति अधिक उत्तेजित कर रहा है?

सञ्जय बोले, हे भारत! धृष्टद्युम्न सदाही उन लोगोंको यह कहके उत्तेजित कर रहे हैं, कि "हे भरत सत्तमगण! युद्धमें प्रवृत्त होइये, युद्धसे कभीभी न डरिये। युद्धमें दुर्य्योधनकी ओरसे जो कोई राजा क्रोधके वश होकर युद्ध करनेको आवेंगे उनको अकेलाही मैं इस प्रकारसे पकड़ लूंगा, जैसे व्याधा जलसे मछलियोंको पकड़ता है। और जैसे तट समुद्रके वेगको रोकता है, वैसेही मैं भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, कर्ण, अश्वत्थामा, शल्य और दुर्य्योधनको रोकूंगा।" धृष्टद्युम्नके ऐसा कहनेपर धर्म्मात्मा राजा युधिष्ठिर उनसे बोले, हे महाबाहो! पाण्डवोंके सहित पाञ्चाल लोग तुम्हारेही धैर्य्य और बलके आसरे ठहरे हैं; इससे तुम हम लोगोंको युद्धसे उद्धार करो। मैं तुम्हें क्षात्रयधर्म्ममें विशेष रूपसे स्थित और अकेलेही कौरवोंसे युद्ध करनेमें बिलक्षण समर्थ समझता हूं। हे परन्तप! जब कौरव लोग युद्धकी कामनासे रणभूमिमें सम्मुख आवेंगे, तब आप जिस रीतिसे युद्धकी तयारी करेंगे, वह सबही हम लोगोंको कल्याणकारी होगी। बुद्धिमानको यह मत है, कि शूरवीर तथा बलवान पुरुष अपने पुरुषार्थको दिखलाता हुआ युद्धके कार्य्योंको भली भांति न जाननेवाले, भागनेवाले और शरणागतोंको अगाड़ी खड़ा होकर उन्हें बिना दामही मोल लेवें। हे परन्तप! आप शूर, वीर और महा पराक्रमी हैं, इससे युद्धमें भयसे दुःखी लोगोंको अवश्यही उबारियेगा, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है।

कुन्तीनन्दन धर्म्मात्मा युधिष्ठिरके ऐसा कहनेपर, धृष्टद्युम्न मुझसे भयसे रहित होकर यह बचन बोले, कि "हे सूत! तुम शीघ्रही

जाकर दुर्य्योधनकी ओरके वाह्लिक और उत्तम वंशधर तथा अल्पायु कौरव और भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, कर्ण, अश्वत्थामा, जयद्रथ, दुःशासन विकर्ण और दुर्य्योधनसे यह बचन कहो, कि जिसमें देवतोंसे रक्षित अर्जुन तुम लोगोंका बध न करें; इस निमित्त इस समय उपायसेही युधिष्ठिरको वशमें कर लेना तुम लोगोंका कर्त्तव्य कर्म्म है। इससे तुम लोग धर्म्मराजके राज्यको शीघ्र देकर, लोकमें विख्यात, वीर पाण्डवोंसे प्रार्थना करो। सत्य-पराक्रमी अर्जुन और भीम जैसे वीर योद्धा हैं, पृथ्वी भरमें वैसा कोईभी वीर नहीं है। क्योंकि देवता लोग उस अर्जुनके गाण्डीव धनुष और दिव्य रथकी रक्षा करते हैं, इस लिये मनुष्योंसे वह कभी भी पराजित नहीं हो सकते। इससे तुम युद्धमें कभीभी उन लोगोंके चित्तको आकर्षित मत करना।"

५७ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, मैं बिलाप कर रहा हूं, तौभी मेरी बातोंको न मानकर यह मन्दबुद्धि मेरा पुत्र, कुमार अवस्थाहीसे ब्रह्मचारी, क्षत्रिय तेजसेयुक्त, युधिष्ठिरके सङ्ग युद्ध करेगा? हे भरतसत्तम दुर्य्योधन! तुम युद्धसे निवृत्त होजाओ। हे शत्रुनाशन! पण्डित लोग किसी अवस्थामेंभी युद्धकी प्रशंसा नहीं करते। दुष्ट मित्रोंके सहित आधी पृथ्वीका राज्यही तुम्हारी जिविकाके निमित्त बहुत है। हे परन्तप! इससे पाण्डवोंको यथा उचित आधा हिस्सा दे दो। तुम महात्मा पाण्डवोंके संग सन्धि कर लो, इसको सब कौरव लोग धर्म्म और उत्तम समझते हैं। हे पुत्र! तुम अपनी सेनाकी ओर पूरी रीतिसे ध्यान देकर देखो; यह तुम्हारे विनाशकी कारण हुई है, पर तुम मोहमें पड़कर इस बातको नहीं समझ सकते हो। ध्यानसे देखो—कि भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा, वाह्लिक, सञ्जय, सोमदत्त, शल्य, पुरुमित्र, जय भूरिश्रवा और हम कोई भी युद्धकी इच्छा नहीं करते हैं। हे तात! शत्रुओंसे पीड़ित होकर कौरव लोग जिसके बलसे ठहरेंगे वे लोग युद्ध करनेके निमित्त उत्साही नहीं हैं, परन्तु तुमही केवल हठ करते हो। और तुम जो केवल अपनीही इच्छासे ऐसा करते हो, वह बात भी नहीं है; कर्ण, पापी-दुःशासन और सुवल पुत्र शकुनि येही सब मिलके तुमको युद्धमें प्रवृत्त कर रहे हैं।

दुर्य्योधन बोले, आप, भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा, सञ्जय, काम्बोज, वाह्लिक सत्यव्रत, पुरुमित्र, भूरिश्रवा और किसी सम्बन्धीय लोगोंके आसरेपर मैं युद्ध करनेकी इच्छा नहीं करता हूं। हे तात! केवल मैं और कर्ण येही दो पुरुष युधिष्ठिरको पशुकी भांति मारकर युद्धरूपी यज्ञको पूर्ण करेंगे। उसमें मेरा रथही वेदी होगा, कवच सभा होगी, तरवार और गदाही स्रुवा और स्रुक होंगी चारों घोड़ेही चातुर्होत्र होंगे, बाण सब कुशका कार्य्य करेंगे और यशही घृतस्वरूप होगा। हे महाराज! इस प्रकारसे आत्मरूपी यज्ञ करके, युद्धमें यमराजकी उपासना करते हुए, शत्रुओंको मारके, लक्ष्मीसे युक्त होकर, लौटूंगा। हे तात! मैं, कर्ण और मेरा भाई दुःशासन, येही तीन पुरुष युद्धमें सब पाण्डवोंका बध करेंगे। या तो पाण्डवोंको मारकर हमही पृथ्वीका राज्य करेंगे, अथवा हमको मारके पाण्डवही सम्पूर्ण पृथ्वीका राज्य लेंगे। हे महापराक्रमी तेजस्वी पृथ्वीनाथ! हमारा राज्य, धन और जीव सब चला जाय, पर मैं पाण्डवोंके सङ्ग एकत्र वास नहीं कर सकूंगा। हे महाराज! तीक्ष्ण सुईकी नोकसे जितनी भूमि विद्ध हो सकती है, उतनी भूमिभी पाण्डवोंको मैं नहीं दूंगा।

दुर्य्योधनकी ऐसी बातोंको सुनकर महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे भूपालवृन्द ! मैंने दुर्य्योधनको तो परित्याग किया, पर अब तुम लोगोंके निमित्त शोक करता हूं, क्योंकि तुम लोग यमपुरीमें जानेकी इच्छासे मन्दबुद्धि दुर्य्योधनके अनुगामी बनोगे। जैसे हरिनोंके झुण्डमें सिंह प्रवेश करता है, वैसेही शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ पाण्डवलोग सिंहको भांति तुम्हारी सेनामें आकर मुख्य मुख्य वीरोंको मारेंगे मुझे बोध होता है, कि लम्बी भुजावाला सात्यकी हाथमें आई हुई कामिनीकी भांति कौरवी सेनाको अपने वशमें करके उसे विक्षिप्त कर रहा है। यथार्थमें मधुवंशधर सात्यको, युधिष्ठिरके सम्पूर्ण बलको और भी परिपूर्ण करता हुआ, जैसे किसान खेतोंमें बीज बोते हैं, वैसेही अपने बाणोंको चलाकर कौरवी सेनाको बिकल कर देगा। भीमसेन युद्धमें प्रवृत्त हुई सेनाके आगे खड़ा रहेगा, और सैनिक पुरुष उसको दुर्गको भांति सहारा समझके निर्भय होके युद्ध करेंगे। जब तुम लोग भीमकी हाथियोंके मस्तक, सूंड़, हृदय, और योद्धोंको पर्व्वतके समूहकी भांति गदासे तोड़ते हुए देखोगे, तभी मेरे वचनोंको स्मरण करोगे। जब रथ, हाथी घोड़े और सेनाके वीरोंको अग्निकी भांति भीमसेनसे जलते हुए देखोगे, तबही तुम लोग मेरी इन बातोंको स्मरण करोगे। तुम लोग यदि पाण्डवोंसे सन्धि न करोगे, तो तुम लोगोंके निमित्त महा भय उपस्थित होगा! भीमसेनकी गदाकी चोटसे मरकरही तुम लोग शान्ति लाभ करोगे। जब कौरवोंके इस महाबलसे युक्त सेनाको भीमसेनके बलसे मरती हुई देखोगे, तब तुम लोग मेरे वचनोंको स्मरण करोगे। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय ! राजा धृतराष्ट्र ऐसा कह फिर सञ्जयसे पूछने लगे।

५८ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय ! महात्मा कृष्ण और अर्ज्जुनने जो कुछ बचन कहे हैं, वह मुझसे कहो तुम्हारे बचनोंको सुननेकी मुझे बहुतही इच्छा है।

सञ्जय बोले, हे राजन् ! मैंने कृष्ण अर्ज्जुनको जिस प्रकारसे देखा, उसे आप सुनिये। उन दोनोंने जो कुछ कहा है, वह भी आपसे कहूंगा। उन दोनों पुरुषोंसे बातचीत करनेके निमित्त मैंने सावधान होकर और हाथ जोड़कर विनीत भावसे अपने चरणकी ओर देखता हुआ अन्तःपुरमें प्रवेश किया। हे राजेन्द्र ! जहांपर कृष्ण अर्ज्जुन और भामिनी द्रौपदी तथा सत्यभामा रहती हैं, उस स्थानपर अभिमन्यु और नकुल सहदेवभी नहीं जाने पाते। उसी स्थानपर वे दोनों शत्रुनाशन माध्वी सुरापान करके चन्दनचर्च्चित और उत्तम वस्त्र तथा आभूषणोंसे भूषित होकर रत्नजटित सोनेके महामूल्य आसनोंपर बैठे थे। मैंने देखा कि अर्ज्जुनकी गोदमें कृष्ण और द्रौपदी तथा सत्यभामाकी गोदमें अर्ज्जुनके दोनों दोनों पांव हैं! अनन्तर अर्ज्जुनने अपने पांवके नीचेका पीढ़ा मेरे बैठनेके निमित्त प्रदान किया, परन्तु मैं उसे हाथसे छूकर पृथ्वीहीपर बैठ गया। अर्ज्जुनने जब पैरके नीचे रहनेवाले सोनेसे भूषित पीढ़ेसे अपने दोनों पैरको ऊपर उठाया, तब मैंने देखा, कि उनका पांव बहुतही शुभ लक्षणोंसे युक्त है और उनके पांवके तलवेमें ऊर्द्धरेखा है। हे महाराज ! श्यामवर्ण, विशालमूर्त्ति, युवा अवस्था, शालके वृक्षकी भांति ऊंचे कृष्ण अर्ज्जुनको एकही आसनपर बैठे हुए देखकर मैं महाभयसे पूरित होगया। वे दोनों इन्द्र और साक्षात विष्णुके समान हैं; इस बातको मन्दबुद्धि दुर्य्योधन भीष्म, द्रोणके बल और कर्णकी बड़ाईसे कुछभी नहीं समझ सकता है। ऐसे नरदेव पुरुसिंह—जिस युधिष्ठिरके आज्ञाकारी हैं, उस धर्म्मराज

महात्मा युधिष्ठिरका मानसिक सङ्कल्प जो पूरा होगा, इसको मैंने उसी समय निश्चय कर लिया। मैं अन्न, जल, वस्त्र और आभूषणोंसे सत्कार पाके मीठी बात चीतसे सम्मानित होकर अपने दोनों हाथोंको जोड़के आपका कहा हुआ बचन और सन्देसेको निवेदन किया। तब अर्जुनने अपने धनुष शोभित हाथसे कृष्णके शुभ लक्षणयुक्त चरणको पलोटते हुए मेरे बचनोंके उत्तर देनेके निमित्त उन्हें उपस्थित किया। सब भूषणोंसे भूषित, इन्द्रके समान तेजस्वी, बोलनेवालोंमें श्रेष्ठ; श्रीकृष्ण इन्द्रकेतुकी भांति उठके आसनपर बैठे और सुभसे कहने योग्य, आनन्द देनेवाली, धार्त्तराष्ट्रोंको भय उत्पन्न करनेवाली, पहिले मोटी अन्तमें कठोर बाणीसे बातचीत करने लगे। पीछे मैंने बोलनेवाले कृष्णके उपदेशके अक्षरोंसे भरे हुए, अर्थयुक्त हृदयको सुखानेवाले बचनको सुना।

श्रीकृष्ण बोले, "हे सञ्जय! तुम मेरे बचनके अनुसार श्रेष्ठ पुरुषोंको प्रणाम और छोटोंको कुशल क्षेम पूछनेके अनन्तर कुरु-श्रेष्ठ भीष्म और द्रोणाचार्य्यके समीप मनीषी धृतराष्ट्रसे यह बचन कहना, कि तुम लोगोंके निमित्त महाभय आकर उपस्थित हुआ है। तुम लोग इसी समय ब्राह्मणोंको दान दक्षिणा देकर और विविध यज्ञोंको करके अपने कर्त्तव्य कर्मोंको पूरा कर लो। पुत्र कलत्रोंके सङ्ग भोग बिलास कर लो; सत्पात्रोंको दान देलो; उत्तम पुत्रोंको उत्पन्न कर लो और अपने प्रिय लोगोंको प्रीतिके निमित्त प्रिय आचरण करलो, क्योंकि राजा युधिष्ठिर विजयके निमित्त शीघ्रता कर रहे हैं। मेरे दूर रहनेपर द्रौपदीने "गोविन्द! गोविन्द!" कहके मुझे पुकारा था, वह बहुत दिनका ऋण अभीतक मेरे हृदयसे बाहर नहीं हुआ है। तेजसे भरो प्रचण्ड गाण्डीव जिसका धनुष है, मेरे सहित उस अर्जुनसे तुम्हारी शत्रुता हुई है। बिना कालके वशमें हुए कौन पुरुष मेरे समान अद्वितीय अर्जुनसे युद्ध करनेकी इच्छा करेगा? और पुरुषोंकी बात तो दूर रहे साक्षात इन्द्रभी अर्जुनको नहीं जीत सकते। जो मनुष्य अर्जुनको युद्धमें जीतनेमें समर्थ होगा, वह अपनी दोनों भुजाओंसे पृथ्वीकोभी उठा सकेगा; क्रोधित होनेसे समस्त प्राणियोंको भस्म कर सकेगा, और स्वर्गसे देवताओंकोभी भगा देनेमें समर्थ होगा। मैं देवता, गन्धर्व्व, असुर, यक्ष और मनुष्य तथा नागोंमेंभी ऐसा कोई पुरुष नहीं देखता हूं, जो युद्धमें अर्जुनके सम्मुख हो सके। विराट नगरमें इकट्ठे हुए असंख्य योद्धाओंके बीचमें जो अर्जुनकी वीरताकी अद्भुत बात सुनी जाती है, वही इसमें पूरा प्रमाण है। विराट नगरमें तुम लोग अकेले धनञ्जयसे हारके भागे थे, यही इसमें यथेष्ट प्रमाण है। बल, वीर्य्य, शीघ्रता, लघुहस्तता, निर्भयता और धैर्य्य ये सब गुण अर्जुनके अतिरिक्त और किसी दूसरे पुरुषमें एकत्र विद्यमान नहीं हैं।" हे महाराज! श्रीकृष्णचन्द्रने अपने वचनोंसे अर्जुनको आनन्दित करते हुए, यथा समयमें वर्षनेवाले आषाढ़के बादलकी भांति गर्जते हुए इन सब बचनोंको कहा। श्वेतवाहन अर्जुनने भी उन्हीं रोंवा-खड़ा-करनेवाले वचनोंका उल्लेख किया था।

५६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर प्रज्ञानेत्र धृतराष्ट्र सञ्जयकी बातोंको सुनकर उसके गुण दोषके बिचारमें प्रवृत्त हुए। पुत्रोंके बिजयको आकांक्षा करनेवाले, विचक्षण, बुद्धिमान, महाराज धृतराष्ट्रने अपनी बुद्धिके अनुसार अत्यन्त सूक्ष्मतासे गुण और दोषोंको बिचारकर तथा दोनों ओरके बलको निश्चय करके, प्रभाव, उत्साह और मन्त्रशक्तिको यथार्थ

रूपसे विचारना आरम्भ किया। अनन्तर पाण्डवोंको देव और मनुष्य सम्बन्धी तेजोंसे युक्त और शक्तिसम्पन्न तथा कौरवोंको थोड़ी शक्तिसे युक्त निश्चय करके दुर्य्योधनसे कहने लगे, हे दुर्य्योधन! मुझे हर घड़ी यही चिन्ता लगी रहती है, किसी बातसेभी इसकी निवृत्ति नहीं होती है। केवल अनुमानसेही नहीं, मैं इसे प्रत्यक्षही मालूम करता हूं। पुत्रोंके ऊपर सबही प्रेम करते हैं, और अपनी शक्तिके अनुसार उनके प्रिय कार्य्य और हितका अनुष्ठान करते हैं। जो लोग उपकार करते हैं, उनके विषयमेंभी इसी प्रकारकी बात जानी जाती है। उत्तम पुरुष उपकारी लोगोंके निमित्त बहुतसे उत्तम और प्रिय कार्य्योंको करके उनका प्रत्युपकार करनेकी इच्छा करते हैं; इसलिये अग्निभी खाण्डव वनमें अर्ज्जुनके किये हुए उपकारको स्मरण करके, इस भयङ्कर कुरुपाण्डवोंके संग्राममें अर्ज्जुनकी सहायता करेंगे; और पूरी रीतिपर बुलानेसे धर्म्म आदि देवताभी पुत्र प्रेमसे पाण्डवोंपर अनुकूल होकर उनकी सहायताको आवेंगे। मुझे निश्चय बोध होता है, कि भीष्म, द्रोण और कृपाचार्य्यके क्रोधसे उनकी रक्षा करनेके निमित्त वे अवश्यही अभिलाषी होंगे। इससे देवताओंकी सहायतासे युक्त पाण्डवोंकी औरको कोई पुरुष युद्धमें देखभी न सकेगा। जिसके देव-लोकके बने प्रसिद्ध गाण्डीव धनुष और वरुण तथा अग्निके दिये हुए अक्षय तूणीर हैं, जिसके रथके ध्वजाकी गति अग्निके धुएंकी भांति कहींभी नहीं रुक सकती; जिसकी दिव्य कपिध्वजा और चतुरता पृथ्वीमें अतुल्यरूप है; जिसका शत्रुओंको महाभय देनेवाला वज्रके समान महाघोर नाद सब लोगोंको सुन पड़ता है; सब कोई जिसको महावीर्य्य और महापराक्रमी जानते हैं, तथा भूपालवृन्द जिसको देवताओंसेभी युद्धमें अजेय समझते हैं; जो एकही बार पांच सौ बाणोंको लेकर क्षण मात्रमें बहुत दूरतक चला सकता है, और कोईभी उस शीघ्रताको नहीं देख सकता है, जो बाहुबलमें स्वामकार्त्तिकके समान होकर युद्धमें स्थिर रहता है, रथिश्रेष्ठ जिस अर्ज्जुनको भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा और मद्रराज शल्य तथा औरभी महावीर पुरुष लोग अलौकिकवीर्य्य और बलसे युक्त, तथा भूपालोंसेभी न जीतने योग्य कहके प्रशंसा किया करते हैं। जो एक सङ्ग पांच सौ बाणोंको चलाते हैं, उसी महापराक्रमी, इन्द्रके समान बलवान अर्ज्जुनको मैं अपने अन्तःकरणसे ऐसा देखता हूं, कि जैसे वह महा भयङ्कर युद्धमें कौरवी सेनाका संहार कर रहा है। हे भारत! मैं रात दिन इसी प्रकारकी चिन्ता करता रहता हूं, कि किस प्रकारसे कौरवोंमें शान्ति होगी! इसी सोच चिन्तामें डूबकर मैं निद्रा और सुखसे रहित होगया हूं। हे तात! कौरवोंकी क्षय होनेका यह महा-भयङ्कर समय उपस्थित हुआ है। शान्तिके निमित्त यदि इस झगड़ेको शेष करनेका कोई उपाय न हो, तो पाण्डवोंके सङ्ग सन्धि करनेकी मेरी इच्छा है, किन्तु विग्रह नहीं क्योंकि मैं पाण्डवोंको कौरवोंसे अधिक शक्तिसम्पन्न और बलवान समझता हूं।

६० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अत्यन्त हठी, (अर्थात किसीके बचनको न सुननेवाले) धृतराष्ट्र-पुत्र दुर्य्योधन पिताकी बातको सुनके बहुतही क्रोधसे पूरित होकर यह बचन बोले, हे राजसत्तम! आप जो देवतोंसे रक्षित पाण्डवोंको अपराजित समझते हैं, सो भय त्याग दीजिये। हे भारत! पहिले, द्वैपायन व्यासदेव और महा तपस्वी नारद तथा जमदग्निके

एव परशुराम जीने मुझसे यह वचन कहा था, कि काम, द्वेषके संयोगसे रहित, लोभ, द्रोह-शून्य और विषयोंको तथा समभ करही देवता लोग देवत्व पदको प्राप्त हुए हैं। हे भरतर्षभ! देवता लोग मनुष्यकी भांति काम, क्रोध, लोभ, दया और द्वेषसे कदापि किसी कार्य्यमें प्रवृत्त नहीं होते! हे भारत! आप कभी ऐसी चिन्ता न किया कीजिये; क्योंकि ये देवता लोग शम दम आदि देव-भावोंपर सब समय आरूढ़ रहते हैं। तब यदि कामके संयोगसे इन लोगोंमें द्वेष और लोभ मालूम हो, तो देवतोंके प्रमाणके अनुसार वे कभी पराक्रमको नहीं प्रकाशित कर सकेंगे। अग्नि यदि सब ओर व्याप्त होके सब लोगोंको जलानेकी इच्छा करेगी, तो मेरे मन्त्रके प्रभावसे उसी समय बुझ सकती है। हे भारत! देवता लोग परम तेजस्वी हैं, यह बात ठीक है, पर उन देवतोंसेभी मेरे तेजको आप अधिक समझिये। हे राजेन्द्र! पृथ्वी तथा पर्व्वतभी टुकड़े टुकड़े हो जायं, तौभी मैं सब लोगोंके सम्मुख मन्त्रसे उन्हें फिर ज्यों का त्यों करके जिस स्थानमें थे, उसी स्थानमें स्थापित कर सकता हूं। इस जड़ और चेतन जगतके नाशके निमित्त, यदि शिला बरसे और प्रचण्ड वायु चले; तौभी मैं सबके सम्मुखही उसे बारम्बार निवारण कर सकता हूं। मैं जलको स्तम्भित कर दूं, तो उस परसे रथ, हाथी, घोड़े और पदाति सेनाभी जा सकती हैं, इससे मैं अकेलाही सब सुर और असुरोंके प्रभावको उत्पन्न करके जगतका चलानेवाला हूं। किसी किसी कार्य्यके निमित्त मैं अक्षौहिणी सेनासे युक्त होकर जब यात्रा करता हूं, तब जिस जिस स्थानमें इच्छा करता हूं, वहांही मेरे रथ और घोड़ोंकी गति होती है। हे राजेन्द्र! मेरे अधिकारमें सर्पआदि भयानक हिंसक जन्तुभी प्राणियोंके मन्त्रबलसे रक्षित होनेपर हिंसक लोग उनको नहीं मार सकते। हे राजेन्द्र! जलको वर्षानेवाले बादल भी मेरी इच्छाके अनुसार यथेष्ट वर्षा कर सकते हैं। मेरी सब प्रजा धर्म्मिष्ठ है, इससे मेरे राज्यमें अति-वृष्टि और अनावृष्टि होनेकीभी सम्भावना नहीं है। इससे मेरे द्वेषी शत्रुकी रक्षा करनेके निमित्त अश्विनीकुमार, अग्नि, देवतोंके सहित इन्द्र और धर्म्म कोईभी उत्साहित न होंगे। ये लोग यथार्थमें यदि पाण्डवोंको रक्षा कर सकते, तो वह लोग कभी तेरह वर्षतक बनमें इतना दुःख न पाते। मैं आपसे सत्य कहता हूं, कि मेरे द्वेषी शत्रुकी रक्षा करनेके निमित्त देवता, गन्धर्व्व, असुर राक्षस कोईभी समर्थ नहीं है। हे परन्तप! मित्र वा शत्रु दोनोंके विषयमें मैंने पहिले जो कुछ शुभ अथवा अशुभ विचार किया था, वह कभीभी निष्फल नहीं हुआ। अथवा किसी विषयमें "यह होगा" यदि मैंने पहिले कभी ऐसी बात कही थी, तो वह अन्यथा नहीं हुई। इसीसे सब लोग मेरे वचनोंको सत्य समझते हैं। हे राजेन्द्र! सब संसार मात्र मेरे इस जगत-विख्यात महात्म्यके साक्षी हैं। आपको धैर्य्य देनेहीके निमित्त मैंने इन वचनोंको कहा है, अपनी बड़ाई नहीं करी है। हे राजेन्द्र! मैंने पहिले कभी अपनी बड़ाई नहीं करी थी; क्योंकि आपके निकट अपनी प्रशंसा करना असत आचरण कहलाता है। आप पाण्डव, मत्स्य, पाञ्चाल और केकय, सात्यकी तथा कृष्णकोभी मुझसे हारे हुए सुनेंगे। जैसे नदी समुद्रमें जाकर लुप्त हो जाती है, वैसेही मेरे समीप आनेसे वे सब लोग अपने अनुचरों समेत मारे जायंगे। उन लोगोंगोंसे मेरी बुद्धि तेज, वीर्य्य, विद्या और उपाय सबही अधिक श्रेष्ठ तथा उत्तम हैं। शस्त्रके विषयमें भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, शल्य और शल जो कुछ जानते हैं, वह सब मुझमेंभी विद्यमान है।

हे भारत ! शत्रुनाशन दुर्य्योधन ऐसे वचन कहके, शत्रुपक्षके सब कार्य्योंके वृत्तान्तको जानकर, युद्ध करनेकी इच्छा करते हुए,समयके अनुसार जाननेके योग्य विषयोंको सञ्जयसे फिर पूछने लगे ।

६१ अध्याय समाप्त।

———

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, दुर्य्योधन सञ्जयसे इसी प्रकार सब विषयोंको पूछ रहे थे, उसी समयमें कर्ण अत्यन्त पराक्रमी और महाबली अर्ज्जुनकी कुछभी चिन्ता न करके, कौरवोंकी सभामें धृतराष्ट्र-पुत्रोंको हर्षित और आनन्दित करते हुए बोले, कि पहिले मैंने भूठ कहके अर्थात "मैं ब्राह्मणका पुत्र हूं" यह कहकर जब परशुराम जीसे ब्रह्मास्त्र ग्रहण किया था ; उस समय गुरुदेव परशुरामजीने मेरे इस महा अपराधको जान कर मुझे यह शाप दिया था, कि तुम्हारी मृत्युके समय इस ब्रह्मअस्त्रकी प्रतिभा न रहेगी, इसे तुम भूल जाओगे। वह महातेजस्वी महर्षि क्रोधित होनेसे इस समस्त पृथ्वीका भक्ष कर सकते थे, परन्तु मैंने अपनी सेवा और पुरुषार्थसे उनके चित्तको प्रसन्न कर लिया था। वह अस्त्रभी अभीतक विद्यमान है और मेरी आयुभी शेष नहीं हुई है, इससे अर्ज्जुनको जीतनेका मैंही भार लेता हूं; मैं इस विषयमें पूर्ण समर्थ हूं। ऋषिके उस परम अस्त्रको पाकर अब मैं पाञ्चाल, करुष मत्स्य और पुत्र पौत्रके सहित पाण्डवोंको क्षण मात्रमें जीत सकता हूं ; और उनको मार-कर अपने शस्त्रके प्रतापसे सब राज्यको ले लूंगा। भीष्म, द्रोण तथा औरभी मुख्यमुख्य राजा लोग आपके समीप बैठे रहें, मैं अके-लेही अपने बलके प्रभावसे युद्धमें जाकर पाण्ड-वोंको मारूंगा ; यह भार मेरेही ऊपर है।

कर्ण ऐसेही वचनोंको कह रहे थे, उसी समयमें भीष्म उनसे बोले, हे कर्ण ! कालके वशमें होकर तुम्हारी बुद्धि नाश होगई है। तुम व्यर्थ अपनी बड़ाई क्यों करते हो ? यह क्या तुम नहीं जानते हो, कि प्रधान लोगोंके मरनेहीसे धृतराष्ट्रके पुत्रोंकी मृत्यु होगी ? अर्ज्जुनने कृष्णके सङ्ग मिलकर खाण्डव वनको भस्म किया था, उस बातको समझ कर तुमको बन्धु-बान्धवोंके सहित चुप रहनाही उचित था। देवलोकके स्वामी महात्मा इन्द्रने तुमको जो शक्ति दी है, उसे तुम कृष्णके चक्रके प्रहारसे टुकड़े टुकड़े होकर जलती हुई देखोगे। हे कर्ण ! सर्पमुखी बाण जो तुम्हारे पास शोभित है, और जिसकी तुम फूलोंकी मालासे सदा पूजा किया करते हो ; वहभी अर्ज्जुनके बाणोंसे खण्डित होकर तुम्हारे सहित मृत्युको प्राप्त होगा। हे कर्ण ! जिन्होंने महायुद्धमें तुम्हारे समान बरन तुमसेभी श्रेष्ठ शत्रुओंको मारा है, वही बाणासुर तथा नरकासुरको पराजित करनेवाले कृष्ण अर्ज्जुनकी रक्षा करते हैं।

कर्ण बोले, महात्मा कृष्ण जिस प्रकारसे वर्णन किये गये, वैसेही हैं, बरन उससेभी कुछ श्रेष्ठ हैं ; इसमें कोई सन्देह नहीं है, परन्तु पितामहने जो मुझको थोड़ेसे कठोर वचन कहे, उसका फल सुनिये। मैंने इन सम्पूर्ण शस्त्रोंको त्याग दिया ; पितामह अब मुझे कभी युद्धमें न देखेंगे ; केवल सभाहीमें देखेंगे। हे पितामह ! तुम्हारे मरनेके अनन्तर सब राजा लोग मेरे प्रभाव और पराक्रमको देखेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमे-जय ! वह महा धनुर्द्धारी कर्ण ऐसा कहके सभासे उठकर अपने घरको चले गये। तब भीष्म हंसते हंसते दुर्य्योधनसे बोले, कि सूत-पुत्र कर्ण सत्यप्रतिज्ञ कहके प्रसिद्ध है। परन्तु उसने जो यह कहा, "कि कलिङ्गराज, चेदी-पति, बाह्लीक, जयद्रथ आदिके बैठे रहनेपर भी मैं अकेलाही सौ सौ हजार वीरोंको नित्य

मारूंगा" सो वह इस भारको कैसे पूरा कर सकेगा? यह देखो, भीमसेन व्यूहके विरुद्ध व्यूह बनाकर सबके शिरको तोड़कर प्राणियोंके संहार करनेमें प्रवृत्त होता है। पुरुषोंमें अधम वैकर्त्तनने जब निन्दारहित परशुरामजीके यहां "मैं ब्राह्मणका पुत्र हूं" कहके अस्त्र ग्रहण किया, तभी उसका धर्म्म और तप नष्ट होगया।

हे राजेन्द्र! भीष्मके ऐसे कहने और कर्णके शस्त्रोंको परित्याग करके चले जानेपर धृतराष्ट्रपुत्र नीचबुद्धि दुर्य्योधन शान्तनुनन्दन भीष्मसे कहने लगे।

६२ अध्याय समाप्त।

दुर्य्योधन बोले, हे पितामह पाण्डवोंका मनुष्योंकी भांति रूप है और मनुष्योंहीकी भांति उत्पन्न भये हैं; तब उन लोगोंहीकी विजय होगी, इस बातको आप कैसे स्थिर करते हैं? देखिये वीर्य्य पराक्रम, बुद्धि अवस्था, शास्त्रज्ञान, अस्त्रोंकी शिक्षा, युद्धका अभ्यास, शीघ्रता और कौशलमें वह और हम लोग सबही समान हैं; सब कोई एक जाति हैं और सबही मनुष्ययोनिसे उत्पन्न हुए हैं; तब उन्हीं लोगोंकी जीत होगी, इस बातको आप किस प्रकारसे जानते हैं? हे राजन्! मैं आपके ऊपर वा द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, वाह्लीक तथा अन्य भूपालोंके ऊपरभी युद्धके कार्य्यको निर्भर नहीं करता हूं मैं अपने पराक्रमहीसे युद्धकी तैयारी करता हूं। मैं कर्ण और मेरा भाई दुःशासन, येही तीन मनुष्य अपने चोखे बाणोंसे पांचो पाण्डवोंको मारेंगे; फिर उसके अनन्तर बहुत दक्षिणाओंसे युक्त बहुतसे महायज्ञ करके और गौ, घोड़े तथा धन दानसे मैं ब्राह्मणोंको तृप्त करूंगा। मेरे सेनापति लोग जब फांससे पकड़े हुए हरिणोंकी भांति शत्रुओंको रथ, हाथी और घोड़ोंके सहित व्याकुल देखकर उन्हें घेर लेंगे, उसी समय पाण्डव और कृष्णका गर्व्व छूट जायगा।

विदुर बोले, यथार्थ बातोंके जाननेवाले पण्डित लोग इस संसारमें दमहीको उत्तम साधन कहते हैं; विशेष करके ब्राह्मणोंके निमित्त दम सनातन धर्म्म है। दमशाली मनुष्यको दान, क्षमा और सिद्धि स्वाभाविकही उत्पन्न होती है। दम, दान, तप, ज्ञान, विद्या और तेजको बढ़ाता है; दमही उत्तम और पवित्र वस्तु है। दमके प्रभावसे मनुष्य सब पापोंसे छूटकर तथा सब तेजसेयुक्त होके परमपदको पाते हैं। राक्षसोंसे जैसे सबको भय उत्पन्न होता है, वैसेही दुष्ट पुरुषोंसेभी लोगोंको सदा भय हुआ करता है। दुष्ट अधर्म्मियोंके मारनेहीके निमित्त ब्रह्माने क्षत्रियोंको उत्पन्न किया है। पण्डितोंने चारों आश्रमोंमें दमको उत्तम कहा है। दम सब गुणोंको उत्पत्तिका स्थान है; उन सब गुणोंको दमका लक्षण कहना चाहिये। हे राजेन्द्र! जिसमें क्षमा, धृति, अहिंसा समता, सत्य, सरलता, इन्द्रियनिग्रह, धीरज, प्यारा वचन, बुरे कर्म्मोंमें चित्तका रोकना- स्थिरता; कृपणता न करनी, क्रोधका न होना, सन्तोष और श्रद्धा आदिक गुण रहते हैं, उन्हें सत्पुरुष कहते हैं। सत्पुरुषोंमें काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्षा, अभिमान, क्रोध, निद्रा, अपनी बड़ाई और शोक आदिकी विशेषता नहीं रहती। दया सत्य और पवित्रता यही सत्पुरुषोंके लक्षण हैं। जो पुरुष लोभसे रहित, थोड़ी प्राप्तिमें सन्तोषी, काम चिन्तामें न पड़नेवाले और समुद्रकी भांति गम्भीर होते हैं, वेही सत्पुरुष कहाते हैं। उत्तम चरित्रवाले, शीलसे युक्त, सदा प्रसन्न रहनेवाले आत्मतत्त्वको जाननेवाले, ज्ञानी पुरुष इस लोकमें मान और प्रतिष्ठाको पाकर अन्तमें उत्तम गतिको पाते हैं। प्राणी मात्रसे जिसे कुछ भय उत्पन्न नहीं होता, और जिससे

सब जीवोंकोभी किञ्चित डर नहीं रहता; तथा जो सब जीवोंके हितकारी बन्धु हैं; ऐसेही पुरुष पुरुषोत्तम कहाते हैं; जिनसे किसी मनुष्यको कुछभी दुःख नहीं होता; बुद्धि और ज्ञानसे तृप्त होकर वह समुद्रकी भांति एकही रूपसे निरन्तर शान्त रहते हैं। पहिले श्रेष्ठ पुरुषोंने यज्ञ आदि जिन कार्य्योंके अनुष्ठान किये हैं, तथा वर्त्तमानमें साधु पुरुष जिन कार्य्योंका आचरण करते हैं; उन्हीं कर्म्मोंको करके सत्पुरुष लोग आनन्दित होते हैं। अथवा ज्ञानसे तृप्त होकर जो मनुष्य वासना-रहित कर्म्मोंको करते हुए संसारमें निवास करते हैं, वह परम पद पानेके योग्य हैं। आकाशमें उड़ते हुए पक्षियोंके मार्गको जैसे कोई नहीं प्राप्त कर सकता, उसी भांतिसे मुनियोंका निवान स्थानभी साधारण पुरुषोंकी दृष्टिमें नहीं आता। अथवा जो गृहको त्यागके संन्यास आश्रमहीमें निवास करते हैं, उनके रहनेके निमित्त स्वर्गमें प्रकाशमान लोक तैयार रहता है।

६३ अध्याय समाप्त।

विदुर बोले, हे तात! पुराने लोगोंमें यह कथा प्रसिद्ध है कि किसी व्याधने पक्षी पकड़नेके निमित्त पृथ्वीमें अपनी जालको बिछाया था, उसमें एक सङ्ग रहनेवाले दो बूढ़े पक्षी गिरे, और दोनों मिलकर जाल समेत आकाश मार्गमें उड़ गये। तब व्याधा उन दोनोंको जाल सहित आकाशमें उड़ता हुआ देखकरभी दुःखी नहीं हुआ, और उनके पीछे पीछे वहभी दौड़ने लगा। पक्षियोंके पीछा करनेवाला व्याधा इसी भांतिसे दौड़ा हुआ जाता था। उसी अवसरमें सन्ध्या आदि कर्म्मको पूरा करके आश्रममें रहनेवाले किसी मुनिने उसे देखा। हे भारत! तब उस मुनिने इस पृथ्वीपर चलनेवाले व्याधको आकाशमें उड़नेवाले पक्षियोंके पीछे शीघ्रतासे दौड़ते हुए देखकर उसको एक श्लोकसे यह पूछा, कि "हे व्याध! तुम पैरोंसे चलनेवाले होकर जो पक्षियोंका पीछा करते हो, यह देखकर मुझे बहुतही आश्चर्य होता है।" व्याध बोला, "ये दोनों पक्षी मिलकर मेरे जालको लिये हुए उड़े जाते हैं, परन्तु जब ये आपसमें झगड़ा करेंगे, तबही मेरे वशमें हो जायंगे।"

विदुर बोले, अनन्तर वे कालग्रस्त बुद्धिहीन दोनों पक्षी आपसमें झगड़ने लगे, और दोनों लड़कर पृथ्वीमें गिरे। तब व्याधने उन दोनों पक्षियोंको जालमें फंसे हुए, क्रोधसे भरे और लड़ते हुए देख, धीरे धीरे उनके निकट जाकर दोनोंको पकड़ लिया। इसी प्रकारसे जो मनुष्य अपनी जातिके सङ्ग झगड़ा तथा लड़ाई करते हैं, वे ऊपर कहे हुए दोनों पक्षियोंकी भांति शत्रुके वशमें होजाते हैं। एकत्र होकर खाना, पीना, बात चीत, काम काजका पूछना और आपसमें मेल रखना, येही सब जातिके कार्य्य हैं। अपनी जातिसे विरोध करना कभी उचित नहीं है। जो सब जाति एक मत और अच्छी बुद्धिसे युक्त होकर बूढ़ोंकी उपासना करती हैं, वे सिंहसे रक्षित वनकी भांति विद्यमान रहती हैं। हे भरतर्षभ! जो मनुष्य बहुतसा धन उपार्ज्जन करकेभी महा दरिद्रोंकी भांति निवास करते हैं, वे शत्रुओंके हाथमें लक्ष्मीको देते हैं। हे धृतराष्ट्र! जातिके मनुष्य अलग अलग रहनेसे जलती हुई लकड़ीकी तरह बुझ जाते हैं, इकट्ठे रहनेसेही प्रज्वलित तथा प्रकाशित होते रहते हैं। हे कुरुनन्दन! मैंने पर्व्वतके ऊपर एक विषयको अवलोकन किया था, उसकोभी सुन लीजिये, तब जैसा उचित हो, वैसा कीजिये। किसी समयमें मैंने किरात और मन्त्र विद्या, धनुर्विद्या तथा और भी बहुतसी विद्याओंको जाननेवाले देवकल्प ब्राह्मणोंके सहित सिद्ध तथा गन्धर्वोंसे प्रकाशित

लताओंसे युक्त, कुञ्जकी भांति शोभायमान गन्धमादन पर्व्वतपर गमन किया था। वहांपर जाकर देखा कि पर्व्वतके ऊपर बालुकामय स्थानमें घड़ेके बराबर गहरा पीतवर्ण मधु-मक्षियोंसे रहित उस स्थान पर मधु अर्थात अमृत रहता है। यह मधु कुवेरको अत्यन्तही प्रिय है, इस निमित्त महा विषधर सर्प उसकी रक्षा करते हैं। हमारे सङ्गमें रहनेवाले पदार्थ-विद्याके जाननेवाले ब्राह्मणोंने कहा, कि इस मधुको खानेसे मनुष्य अमर होते हैं; अन्ध लोचन पाते हैं और बूढ़े युवा हो जाते हैं। अनन्तर किरातोंने उस मधुको देखके उसको ग्रहण करनेकी इच्छा करी। इससे वे लोग वहां पर सर्पोंसे भरी हुई उस भयानक पर्व्वत की कन्दरामें सांपोंके विषसे मरकर मृत्युको पहुंचे। हे महाराज तुम्हारे पुत्रभी उसी भांतिसे अकेलेही सब पृथ्वीको लेनेकी इच्छा करते हैं। ये लोग मोहमें पड़कर केवल मधुही देखते हैं, परन्तु पीछे जो मृत्युकी शंका है, उसे नहीं देखते हैं। दुर्य्योधन अर्ज्जुन सङ्ग युद्ध करनेकी इच्छा करता है, पर मैं इसका अर्ज्जुनके समान तेज वा पराक्रम कुछभी नहीं देखता हूं। अर्ज्जुनने अकेलेही एक रथसे पृथ्वीको जीता था, और विराट नगरमें बहुतसी सेना आदिके सहित युद्धके निमित्त यात्रा करनेवाले भीष्म, द्रोण, आदि महावीरोंको अकेलेही भय-भीत और पराजित किया था। उस स्थानपर दुर्य्यो-धनकी वीरता कहां गयी थी? देखिये, वह महावीर पुरुष केवल आपहीका मुंह देखकर क्षमा कर रहे हैं; परन्तु पूर्णरीतिसे क्रोधित होने पर, जब महाबलवान अर्ज्जुन, पाञ्चाल द्रुपद, मत्स्यराज विराट, युद्धमें वायुकी सहा-यतासे अग्निकी भांति प्रज्वलित होंगे, तब आपका कुछभी बाकी न छोड़ेंगे। इससे हे धृतराष्ट्र! युधिष्ठिरको अपनी गोदके भीतर करलो, क्योंकि युद्धमें प्रवृत्त होनेसे दोनों ओर वालोंकी सम्पूर्णरूपसे जीत नहीं होती।

६४ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे पुत्र दुर्य्योधन! मैं तुमसे जो वचन कहता हूं, उसे उत्तम प्रकारसे अपने हृदयमें धारण करो। अजान बटोहीकी भांति तुम कुपथहीको उत्तम मार्ग समझते हो, क्योंकि सब लोकोंके धारण करनेवाले पञ्च महाभूतोंकी तरह पांचों पाण्डवोंके तेजको हरनेकी अभिलाष करते हो। तुम परम गति और मृत्युको बिना प्रताक्षा किये, इस लोकमें परम धर्म्मात्मा कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरको कभी भी नहीं जीत सकते। जैसे वृक्ष प्रचण्ड वायुको परास्त करनेकी इच्छा करता है, वैसेही तुम भी महाबलवान युद्धमें सब शत्रुओंके नाश करनेवाले भीमसेनको जीतनेकी इच्छा करते हो। पर्व्वतोंमें सुमेरु पर्व्वतकी भांति सब शस्त्र धारियोंमें श्रेष्ठ अर्ज्जुनके सङ्ग कौन बुद्धि-मान मनुष्य युद्ध करनेके निमित्त प्रवृत्त होगा? पाञ्चालराज-पुत्र धृष्टद्युम्नही आज वज्र चलान-वाले इन्द्रके समान अपने चोखे बाणोंकी बरषा करके किस पुरुषको न मार सकेंगे? अन्धक और वृष्णिवंशमें सम्मानित महाधनुर्द्धर सात्य-कीभी तुम्हारी सेनाका नाश करेंगे। गौरव और तेज तथा पराक्रममें जो तीनों लोकको जीतनेमें समर्थ हैं; उन पुण्डरीकाक्ष कृष्णके सङ्ग कौन बुद्धिमान मनुष्य युद्ध करनेका उत्साह करेगा? उसके स्त्री, पुत्र, बन्धुबान्धव, तथा उसकी आत्मा और पृथ्वीका राज्य एक ओर रहे तोभी अकेला अर्ज्जुन एक ओर रह सकता है। अर्ज्जुनने जिसके साथ मित्रता करी है, वह कृष्णभी अजेय हैं; और जिस सेनामें कृष्ण निवास करते हैं, वह सेनाभी पृथ्वी भरमें महाबलवान है। इससे हे तात! हित करने-वाले सुहृद तथा साधु पुरुषोंके वचनमें

विश्वास करो। शान्तनुपुत्र बूढ़े पितामह भीष्मके वचनोंको ग्रहण करो। मैं जो कहता हूं, तथा कौरवोंके हितको चाहनेवाले द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, विकर्ण और महाराज वाह्लिक जो वचन कहते हैं, उसेभी ध्यान देकर सुनो। हे भारत! ये भी मेरेही समान हैं। तुम जैसे मुझे मानते हो, वैसेही इन्हेंभी समझो; क्योंकि ये सबही धर्म्मात्मा और मेरे समान तुमसे स्नेह करते हैं। विराट नगरमें जब तुम्हारे भाइयोंके सहित सब सेना अर्ज्जुनके डरसे व्याकुल होकर गौओंको छोड़के तुम्हारे सम्मुखही भाग गई थी; और वहांपर जो अनेक वीरोंके सङ्ग अकेले अर्ज्जुनका आश्चर्य्य युद्ध सुना जाता है, वही इसमें यथेष्ट प्रमाण है। अर्ज्जुनने जब अकेलेही तुम्हारी सब सेनाको पराजित किया था, तब इस समय सब पाण्डव और अन्य वीरोंके सङ्ग मिलकर जो कौरवोंका नाश करेगा, इसमें क्या सन्देह है? इससे तुम पाण्डवोंके सङ्ग यथार्थ भ्रातभावको ग्रहण करो और प्रेमपूर्व्वक उनकी आज्ञाका पालन करो।

६५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महाबुद्धिमान् महात्मा धृतराष्ट्र दुर्य्योधनसे ऐसा वचन कहकर फिर सञ्जयसे पूछने लगे, हे सञ्जय! कृष्णके अनन्तर अर्ज्जुनने जो कुछ वचन कहे हैं, वह तुम मुझसे कहो; क्योंकि उन वचनोंके सुननेकी मुझे बहुतही इच्छा है।

सञ्जय बोले, कुन्तिपुत्र महात्मा अर्ज्जुन श्रीकृष्णकी बातोंको सुनकर उनके सम्मुखही मुझसे कहने लगे, हे सञ्जय! तुम पितामह शान्तनुपुत्र भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, धृतराष्ट्र, कर्ण महाराज वाह्लिक, अश्वत्थामा, सोमदत्त, सुबलपुत्र शकुनि, दुःशासन, शल्य, पुरुमित्र, विविंशति, विकर्ण, चित्रसेन, जयत्सेन, अवन्तिपति विन्द और अनुविन्द, कौरववंशीय जयद्रथ, दुर्म्मुख, भूरिश्रवा, दुःसह, भगदत्त, जलसन्ध और पाण्डवरूपी अग्निमें होमके निमित्त जो सब महात्मा राजा लोग दुर्य्योधनके आमन्त्रणसे कौरवोंके प्रियकार्य्यको करनेके निमित्त युद्धके वास्ते आकर इकट्ठे हुए हैं, उन सबसे मेरे वचनके अनुसार कुशल क्षेम पूछना; इसके अनन्तर पापियोंके अग्रगामी दुर्य्योधनसे राजाओंके बीचमें यह वचन कहना। हे सञ्जय! वह क्रोधी, नीचबुद्धि, पापी, महालोभी राजपुत्र दुर्य्योधन जिस प्रकारसे दुष्ट मित्रों तथा अनुयायियोंके सहित मेरे वचनोंको सुन सके, तुम वैसाही उपाय करना। रक्तवर्ण बड़ी आंख और विशाल-भुज अर्ज्जुनने मुझे इस प्रकारसे वचन-वद्ध करके, अन्तमें कृष्णके मुहकी ओर देखके धर्म्म और अर्थसे भरे वचनोंको कहना आरम्भ किया कि "तुमने यदुकुलश्रेष्ठ, बोलनेवालोंमें उत्तम महात्मा श्रीकृष्णचन्द्रके समाधानयुक्त वचनोंको जैसे सुना है, कौरवोंकी सभामें सब राजाओंके बीच मेरे वचनकोभी उसी भांतिसे कहना। उसमेंसे यही एक बात विशेषरूपसे कहना कि हे राजा लोग! जिससे संग्राम-भूमिमें शस्त्ररूपी घृत, धनुषरूपी स्रुवा, रथरूपी वायुसे युक्त महाबाणरूपी अग्निमें होमका कार्य्य समाप्त न करना पड़े, तुम सब लोग इकट्ठे होकर उस विषयमें विशेष यत्नवान होना। यदि तुम लोग शत्रुनाशन युधिष्ठिरको उनके मांगनेके अनुसार राज्यका अंश न प्रदान करोगे, तो मैं अपने तेज वाणोंकी सहायतासे रथ, घोड़े, हाथी और पैदल समेत तुम लोगोंको यमपुरीमें पहुंचा दूंगा। हे महाराज! अनन्तर मैं यथा उचित बातचीत तथा कृष्ण और अर्ज्जुनको नमस्कार करके आपके निकट उन उदार

बचनोंको कहनेके निमित्त शीघ्रता सहित यहां पर आके उपस्थित हुआ हूं।

६६ अध्याय समाप्त ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, धृतराष्ट्रपुत्र दुर्य्योधनने सञ्जयके बचनोंका अनादर किया, और सबने मौनव्रत धारण किया। अनन्तर सभासे सब राजालोग उठके अपने अपने स्थानपर गये। हे महाराज! पृथ्वीके सब राजाओंके सभासे चले जानेपर पुत्रके वशवर्त्ती राजा धृतराष्ट्र पुत्रोंके विजयकी इच्छा करते हुए अपना पाण्डवोंका और दूसरे लोगोंका इस विषयमें किस प्रकारका निश्चय है; इस विषयको सञ्जयसे एकान्तमें पूछने लगे।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! मेरी अपनी सेनामें जो कुछ सार विषय है, उसे तुम वर्णन करो। और तुम पाण्डवोंके समस्त वृत्तान्तोंको भी जानते हो, इससे उन लोगोंमें जो कुछ उत्तम वा निकृष्ट विषय हो, उसे भी ज्योंका त्यों वर्णन करो। तुम दोनों पक्षके सार विषयका जाननेवाले, सर्व्वदर्शी, धर्म्म और अर्थके विषयमें भी निपुण तथा सब कार्य्योंके निश्चय करनेवाले हो; मैं इसी निमित्त तुमसे पूछता हूं, तुम सब बातोंका प्रकाशित करके मुझसे कहो, युद्धमें प्रवृत्त होनेसे कौन पक्ष नष्ट होगा?

सञ्जय बोले, हे राजन्! मैं निर्ज्जन स्थानमें आपसे कभी कुछ वचन न कहूंगा, क्योंकि इससे आप पापग्रस्थ होंगे; इस निमित्त महाव्रत करनेवाले पिता व्यासदेव और माता गान्धारीको बुलाइये वे लोग धर्म्मको जाननेवाले, सब कार्य्योंमें निपुण और निश्चय करनेवाले हैं, वे आपको इस वचनरूपी चोरीके पापसे मुक्त कर सकेंगे। हे राजेन्द्र! उन्हीके सम्मुखमें मैं कृष्ण और अर्ज्जुनके सम्पूर्ण अभिप्रायको प्रकाशित करके कहूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, ऐसे बचनको सुनकर राजा धृतराष्ट्रने विदुरके द्वारा गान्धारी और व्यासदेवको वहांपर बुलवाया और उन लोगोंने भी शीघ्रही आकर सभामें प्रवेश किया। अनन्तर महाबुद्धिमान कृष्णद्वैपायन सञ्जय और अपने पुत्र धृतराष्ट्रके मनके अभिप्रायको जानकर, उसे अनुमोदन करके सञ्जयसे कहा, ये तुमसे जो बचन पूछते हैं,—तुम कृष्ण और अर्ज्जुनके विषयमें जो कुछ बात जानते हो, उसे इस जिज्ञासु धृतराष्ट्रके निकट ज्योंका त्यों वर्णन करो।

६७ अध्याय समाप्त ।

सञ्जय बोले, परम-पूजित धनुर्द्धारी कृष्ण और अर्ज्जुन सबके संहार करनेके निमित्त सम्मत होकर बदरिकाश्रमसे भारतवर्षमें उत्पन्न हुए हैं। हे महाराज। महात्मा श्रीकृष्णका कालरूपी चक्र पांच हाथके परिमान स्थानमें व्याप्त हो रहा है। तेज पुञ्जसे प्रकाशित वह चक्र अज्ञातरूपसे कौरवोंके निमित्त विराजमान है; पाण्डवोंके सार और असार बलको जाननेके निमित्त वही एक उत्तम प्रमाण है। महाबलवान श्रीकृष्णचन्द्रने क्रीड़ा करते करते नरकासुर, कंस और चेदीपति शिशुपालका नाश किया था। ऐश्वर्य्यवान् महात्मा कृष्ण इच्छा मात्रसे पृथ्वी, आकाश तथा स्वर्गको अपने वशमें कर सकते हैं। हे राजन्! आप जो सार और असार विषयोंको जाननेके निमित्त बार बार पाण्डवोंकी बातको पूछते हैं, उसे संक्षेपमें सुनिये। यदि सब संसार एक ओर और जनार्द्दन कृष्ण एक तरफ रहें, तौभी कृष्णही सम्पूर्ण जगतसे अधिक हो सकते हैं। वे अपनी इच्छा मात्रसे सब संसारको भस्म कर सकते हैं, परन्तु उन्हें भस्म करनेके निमित्त यह सारा संसार भी समर्थ नहीं है। जहांपर सत्य, धर्म्म, लज्जा और कोमलता रहती है, उसी स्थानपर गोविन्द कृष्ण निवास करते हैं।

जिसकी ओर कृष्ण रहते हैं, उसकीही जय होती है। प्राणियोंकी आत्मामें जनार्दन श्रीकृष्ण लीला करते विराजते हैं और पृथ्वी, अन्तरिक्ष और स्वर्गकी नियत सीमापर चलाते हैं। मुझे मालूम होता है, कि वे सब लोगोंको मोह उत्पन्न करनेकी अभिलाषासे पाण्डवोंको नाम मात्रका अगुवा बनाके आपके अधर्ममें रत पुत्रोंको नाश करनेकी इच्छा करते हैं। भगवान कृष्ण चैतन्यता तथा अपनी योग-मायासे कालचक्र,जगतचक्र और कर्म्मचक्रोंको सदाही परिवर्त्तित (उलट पलट) किया करते हैं। मैं आपसे यह सत्य कहता हूं, कि वही एक मात्र भगवान् कृष्ण काल, मृत्यु स्थावर और जङ्गम सम्पूर्ण जगतके ऊपर अपनी प्रभुता कर रहे हैं। महायोगी हरि जगतके स्वामी होकरभी दुर्ब्बल दरिद्रकी भांति कर्म्म करना आरम्भ करते हैं; और उस माया भोगसे सब लोकोंको वञ्चित करते हैं। जो मनुष्य उनके यथार्थ रूपको ग्रहण करते हैं; वे कभी मोहमें नहीं पड़ते।

६८ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! तुमने कृष्णको किस प्रकारसे सब लोकोंका ईश्वर जाना? और मैं क्यों नहीं उनको जान सकता हूं, यह तुम मुझसे कहो।

सञ्जय बोले, हे राजन्! इसका कारण सुनिये। आपको विद्या नहीं है; परन्तु मेरी विद्या नष्ट नहीं हुई है। जो मनुष्य विद्याहीन और तमोगुणसे युक्त रहता है, वह ब्रह्म-प्रतिपादक वाक्योंके तात्पर्य्यको ग्रहण नहीं कर सकता; निर्विषयानन्द मात्र अपने आत्मस्वरूपसे भ्रष्ट हो जाता है, इसी कारणसे वह श्रीकृष्ण भगवानको नहीं जान सकता है। हे तात! मैं विद्याके प्रभावसे उन महात्मा कृष्णको त्रियुग (स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरसे युक्त) कर्त्ता और कुछभी न करनेवाला लीला करनेवाला, सब प्राणियोंकी उत्पत्ति और नाशका हेतु समझता हूं।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! जनार्द्दन कृष्णमें जो तुम्हारी सब दिनसे इस प्रकारकी भक्ति है, वह कैसे हुई, जिससे तुम उनको त्रियुग (स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरसे युक्त) जानते हो?

सञ्जय बोले, हे राजन्! आपका कल्याण हो; मैं स्त्री पुत्र आदिके मोहमें पड़कर अवि-द्याका सेवन नहीं करता हूं; और ईश्वरको विना समर्पण किये वृथा धर्म्मके आचरणमें भी मेरी प्रवृत्ति नहीं होती। केवल भक्ति-योग और शुद्धभावसे जनार्द्दन कृष्णको जानता हूं।

धृतराष्ट्र बोले, हे दुर्य्योधन! तुम हृषीकेश कृष्णकी उपासना करो। हे तात! सञ्जय हम लोगोंके अत्यन्तही विश्वासपात्र हैं, इससे इनके वचनोंको मानकर तुम श्रीकृष्णकी शरणमें चले जाओ।

दुर्य्योधन बोले, हे राजन्! देवकीपुत्र कृष्ण यदि अर्ज्जुनके सङ्ग मिलकर सब लोकोंके संहार करनेपर उद्यत होंगे, तौभी मैं इस समय उनको शरणमें न जाऊंगा।

धृतराष्ट्र बोले,हे गान्धारी! यह ईर्षक,दुरात्मा, अभिमानी, हित चाहनेवालोंकी बातोंको न माननेवाला, नीचबुद्धि, तुम्हारा पुत्र केवल कालके वशमें होकर पतित हुआ चाहता है।

गान्धारी बोली, रे ऐश्वर्य्यकामी! दुरात्मा! अरे मूर्ख! तू बूढ़ोंके वचनोंको न मानकर, पिताको तथा मुझेभी त्यागके और ऐश्वर्य्य जीवन और सुखकी आशाको छोड़कर, शत्रु-ओंके आनन्द और हम लोगोंके शोकको बढ़ाता हुआ, जब भीमसेनके हाथसे मारा जायगा, तभी पिताके वचनोंको स्मरण करेगा।

श्रीव्यासदेवजी बोले, हे राजन् धृतराष्ट्र! मैं तुमसे जो वचन कहता हूं, उसे तुम सुनो। तुम

कृष्णके प्रियपात्र हो; सञ्जय जब तुम्हारे दूत हुए हैं, तब ये तुम्हारे कल्याणके निमित्त अवश्य यत्न करेंगे। ये सनातन भगवान हृषीकेशको पूर्ण रूपसे जानते हैं; इससे यदि तुम एकाग्र चित्तसे सुननेकी इच्छा करोगे, तो ये तुमको महाभयसे मुक्त कर देंगे। हे धृतराष्ट्र! मनुष्य लोग क्रोध और हर्षसे युक्त होकर अनेक बन्धनोंसे बंधे हुए हैं; जो अपने उपार्जित धन आदिसे सन्तुष्ट नहीं होता, वह अन्धेके पीछे चलनेवाले अन्धेकी भांति अपने कर्म्मोंसे बार बार मृत्युके वशमें पड़ता है। जिस मार्गसे बुद्धिमान महात्मा साधु पुरुष चलते हैं, वही ब्रह्मको प्राप्त करनेका एक मात्र सुगम मार्ग है। बुद्धिमान पुरुष उसी मार्गको जानकर जन्ममरणके क्लेशोंसे छूट जाते हैं।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! जिस मार्गमें कुछभी भयकी सम्भावना नहीं है, जिसके द्वारा मैं जनार्द्दन कृष्णको जानकर उत्तम सिद्धिको प्राप्त करूं, उसी मार्गका तुम मुझसे वर्णन करो।

सञ्जय बोले, हे महाराज! आत्मतत्त्वको न जाननेवाला पुरुष जैसे कृतात्मा जनार्द्दनको नहीं जान सकता है, वैसेही आत्मक्रियाका उपायभी बिना इन्द्रिय निग्रहके नहीं हो सकता। विषयोंमें लगी हुई इन्द्रियोंकी विषयकार्य्योंसे निवृत्ति केवल अप्रमादहीसे होती है। अप्रमाद और हिंसाका त्याग येही दोनों ज्ञानकी उत्पत्तिके स्थान हैं, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। हे राजन्! इससे आप आलसको छोड़कर इन्द्रिय-निग्रहके निमित्त यत्नवान होइये। आपकी बुद्धि जिसमें तत्त्वमार्गसे भ्रष्ट न हो जाय, इस निमित्त आप उसे सब विषयोंसे खींचके निवृत्त करें। ब्राह्मण लोग इन्द्रिय-संयमकोही निश्चल ज्ञान कहते हैं। यही ज्ञान है; और बुद्धिमान् महात्मा उत्तम पुरुष जिस पथसे गमन करते हैं, वही मार्ग है, हे राजन्! इन्द्रियोंको न जीतनेवाले पुरुष, भगवन् केशवको नहीं जान सकते; इन्द्रियोंके जीतनेवाले पुरुषही प्राप्त हुए योगप्रभावसे उनके तत्त्वज्ञानको पाते हैं।

६८ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! मैं तुमसे फिर पूछता हूं, इससे तुम मुझसे पुनर्व्वार पुण्डरीकाक्षका वर्णन करो। हे तात! मैं उनके नाम और कर्म्मके अर्थोंको जाननेसेही उन्हें प्राप्त कर सकूंगा।

सञ्जय बोले, मैं जितना स्मरण कर सकता हूं, उतनेही परिमानसे श्रीकृष्णचन्द्रके शुभ नामोंको सुना है; क्योंकि केशवके नाम और कर्म्मोंकी गिनती नहीं हो सकती। सब प्राणियोंके वसन अर्थात मायासे आवरण करनेके कारण वसुत्व अर्थात तेजमय तथा देवतोंकेभी कारण होनेसे उनका नाम वासुदेव हैं; और व्यापक होनेसे विष्णु शब्दसे पुकारे जाते हैं। हे भारत! वह मुनियोंके कर्म्मतत्त्वकी आलोचना, निश्चित तत्त्वोंमें चित्तको लगाने और निरोध करनेसे माधव कहाते हैं। मध नामक दैत्य और मधु शब्दसे कहे पृथ्वी आदि चौबीस तत्त्वोंके संहार करनेसे उनका मधुसूदन नाम है। कृषि शब्द सत्ताका बोधक है, और ण शब्द सुखवाचक है इन दोनों शब्दोंके भावार्थके अनुसार यदुकुलमें उत्पन्न होनेसे कृष्ण नाम हुआ है। पुण्डरीक शब्दसे उनका परम धाम तथा स्वरूपका बोध होता है; यह धाम नित्य, अक्षय और अव्यय है; अक्षय पुण्डरीकके कारणसे वह पुण्डरीकाक्ष कहे जाते हैं। दुष्टोंको भय देने तथा संहार करनेसे उनका नाम जनार्द्दन हुआ है। उनसे कभी सतोगुण पृथक नहीं होता, और वहभी सतोगुणसे भ्रष्ट नहीं होते; इसी निमित्त उनका नाम सात्वत है। वृष शब्दसे ज्योतिका

अर्थ होता है; धर्म्मकी ज्योति अर्थात वेद जिससे उत्पन्न होते हैं, वेही वेद जिसके जाननेके निमित्त इच्छण अर्थात चक्षुस्वरूप हैं; कृष्ण वेदके जाननेवाले पुरुष हैं, इसीसे उनका नाम वृषभेक्षण है। युद्धको जीतनेवाले केशवका कोई उत्पन्न करनेवाला तथा जन्मदाता नहीं है, इसीसे उनका अज नाम हुआ है। दाम शब्दसे दमशाली और उदर उत्तम रूपसे प्रकाशितका बोध होता है। सर्व्वव्यापक मधुसूदन दमशाली और इन्द्रियोंके बीच स्वयं प्रकाशित होकर दामोदर नामको धारण किये हैं, जिससे हर्ष प्राप्त होता है, उसी अर्थसे हृषीकेष शब्द बना है, इसका अर्थ स्वरूपानन्द और ईष शब्दका ऐश्वर्य्यवान अर्थ है; कृष्णको हर्ष, सुख और ऐश्वर्य्य है, इसीसे उनका नाम हृषीकेष हुआ है। उन्होंने अपने भुजाओंसे पृथ्वी और स्वर्गका धारण किया है, इसीसे उनका नाम महाबाहु विख्यात हुआ है। अधः प्रदेशमें उनका कभी क्षय नहीं होता अर्थात वे संसार धर्म्ममें कभी लिप्त नहीं होते; इससे उनका नाम अधोक्षज है। और मनुष्योंके अयन अर्थात आश्रयके स्थानके कारणसे उनका नाम नारायण विख्यात हुआ है। जो पूरण करते हैं, उन्हें "पुरु" और जिसमें समाप्त होता है उसे "ष" कहते हैं; इन दोनों शब्दोंके योगसे पुरुष शब्द बनता है; कृष्ण संसारकी सृष्टि करके संहार करते हैं; इसीसे वे पुरुषोंमें उत्तम पुरुष भये हैं; इसी कारणसे उनका नाम पुरुषोत्तम हुआ है। वह समस्त कार्य्य और कारणको उत्पत्ति और विनाशके मूल हैं, और सदा ही सब विषयोंको जानते रहते हैं; इसीसे पण्डित लोग उन्हें सर्व्वज्ञ कहते हैं। कृष्ण सत्यसे प्रतिष्ठित हैं, और सत्य कृष्णमें प्रतिष्ठित है; गोविन्द सत्यसेभी सत्य नाम है, इससे सत्यभी उनका नाम है। वह विक्रमके कारणसे विष्णु और जयसे जिष्णु; नित्यतासे अनन्त और गो अर्थात गद्य-पद्य वाक्योंके जाननेसे गोविन्द कहे जाते हैं। वह मिथ्याभूत जगतके प्रपञ्चको अपने तेजसे प्रकाशित करके सत्यकी भांति प्रतीयमान (बोधित) करके उससे सब प्राणियोंको मोहित करते रहते रहते हैं। इसी प्रकारसे धर्म्मनित्य महाबाहु भगवान मधुसूदन अच्युत कौरवोंके कल्याणके निमित्त यहां आगमन करेंगे।

७० अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! परम देहसे प्रकाशमान और सब दिशाओंमें प्रकाशित वासुदेवको जो अपने समीपहीमें देखेंगे, उन नेत्रसे युक्त सब मनुष्योंके भाग्यको मैं धन्य समझता हूं। सब कौरवलोग भरतवंशियोंमें पूजनीय, सृञ्जयोंके कल्याणको चाहनेवाले, ऐश्वर्य्यकामी मनुष्योंको ग्रहण करनेवाले, निन्दा रहित, बचनामृतके प्रभावसे सबको मोहित करनेवाले, उद्यमशाली, यदुवंशियोंमें श्रेष्ठ, आहितोय वृष्णिवीर श्रीकृष्णभी अपने उदार बचनोंसे मेरी सभाके सब लोगोंको मोहित करेंगे, उन सनातन आत्मतत्त्वज्ञ ऋषि, बचनके समुद्र, योगियोंके कलस अर्थात अनायासही प्राप्त होनेवाले, शोभायमान पक्षयुक्त अरिष्टनेमि नामक गरुड़, प्राणियोंके संहार करनेवाले, जगतके दीपक, विश्वयोनि, अज, नित्य श्रेष्ठ, आदि मध्य, आदि सीमासे रहित, अनन्तकीर्त्तिमान और सहस्र-शीर्षक पुरुषको मैं अपना रक्षक रूपसे जानूंगा, तथा उनकी आज्ञा करूंगा। वह तीनों लोकोंके बनानेवाले देवता, असुर, नाग, राक्षस आदि प्राणियोंके उत्पन्न करनेवाले, विद्यासे युक्त, राजाश्रेष्ठ, परात्पर हैं, मैं उनका शरणागत होऊंगा।

७१ अध्याय और सञ्जययान पर्व्व समाप्त।

अथ भगवद्यान पर्व्व ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले हे राजन् जनमेजय ! सञ्जयके हस्तिनापुर जानेके अनन्तर धर्म्मराज युधिष्ठिरने यदुकुलश्रेष्ठ कृष्णसे कहा, हे मित्रवत्सल ! मित्रगणको मित्रता दिखानेके निमित्त यही एक यथार्थ समय उपस्थित हुआ है ; तुम्हारे अतिरिक्त मैं और किसी पुरुषकोभी ऐसा नहीं देखता हूं कि जो हम लोगोंको इस उपस्थित विपदसे मुक्त कर सके । तुम्हारेही भरोसे हम निर्भयता पूर्व्वक तथा अभिमानी दुर्य्योधनके समीप अपने राज्यप्राप्तिके अंशके निमित्त अभियोग कर सकेंगे । हे शत्रुनाशन ! सब प्रकारकी आपदोंसे जैसे तुम यदुवंशियोंका उद्धार करते रहते हो ; इस समय पाण्डव लोगभी उसी प्रकारसे तुम्हारी रक्षा करनेके योग्य हैं ; तुम इस महा भयसे हम लोगोंकी रक्षा करो ।

श्रीभगवान बोले, हे महाबाहो ! यही मैं उपस्थित हूं, जो कुछ कहना हो, उसे कहिये । हे भारत ! आप मुझे जो कुछ आज्ञा करेंगे, मैं निःसन्देह उसको पूर्ण करूंगा ।

युधिष्ठिर बोले, धृतराष्ट्र और उनके पुत्रको जो कुछ अभिलाषा है, वह सब तुमने सुना है । सञ्जयने आकर जो कुछ वचन कहे, वे धृतराष्ट्रकी सम्मतिसे अतिरिक्त कुछभी नहीं हैं । सञ्जयको धृतराष्ट्रकी आत्माही कहनी चाहिये, उससे केवल मूर्त्तिभेद मात्र है । विशेषतः दूत लोग अपने स्वामीके कहे हुए वचनोंको ज्योंका त्यों कहा करते हैं । ऐसा न करनेसे वे अन्यथा वचनोंके कहनेवाले होकर बध किये जानेके योग्य होते हैं । राजा धृतराष्ट्र मेरी समझमें पाप और लोभसे युक्त होकर हम लोगोंको राज्य बिना दियेही शान्ति स्थापन करनेकी इच्छा करते हैं ! हे प्रभाव सम्पन्न कृष्ण ! धृतराष्ट्र हम लोगोंकी उसी प्रतिज्ञामें दृढ़ रहे ऐसाही समझकर मैंने उनकी आज्ञाके अनुसार बारह वर्ष वन वास और एक वर्ष छिपकरभी निवास किया, हम लोगोंने किसी प्रकारसे उस प्रतिज्ञाको न तोड़ा उसको हमारे सङ्ग रहनेवाले ब्राह्मण लोगही जानते हैं ! इस समय बूढ़े राजा दुष्टोंके शासनके वशवर्त्ती होकर पुत्रके स्नेहमें पड़कर, अपने धर्म्मकी ओर दृष्टि नहीं करते हैं । हे जनार्दन ! वह दुर्य्योधनके वशमें होकर; लोभमें पड़के, हम लोगोंके सङ्ग बहुतही मिथ्या आचरण कर रहे हैं । मैं जो अपनी जननी और मित्रोंके निमित्त कोई मङ्गल कार्य्य करनेमें असमर्थ होता हूं, इससे बढ़के और दूसरा दुःख मुझे क्या होगा ? हे मधुसूदन ! काशीराज, चंदोपति, पाञ्चालराज और मत्स्यराज तथा तुम मेरी सहायता करनेके निमित्त उपस्थित हो, तोभी मैंने केवल पांच गांवहीके निमित्त अन्ध राजा धृतराष्ट्रके समीप इस प्रकारसे निवेदन किया था, कि "हे तात ! आवस्थल, वृकस्थल, माकन्दी, वारणावत और दूसरा कोई एक गांव, येही पांच गांव वा नगर मुझे दे दीजिये, हम पांचो भाई मिलकर उन्हीं स्थानोंमें निवास करेंगे ; भरतवंशका नाश हो, यह किसी प्रकारसे मेरे मतसे युक्त नहीं है ।" परन्तु दुष्टात्मा धृतराष्ट्रपुत्र दुर्य्योधन स्वयं प्रभु बनकर पांच गांवभी देनेमें सम्मत नहीं होता है ; इससे अधिक दुःखका विषय और क्या हो सकता है ? हे कृष्ण ! जो मनुष्य उत्तम कुलमें उत्पन्न और विद्या, ज्ञान तथा उत्तम शिक्षासे बढ़कर, पराये धनको लेनेकेवास्ते लोभ करते हैं, उनका वह लोभही उनकी बुद्धिका नाश करनेका कारण होता है, बुद्धिके नाश होनेसे लज्जा छूट जाती है ; लज्जा छूटनेसे धर्म्मका नाश होजाता है ; धर्म्म नाश होनेसे श्रीको तेजहीन करता है ; श्रीसे भ्रष्ट होनेसेही पुरुषका नाश होजाता है ; क्योंकि दरिद्रताही पुरुषकी मृत्यु है । जैसे पक्षी लोग सब ओर पुष्पसे हीन वृक्षको

छोड़ कर चले जाते हैं, वैसेही निर्द्धन मनुष्यको दृष्ट-मित्र, जातिके लोग तथा ब्राह्मण लोगभी त्याग देते हैं। हे तात? प्राणवायु जैसे मृतक पुरुषको छोड़कर चल देती है, वैसेही जातिके लोग निर्द्धन समझके पतितको भांति मुझे परित्याग करेंगे वही मेरो मृत्यु होगो। सम्बरने कहा था कि "जिस अवस्थामें आज घरमें अन्न नहीं है, कल क्या होगा, सदा ऐसोही चिन्ता लगी रहतो है, उससे बढ़के पापोकी और क्या दशा हो सकती है? संसारके तत्वको जाननेवाले पण्डितोंने धनको परम धर्म्म कहा है, क्योंकि धनही सबका मूलाधार है। इस संसारमें धनवान मनुष्यही यथार्थमें जीवित रहते हैं, जो लोग निर्द्धन हैं, हैं, वे जीते रहनेपरभी मरे हुएके समान हैं। जो लोग अपने बलसे दूसरेके धनको हर लेते हैं, वे लोग केवल उसकाही नाश करते हैं, सो नहीं; बरन वे लोग धर्म्म, अर्थ, काम सबहीका नाश कर देते हैं। दरिद्रताको पानेसे कितनेही मनुष्य मरनेकी इच्छा करते हैं; कितनेही नगरको छोड़के गावोंमें जाकर बास करते हैं; कितनेही परिव्राजक धर्म्म तथा संन्यासको अवलम्बन करके बनवासी होजाते हैं; कितनेही मनुष्योंकी लोलाको शेष करके मृत्युको शरणमें चले जाते हैं। धनके निमित्त कितनेही पागल होजाते हैं, बहुतसे लोग शत्रुओंके वशमें होजाते हैं; और कितनेही मनुष्य दूसरेकी दासवृत्ति तथा सेवाकाही स्वीकार कर लेते हैं। पुरुषका धन नाशरूपी जो बिपद होती है, वह मृत्युसे भी बढ़के है, क्योंकि धनही उसके धर्म्म और कामका एकमात्र साधन है। उसको धर्म्मके अनुसार जो मृत्यु है, वह तो सब कालही लोकमें उपस्थित रहती है, उसको कोई भी अतिक्रम नहीं कर सकता। और जो मनुष्य बहुत धन तथा सम्पत्तिको पाकर सदा सुख आदिको भोगता रहता है, अन्तमें धनहीन होजाता है; उसको जैसा दुःख और क्लेश होता है, वैसा स्वाभाविक दरिद्र पुरुषको नहीं होता। धनसे होन होनेपर उस समय मनुष्य इन्द्र आदि देवताओंके ऊपर दोषारोप करने लगता है; अपनी निन्दा किसी प्रकारसे नहीं करता। उस समय सम्पूर्ण शास्त्रको शिक्षा भी उसके दुःखको नाश करनेमें समर्थ नहीं होती। वह कभी भृत्य-वर्गों (नोकरों) पर अपने क्रोधको प्रकाशित करता है, कभी ईर्षाके वशमें होकर सुहृद लोगोंको दोषी कहा करता है। इसी प्रकारसे क्रोधके वशमें होके मोहसे कठोर और क्रूरकर्म्मोंका अनुष्ठान करता है; और पापमें आसक्त होकर जातिको नाश करनेका कारण होता है। जातिको नाश करनेवाले, जो पापियोंके अग्रगामी और नरक प्राप्तिके कारण होते हैं, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। पाप करनेवाला मनुष्य यदि किसी प्रकारसे शान्त न हो सके, तो उसे अवश्य नरकमें जाना पड़ता है। एकमात्र लज्जाके अतिरिक्त उसकी शान्तिका और दूसरा कुछ भी उपाय नहीं है। ज्ञानके नेत्रको प्राप्त करनेसे, वह पाप-कर्म्मसे किञ्चित पार हो सकता है। ज्ञानके पानेसेही मनुष्य सब शास्त्रको बातोंको जान सकता है; और शास्त्रमें निष्ठावान् होके धर्म्मका अनुष्ठान करनेमें प्रवृत्त होता है। उस समय लज्जा उसकी मुख्य अङ्ग होजाती है; जिसको लज्जा रहती है, उसीको श्री और समृद्धि बढ़ती है। जबतक पुरुष लक्ष्मीवान् रहता है, तभीतक उसको यथार्थ पुरुष मानते हैं। जो सदाही धर्म्मकार्य्योंके करनेवाले और शान्त-स्वभावके पुरुष होते हैं, वे सदा विचार-पूर्व्वक कार्य्य करते हैं। उनकी बुद्धि कभी अधर्म्म कर्म्मोंके करनेमें नहीं जाती और और न वह पापमें प्रवृत्त होते हैं। लज्जा रहित व्यक्ति

चाहे स्त्री हो चाहे पुरुष उसका धर्म्ममें अधिकार नहीं रहता; वह शूद्रकी भांति निकृष्ट मनुष्योंमें गिना जाता है। तेजस्वी पुरुष देवता, पितर और आत्माकी प्रीतिके निमित्त उत्तम कार्य्योंको करते हैं; और उससे मुक्तिको पाते हैं। मुक्तिही पुण्यकर्म्म करनेवाले मनुष्योंकी अन्तिम सीमा है। हे मधुसूदन! मैंने जो वचन कहे उन्हें मुझमें तुम प्रत्यक्ष देख रहे हो; हम लोग राज्यसे भ्रष्ट होकर जिस प्रकारसे कई वर्षोंको बिताते हुए निवास कर रहे हैं, वह भी तुमसे छिपा नहीं है; इससे अब वर्त्तमान समयमें हम किसी न्यायके अनुसारभी लक्ष्मीका परित्याग नहीं कर सकते। अपने राज्यको लेनेके निमित्त यत्न करनेमें यदि हम लोगोंकी मृत्यु होजाय तो वह भी उत्तम है। हे माधव! इस विषयमें हम लोगोंका पहिला विचार यही है, कि हम सब आपसमें सन्धि करके सम्पूर्ण राज्यको बराबर हिस्सोंमें बांटके शान्तिपूर्व्वक राज्यका भोग करें। यदि किसी प्रकारसेभी यह कार्य्य पूरा न हो, तो मेरी इच्छा न रहनेपरभी कौरवोंका वध करके अपने राज्यों जिसको कि उन लोगोंने हर लिया है, उसको फिर भी लेना पड़ेगा। परन्तु युद्धमें प्रवृत्त होकर महा-भयङ्कर संहार कर्म्मको करना बहुतही निकृष्ट और निन्दनीय है। हे कृष्ण! जो सब शत्रु अत्यन्तही नीच-वृत्ति और अपनी प्रतिकूलताको करते रहते हैं, जिनके सङ्ग कुछभी सम्बन्ध नहीं रहता, उनकाभी वध करना अनुचित कार्य्य है। परन्तु जिनके साथ इस प्रकारका अत्यन्त निकट सम्बन्ध है, उन कौरवोंकी बातको मैं क्या कहूंगा? अनगिनत जातिके लोगों तथा गुरुजनोंके वध करनेसे जो महापापका कर्म्म होगा, उसमें और क्या सन्देह है? इससे युद्ध करनेसे किसी भांतिसे मङ्गल तथा कल्याणकी सम्भावना नहीं दीख पड़ती है। परन्तु यह पापमय कर्म्मही क्षत्रियोंका धर्म्म होरहा है। और हम लोगोंनेभी इसी अधम क्षत्रियकुलमें जन्म ग्रहण किया है; इससे धर्म्म हो अथवा अधर्म्म हो, युद्धके अतिरिक्त अन्य कर्म्म हम लोगोंके पक्षमें निन्दनीय है। शूद्र लोग सेवा करते हैं, वैश्य लोग वाणिज्य करते हैं; हम लोग हिंसा कर्म्मको करते हैं; और ब्राह्मण लोग भिक्षावृत्तिसे अपना निर्व्वाह करते हैं; यही सनातन धर्म्म है। हे कृष्ण! जिसका जैसा धर्म्म है, उसीके अनुकूल कार्य्य करनेमें वह प्रवृत्त होता है। देखिये जैसे मछरी मछरियोंसे अपने जीवनको धारण करती हैं, और कुत्ते कुत्तोंकी हिंसा करते हैं; उसी भांतिसे क्षत्रिय लोगभी क्षत्रियोंका वध किया करते हैं। हे कृष्ण! युद्ध स्थानमें कलियुग सदाही समीप रहता है, क्योंकि युद्धमें बड़े बड़े महात्मा अनायासही मारे जाते हैं। बल नीतिके ऊपर निर्भर करता है, यह ठीक है; परन्तु जीतना और हारना यह दैवहीके आधीन है। हे यदुकुलश्रेष्ठ! प्राणियोंका जीना मरना इच्छानुसार नहीं होता, और बिना समय पहुंचे कोई सुख तथा दुःखका अधिकारीभी नहीं होता। एक पुरुषभी अनगिनत मनुष्योंके प्राणका संहार कर सकता है, और बहुतसे मनुष्य मिलकरभी एक पुरुषको नहीं मार सकते हैं; पुरुषार्थसे रहित निर्व्वल मनुष्यभी शूरवीर पुरुषका वध कर सकता है, और यशहीनभी यशस्वी पुरुषके नाशको करनेमें समर्थ हो जाता है। यह ठीक है, कि दोनों पक्षको पराजय नहीं दीख पड़ती; परन्तु प्रायः समानही क्षति दोनों पक्षोंकी देखी जाती हैं; जो हार जाते हैं, उनकी सेनाका नाश और धनका व्यय दोनोंही होता है; इस निमित्त युद्ध कर्म्म सदाही पापकर्म्म है। एक मनुष्यको घायल करके कौन पुरुष आप घायल नहीं होता? घायल पुरुषोंकी हार और जीत दोनोंही समान हैं। मेरे

विचारमें मरने और हार जानेमें कुछ विशेष अन्तर नहीं है? जिसकी जीत होती है, उसेभी बहुतसी क्षति उठानी पड़ती है। चाहे शत्रु लोग उसे न मार सकें, परन्तु उसके प्यारे तथा प्रेमपात्र किसी न किसी पुरुषको तो मारतेही हैं; इससे एक तो वह पहिलेसेही बलसे हीन हो रहता है, दूसरे पुत्र, सहोदर तथा अन्य प्रियजनोंको न देखनेसे अवश्यही उसको जीवनके निमित्त वैराग्य उत्पन्न होजाता है। जो लोग धीर, लज्जाशील और कारुणिक तथा दयावान होते हैं, वेही संग्राममें मरते हैं, और निकृष्ट मनुष्य प्राय बच जाते हैं। हे केशव! उत्तम शत्रुओंको मारकरभी उसे सब दिनके लिये पश्चाताप करना पड़ता है, विशेषतः यदि मारनेवालोंमेंसे बचा हुआ कोई शत्रुभी बाकी रहता है, तो शत्रुताके विषयमें उसकी पापमयी आसक्तिभी बनी रहती है; यही पुरुष क्रमसे बलवान होकर विजयी पुरुषोंके मरनेसे बचे हुए मनुष्योंका सर्व्वनाश कर देता है, अर्थात उनका कुछभी बाकी नहीं छोड़ता; शत्रुताको शेष करनेकी अभिलाषासे वह सबका संहार करनेमें यत्नवान होता है। इस प्रकारसे जीत शत्रुताकी सृष्टि करती है, और जिस मनुष्यकी हार होती है, वह दुःखसे अपने दिनोंको बिताता है। जिसको किसीके सङ्ग शत्रुता नहीं है, उसे हार जीतका भय नहीं होता; इससे वह शान्तिचित्त होकर सुखकी नींद सोता है; परन्तु शत्रुता करनेवाले पुरुषोंको सदाही दुःख है; सर्पसे युक्त स्थानमें वास करनेसे मनमें जैसी चिन्ता तथा घबराहट लगी रहती है, उसकोभी वैसेही चिन्तामें दुःखी रहना होता है। जो मनुष्य सबका नाश करनेवाला होता है, वह कभी यशका पात्र नहीं हो सकता; सहस्रों यशके कर्म्म रहने परभी वह उससे पतित हो जाता है, और सब लोकके बीचमें सदा रहनेवाली अकीर्त्तिको सञ्चय करता है। बहुत कालतक प्रज्वलित रहनेपरभी शत्रुरूपी अग्नि नहीं बुझती। शत्रुके कुलमें यदि कोई पुरुष विद्यमान रहता है, तो उससे पहिले पुरुषोंके किये हुए वैर वृत्तान्तको कहनेके निमित्त बहुतसे मनुष्यभी उपस्थित रहते हैं। हे केशव! वैरसे कभी शत्रुताका शेष नहीं होता, बल्कि अग्निमें घी पड़नेकी भांतिसे औरभी बढ़ता रहता है। इससे जब छिद्र सदाही बना रहता है किसी भांतिसे उसका शेष नहीं होता, तब एक पक्षको पूर्ण रूपसे नष्ट किये बिना शान्ति नहीं हो सकती। जो लोग छिद्रको खोजनेकी इच्छा करते हैं, उनमें यही एक दोष सदा लगा रहता है। पुरुषार्थका कार्य्य जो सदाही एक प्रबल मानसिक ताप उत्पन्न करके अन्तर्दाह किया करता है, या तो उसका शेष होजाय अथवा अपनी मृत्युही होवे—इन्हीं दोनोंमेंसे एकके होनेसे शान्ति हो सकती है। हे मधुसूदन! शत्रुओंको मूल सहित नाश करनेसेभी बहुत कुछ फल मिल सकता है, परन्तु शत्रुओंको मूल समेत नाश कर देना अत्यन्तही निठुर मनुष्यका कार्य्य है। राज्यके त्यागनेसे जो शान्ति हो सकती है; राज्यके निमित्त प्राणियोंका वध करनेके सहित उसमें कुछभी विशेषता नहीं रहती! क्योंकि उसमें शत्रुके पक्षकी शङ्का और अपने पक्षके नाशकी सम्भावना बनी रहती है। इससे राज्यको छोड़नेकीभी मेरी इच्छा नहीं है और कुलके नाश करनेकेभी मेरी अभिलाषा नहीं है। इस विषयमें जिससे किसी भांतिसे युद्ध न करना पड़े वैसाही प्रयत्न सब प्रकारसे करना चाहिये। यदि अवनति स्वीकार करनेसे शान्तिकी रक्षा हो सके, तो सबसे उत्तम है; क्योंकि इसी प्रकारकी शान्ति श्रेष्ठ मानी गई हैं। यदि साम-वादसे कोईभी फल न दीख पड़े, तब युद्ध तो प्रसिद्धही है, उस समय पराक्रमसेभी बिलम्ब करना उचित

नहीं है। परन्तु सामवादके निष्फल होनेपर अवश्यही महा घोर कर्म्म अर्थात युद्ध करना पड़ता है, कुत्तोंकी लड़ाईके समयमें पण्डित लोग उसको पूरी उपमाको दृष्टिगोचर करते हैं। कुत्ते पहिले पंछ हिलाते और चिल्लाते, और प्रत्युत्तर देते तथा चक्रकी भांति चारोंओर घूमते, और दांत दिखाते हैं; फिर बड़े जोरसे चिल्लार रहते हुए युद्धमें प्रवृत्त होते हैं। हे कृष्ण! उनमें जो बलवान होता है, वह दूसरेको हराके उसका मांस खाता है। विचार करके देखनेसे मनुष्योंमें भी यही दशा है; विशेषता कुछ भी नहीं है। परन्तु निर्ब्बल मनुष्योंपर अपने बलको दिखलाना, और उनसे विरोध करना बलवानको कभीभी उचित नहीं है; क्योंकि निर्ब्बल मनुष्य सहजहीमें अवनति तथा अधीनताको स्वीकार कर लेता है। हे जनार्द्दन! धृतराष्ट्र हम लोगोंके जेठे पिता, राजा वृद्ध और माननीय हैं; इससे उनके सम्मुख सम्मान, पूजा और अवनति दिखलाना हम लोगोंका जो कर्त्तव्य कर्म्म है, उसमें कौन सन्देह कर सकता है? परन्तु हे कृष्ण! धृतराष्ट्रको पुत्रस्नेह बहुत-प्रबल है; पुत्रोंके वशमें होकर वह हम लोगोंकी बिनतीको अस्वीकार करेंगे। उसके अनन्तर तुम किस कर्त्तव्य-कर्म्मको उत्तम समझते हो? किस प्रकारसे मैं धर्म्म और अर्थसे बिमुख न होऊंगा? हे मधुसूदन! हे पुरुषोत्तम कृष्ण! ऐसे महाघोर अर्थ-सङ्कटमें मैं तुम्हारे अतिरिक्त और किस मनुष्यके निकट परामर्श करूंगा? तुम्हारे समान हितैषी, प्यारा, सब विषयोंके यथार्थ सिद्धान्तको निश्चय करनेवाला और सुहृद मेरा दूसरा कौन है?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, धर्म्मराजकी इन सब बातोंको सुनकर जनार्द्दन कृष्णने कहा, महाराज! मैं आपके दोनों प्रयोजनोंको सिद्ध करनेके निमित्त कौरवोंकी सभामें जाऊंगा, वहांपर आपके अभिलषित विषयको स्थिर रखके यदि शान्ति स्थापित कर सकूंगा, तो मेरा महा फलसे युक्त, बहुत बड़ा पुण्य-कर्म्मका अनुष्ठान सिद्ध होगा। सन्धि करनेसे कौरव सञ्जय, पाण्डवों तथा धृतराष्ट्रके पुत्र और समस्त पृथ्वीके राजा तथा मनुष्योंको मृत्युके मुंहसे मुक्त करूंगा।

युधिष्ठिर बोले, हे कृष्ण कौरवोंकी सभामें जाओगे, यह मुझे किसी अवस्थामेंभी ठीक नहीं जंचता है। तुम उत्तम युक्ति तथा परामर्श दोगे, तौभी तुम्हारी बातोंको दुर्य्योधन न मानेगा। हे कृष्ण! दुर्य्योधनके वशवर्त्ती अनेक बीचमें तुम्हारा प्रवेश करना किसी प्रकारसे भी मेरे मतमें उत्तम तथा कल्याणकारी नहीं मालूम होता है। हे माधव! यदि तुम्हारे ऊपर कोई बुरा आचरण करेगा, तो हमारे राज्य धन, और सुखकी बात तो दूर रही, स्वर्गकाभी सम्पूर्ण ऐश्वर्य्य और साक्षात देवत्व पदार्थभी मुझे प्यारा न होगा।

श्रीभगवान बोले, हे महाराज! दुर्य्योधन जैसा पाप बुद्धिवाला पुरुष है, वह मुझसे छिपा नहीं है; तो भी उसके निकट जानेसे हम लोग पृथ्वीके सब राजाओंके समीप सब भांतिसे निन्दा-रहित रहेंगे। मेरे क्रुद्ध होनेपर कौरवोंकी सभामें सब राजा लोग वैसेही न ठहर सकेंगे जैसे सिंहके सम्मुख साधारण पशु लोग नहीं खड़े रह सकते। यदि वे लोग मेरे सङ्ग किसी अयुक्त व्यवहारके करनेमें प्रवृत्त होंगे तो मैं सम्पूर्ण कुरुकुलको भस्म कर दूंगा, मुझे ऐसाही निश्चय है। हे पार्थ! उस स्थानपर मेरा जाना कभी व्यर्थ न होगा; यदि प्रयोजन सिद्ध न होगा तो अन्तमें हम लोगोंको अपवादसे ग्रस्त नहीं होना पड़ेगा।

युधिष्ठिर बोले, हे कृष्ण! जैसी तुम्हारी इच्छा हो, वैसाही करो। सब प्रकारसे कुशल पूर्व्वक कौरवोंके समीप जाकर, उन लोगोंको इस प्रकारसे शान्त करो जिससे हम लोग

सन्धिके सुखमें बद्ध होकर प्रीति पूर्व्वक अपने समयको बिता सकें। इस समय यही प्रार्थना है, कि लौटनेके समय जिसमें तुम्हें कृतकार्य्य और कल्याणयुक्त देख सकूं। हे जनार्द्दन! तुम हम लोगोंके भाई और मित्र हो; तुम मेरे और अर्ज्जुनके समान रूपसे प्यारे हो तुम्हारे सङ्ग हम लोगोंकी ऐसी सुहृदता उत्पन्न हुई है, कि किसी विषयमें भी तुमसे शङ्काकी सम्भावना नहीं है; इससे हम लोगोंके मङ्गल-कार्य्यको साधन करनेके निमित्त तुम अपनी शुभयात्राको करो। हे कृष्ण! तुम हम लोगोंको भी जानते हो और शत्रुओंको भी खूब जानते हो; जो कुछ प्रयोजन है, वह भी तुमसे छिपा नहीं है; जिस प्रकारका प्रस्ताव करना उचित है, वहभी तुमको अविदित नहीं है। हे केशव! इससे सन्धि हो, अथवा युद्धहीका प्रसङ्ग हो, जो हम लोगोंके हितकारी और धर्म्मके अनुयायी विषय हों, तुम वह दुर्य्योधनके निकट कहना।

७२ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिरकी बात समाप्त होनेपर कृष्ण बोले, मैंने सञ्जयकी बात सुनी है और आप-काभी बचन सुना है। शत्रु लोगोंके और आपके जो कुछ अभिप्राय हैं, वह भी मुझसे छिपे नहीं हैं। आपकी बुद्धि धर्म्मके अनुसार कार्य्य करना चाहती है, और उन लोगोंकी बुद्धि केवल शत्रुताके आचरणहीमें रत है। युद्धके बिना कियेही जो कुछ मिले वही आपके मतमें उत्तम बोध होता है। परन्तु हे महा-राज! सब आश्रमवाले कहते हैं, कि क्षत्रिय जो भिक्षाजीवी होते हैं, ऐसा ब्रह्मचर्य्य सब दिनके लिये क्षत्रियोंके पक्षमें कल्याणकारी नहीं है। विधाताने युद्धमें जीत और हारका जो कुछ विधान किया है, वही क्षत्रियोंका सना-तन धर्म्म है; कृपणताको प्रकाशित करना क्षत्रियोंके पक्षमें कभी भी प्रशंसाका विषय नहीं हो सकता। हे महाबाहो युधिष्ठिर! दीनभावको ग्रहण करनेसे क्षत्रियोंकी जीविका निर्व्वाह करना बहुतही कठिन हो जाता है। हेपरन्तप! इससे पूर्ण बलको प्रकाश करके शत्रु-ओंका नाश कीजिये। धृतराष्ट्रके पुत्र लोग अत्यन्त लोभके वशमें होगये हैं, उन लोगोंने बहुत दिनोंतक अनेक वीरोंके सङ्ग रहके और मित्रता करके पूर्ण बल सञ्चय किया है, इससे वे लोग किसी प्रकारसेभी आपके सङ्ग सन्धि न करेंगे। हे नरनाथ! भीष्म द्रोण, कृपाचार्य्य आदिकी सहायता पाकर वे लोग अपनेको अत्यन्त बलवान समझ रहे हैं, इससे जबतक आप कोमलभावको ग्रहण करके उन लोगोंके समीप नम्रता प्रकाश किया करेंगे, तबतक वे आपको अवश्यही राजभोगसे बञ्चित रक्खेंगे, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। हे शत्रुनाशन! धृतराष्ट्रके पुत्र लोग न करुणा, न दीनता और न अर्थ तथा धर्म्मके ज्ञान आदि किसी विषय-सेभी आपके मनोरथको पूरा करनेमें समर्थ होंगे। हे पाण्डव! जब वे लोग उस भांतिके रुवां खड़े करनेवाले कौपीनको आपको पहरा करके तनिकभी दुःखी और सन्तापित नहीं हुए थे, तबहीसे सन्धि न करनेका निमित्त अर्थात कारण समझ लीजिये। हे राजन्! आप ऐसे धर्म्म परायण, मृदुस्वभाव युक्त दान-शील और व्रतके करनेवाले होनेपर भी, जिस पुरुषने भीष्म, द्रोण, बुद्धिमान् विदुर; महात्मा ब्राह्मणों, तथा राजा धृतराष्ट्र और मुख्य मुख्य कौरव और नगर निवासियोंके सम्मुखही आपको कपटके जुवेका खेलमें जीतकर, अपने किये हुए बुरे कर्म्मके निमित्त तनिकभी लज्जा नहीं करी, उस शील रहित, दुराचारी और क्रूरबुद्धि दुर्य्योधनके ऊपर आप कदापि स्नेह न कीजिये। हे भारत! आपको बात तो दूर है, वह सब लोगोंसे मारे जानेके योग्य है। एक वार ध्यान देकर देखिये तो सही, दुर्य्योधनने

भाइयोंके सङ्ग मिलकर, अत्यन्त आनन्दित होके, अपनी बड़ाई करता हुआ, बहुतसे न कहने योग्य बचनोंसे आपको तथा आपके भाइयोंको किस भांतिसे मर्म्म-पीड़ा पहुंचायी थी? उसने मुक्त-कण्ठसे कहा था, कि इस पृथ्वीके बीचमें पाण्डवोंकी कोई भी वस्तु ऐसी नहीं है, जिसे वह अपनी कहें; ऐसा क्या इन लोगोंका नाम और गोत्र पर्य्यन्तभी लुप्त हुआ; महाकालके सङ्ग इन लोगोंकी अवश्यही पराभव होगी। इनका राज्य इस समय मेरे अधिकारमें हुआ है; इससे ये लोग अपनी जीविकाके निमित्त प्रजाकी सहायताको अवलम्बन करेंगे।" और भी देखिये जूएका खेल समाप्त होनेपर पापबुद्धि दुरात्मा दुःशासनने रोती हुई द्रौपदी देवीको राजसभामें लाकर भीष्म, द्रोण, आदिके सम्मुख बारम्बार दासी दासी कहके हंसी करी थी। उस समय आपने महा बलवान अपने भाइयोंको निवारण कर दिया, वे लोग धर्म्मपाशमें बंधकर कुछभी प्रतिकार न कर सके। आपके वनमें चले जाने परभी दुर्य्योधनने जातियोंके बीच पहिलेकी भांति तथा दूसरी भांतिसेभी अनेक कठोर वाक्योंको कहकर अपनी बड़ाई करी थी। जो सब उस स्थानपर उत्तम स्वभावसे युक्त पुरुष उपस्थित थे, वे सब आपको निरपराधी समझकर आंसू बहाते हुए सभामें बैठे थे। ब्राह्मण तथा राजा लोग कोई भी उसकी बातोंसे आनन्दित नहीं हुए थे, बल्कि सब सभासदोंने उसकी निन्दा करी थी। हे शत्रुतापन महाराज! कुलीन पुरुषोंके निमित्त निन्दाही बध है; बल्कि निन्दायुक्त जीनेसे एक बार मर जानाही सौ-गुणा उत्तम है। पृथ्वी मात्रके राजाओंमें निन्दित होकरभी जब उसने कुछभी लज्जा नहीं करी, तब उसके मरनेमें अब बाकीही क्या है? जिसके कर्म्म ऐसे बुरे और निन्दनीय हैं, उसको मारना एक साधारण कार्य्य है। जैसे वृक्षकी सब जड़ कट जाती है, केवल बीचकी जड़ही शेष रहती है, इसी प्रकारके वृक्षकी भांति तथा भय देनेवाले, सर्पकी भांति; वह क्षुद्राशय नीचबुद्धि दुर्य्योधन सब लोगोंसे मारे जानेके योग्य है। हे शत्रुनाशन! इससे आप उसका बध कीजिये; इसमें किञ्चित मात्रभी सन्देह और शङ्का न कीजिये। हे पाप रहित! धृतराष्ट्र तथा भीष्मके निकट आप जो सदाही विनीतभाव स्वीकार करते हैं, वह सब प्रकारसे आपके योग्य है और मुझेभी स्वीकार है। हे राजन्! इससे मैं वहांपर जाकर दुर्य्योधनके के ऊपर जिन लोगोंका द्विधाभाव है, उन सबके संशयको दूर करूंगा। इकट्ठी हुई राजाओंकी मण्डलीके बीच सब लोग आपके गुणों और दुर्य्योधनके दोषोंको गावेंगे। नाना देशोंके आये हुए राजा लोग, मेरे धर्म्म और अर्थसे भरे हुए बचनोंको सुनकर, अवश्यही आपको धर्म्मात्मा और सत्यवादी कहके विश्वास करेंगे? और दुर्य्योधन लोभके वशमें होकर जिस प्रकारके नीच कर्म्मोंको कर रहा है, उसेभी सब लोग खूब समझ लेंगे। केवल राजमण्डलीही क्यों सुनेगी, वहांपर आये हुए ब्राह्मण आदि चारों वर्णों, बनवासी, नगरके रहनेवाले बालक, बूढ़े सबके सम्मुखही मैं दुर्य्योधनकी निन्दा करना आरम्भ करूंगा। आप जब शान्तिके निमित्त प्रार्थना करते हैं, तब आपको कौन अधार्म्मिक कहेगा? परन्तु मनुष्य मात्रही कौरवोंकी, विशेष करके धृतराष्ट्रकी अनेक प्रकारसे निन्दा करेंगे; इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। हे राजन्! वह जब सब लोगोंसे रहित पापी दुर्य्योधन निन्दासे मृततुल्य होजायगा तब आपके कर्त्तव्य कर्म्ममें बाकीही क्या रहेगा! इससे मैं कौरवोंकी सभामें जाकर, आपको अर्थकी हानि न करके, सब प्रकारसे सन्धिही करनेके निमित्त यत्नवान होऊंगा; और उन लोगोंकी युद्ध-निश्चयकी प्रवृत्ति और सब

चेष्टाओंको देखकर शीघ्रही आपके जयकी निमित्त लौट आऊंगा! हे भारत! बुरे सगुनोंको जिस प्रकारसे मैं देखा रहा हूं, उससे शत्रुओंके सङ्ग युद्ध करना होगा; यह सब प्रकारसे मालूम हो रहा है। देखिये सन्ध्या-समय हरिण और पक्षी भयङ्कर शब्द करते हैं; और हाथियोंका भयङ्कर रूप दीख पड़ता है; और अग्नि बहुत प्रकारके विकट वर्णोंको धारण कर रहे हैं। हे नरेन्द्र! मनुष्योंको नाश करनेवाले महा बिकराल समयके विना आये कभीभी ऐसी घटना नहीं होती। इससे इसी समयसे आपके योद्धा लोग अस्त्र, कवच शस्त्र, रथ, घोड़े और हाथी आदि सब युद्धकी सामग्रियोंका सज्जित करके रथ, घोड़े और हाथियोंका फेरनेमें नियुक्त होजावें। हे राजेन्द्र! युद्धके निमित्त जिन वस्तुओंका संग्रह करना होता है, आप सब चीजोंको इकट्ठी कर रखिये। हे पाण्डवराज! दुर्य्योधनने पहिले जुएसे आपकी समस्त राजलक्ष्मी तथा राज्यको हर लिया था; इस समयमें जीते जी वह कभी आपको उस धन और राज्यको लौटानेमें समर्थ न होगा।

७३ अध्याय समाप्त।

भीम बोले, हे मधुसूधन! जिस प्रकारसे कौरवोंके बीच शान्ति स्थापित होवे, तुम उसी प्रकारसे प्रस्ताव करना। युद्धके प्रसङ्गसे तुम कभी उन लोगोंको भय न दिखाना। महाक्रोधी, उत्साहयुक्त, कल्याणका विरोधी, और महा अभिमानी दुर्य्योधनको किसी प्रकारके कठोर बचन कहना उत्तम न होगा, इस निमित्त साम वादसेही उसको शान्त कीजियेगा। हे कृष्ण! जो मनुष्य स्वाभाविक पापी, दस्युके समान चित्त-वाला, ऐश्वर्य्यसे मतवाला, पाण्डवोंके सङ्ग सदा बैर करनेवाला, अदूरदर्शी, निठुर, साधुओंका अपमान करनेवाला, क्रूर पराक्रम, सदा क्रोधमें रहनेवाला, विनय-रहित, पाप-बुद्धि और वञ्चना-प्रिय है; जो मूढ़बुद्धि बरन प्राण देना स्वीकार करता है, परन्तु अपने मतको त्यागकर अपनी इच्छाको भङ्ग करनेमें कभी सम्मत नहीं होता; ऐसे पामरके सङ्ग सन्धि करनी बहुतही कठिन कार्य्य है। वह स्वयं भी धर्म्मके मर्म्मको नहीं समझ सकता और सुहृद लोगोंकी बातोंके भी वशमें नहीं होता; इसीसे धर्म्मत्यागी और मिथ्याप्रिय होकर सुहृद लोगोंकी बात और अपने मनकी बातों पर केवल आघात मात्र करता है। तृण आदिसे छिपा हुआ सर्प जिस प्रकारसे अपनी स्वाभाविक खलता-प्रकाशित करता है; वहभी उसी प्रकारसे अपने स्वाभाविक दुष्टता अनुसार क्रोधके वशमें होकर पाप कर्मोंको किया करता है।

हे केशव! दुर्य्योधनकी जितनी सेना, जैसा शील, बल, और पराक्रम है; वह सबही आपको विदित है। देखिये पहिले कौरव लोग पुत्रोंके सहित सदा प्रसन्न चित्तसे रहते थे; और हम लोगभी इन्द्रके समान भाइयों समेत आनन्द और सुखसे काल यापन करते थे; परन्तु हे मधुसूदन! बांससे बांस रगड़ खानेसे जैसे अग्नि प्रगट होकर समस्त बनको भस्म कर देती है, वैसेही दुर्य्योधनके क्रोध रूपी अग्निसे इस समय भरतवंश भी भस्मीभूत होजायगा। हे कृष्ण! जिन्होंने ज्ञाति, कुटुम्ब और बन्धु बान्धवोंका नाश किया था, नीचे कहे हुए वह अठारह राजा लोग विख्यात हैं। धर्म्मके परिवर्त्तन कालके आने पर जैसे तेज-पुञ्जसे प्रज्वलित असुरोंके कुलमें कलियुगकी उत्पत्ति हुई थी, वैसेही हैहयवंशमें दुष्टस्वभावसे युक्त उदावर्त्त, नीलवंशमें जनमेजय, तालजङ्घ वंशमें बहुल, कृमिवंशमें वसु, सुवीरवंशमें अज-बिन्दु, सुराष्ट्र वंशमें रुषर्द्धिक, बलीह वंशमें

अर्कज, चोनवंशमें धौतमूलक, विदेहवंशमें हयग्रीव, महौयश वंशमें वरयू, सुन्दरवेग वंशमें बाहु, दोप्ताच वंशमें पुरुरवा, चेदि-मत्स्य वंशमें सहज, प्रवीर वंशमें वृषध्वज, चन्द्रवत्सवंशमें धारण, मुकुट वंशमें विगाहन और वन्दिवेग वंशमें सम राजा उत्पन्न हुए थे। युगके अन्तमें जैसे ये सब कुलके नाश करनेवाले पुरुषोंमें अधम राजालोग उक्त कुलोंमें जन्मे थे, वैसेही इस वर्त्तमान युगके अन्तमें काल-प्रेरित कुलको नाश करनेवाला दुर्य्योधनने भी साचात पापको मूर्त्ति होकर कुरुकुलमें जन्म लिया है; हे उग्र पराक्रम! इससे आप उग्रताको त्यागहोके उसके समीप मोठे बचनोंसे, जिसमें उसका चित आकर्षित हो, उसी भांतिसे उसके अभिलाषत विषयोंसे युक्त, धर्म्म और अर्थसे भरे हुए हितकारी बचनोंको कहियेगा। हे कृष्ण! हम लोग नम्रभावको ग्रहण करके वरन दुर्य्योधनके अनुगामी होकर चलेंगे, तौभी ऐसा नहीं चाहते जिससे हम लोगोंका भरतवंश नष्ट होने पावे। हे कृष्ण! जिसमें कौरवोंके सङ्ग किसी विषयका संसर्ग न रहनेसे हम लोगोंका आपसमें उदासीन (विरक्त) की भांति व्यवहार न हो, आपको उसहीको चेष्टा करनी होगी। उसको नोच बुद्धिके कारण जिसमें किसी भांत कुरुकुलके नाश होनेमें, हम लोगोंको किसी प्रकारके दोषोंका स्पर्श न होने पावे। हे कृष्ण! बुद्धिमान पितामह और दूसरे सब सभासदोंसे कहना, कि वे लोग यत्नवान होकर दुर्य्योधनको शान्त करें; भाइयोंके बीच सुहृदता स्थापित होवे। शान्तिके विषयमें मैं ऐसाही कहता हूं, और राजा युधिष्ठिरभी इसी बचनको प्रशंसा करते हैं; अर्ज्जुनभी युद्धको इच्छा नहीं करते हैं; क्योंकि उनके शरीरमें बहुतही दया है।

७४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पर्व्वतकी निचाई और अग्निकी शीतलताई जिस प्रकार असम्भव है, वैसेही यह कृपासे युक्त, पहिले कभी न सुनी गई, चमा-सहित बचनोंको सुनकर, शूरनन्दन, शारङ्ग धनुषको ग्रहण करनेवाले, बलदेवके भाई, महाबाहु कृष्ण उनकी हंसी करनेके उद्देश्य और वायुकी सहायतासे अग्निकी भांति, अपने बचनोंसे भीमको उत्तेजित करनेकी इच्छासे कहने लगे,हे वृकोदर! दूसरे समयोंमें तो तुम हिंसा-प्रिय, क्रूर-स्वभावसे युक्त धृतराष्ट्रपुत्रोंको मारनेकी अभिलाषासे युद्धहीकी प्रशंसा करते हो। हे परन्तप! इसी चिन्तामें तुम्हें रात्रिको नींदभी नहीं आती; तुम नीचे मुंह करके शयन करते हुए सारी रात जागतेही बिताते हो, सब समय शान्तिका विरोधी रूखा बचनहीका प्रयोग किया करते हो, और अपने क्रोधरूपी अग्निसे रात दिन सन्तप्त होकर धूम सहित अग्निको भांति व्याकुल चित्तसे लम्बी-सांस लेते हुए, दुर्ब्बल पुरुषकी भांति निर्ज्जन स्थानमें अकेले शयन करते हो। जो तुम्हारे यथार्थ भावोंको नहीं जानते वह, इन सब अद्भुत आचरणको देखके तुमको उन्मत्त कहके स्थिर करेंगे। जैसे कोई कोई हाथी वृचोंका तोड़कर अपने पांवोंको पटकते मतवाला हुए सब वृचोंके नाश करनेमें प्रवृत्त होकर शब्द करता है, तुमभी उसी भांतिसे कभी कभी घोर शब्द करते हुए दैसेहे दौड़ते हो। हे पाण्डव! मनुष्योंके सङ्ग संसर्ग और बातचीत करनेकी तुम्हारी इच्छा नहीं होती; केवल निर्ज्जन स्थानमें निवास करनाही तुम्हें उत्तम मालूम होता है। क्या रात्रिक्या दिन, सब समय निर्ज्जनमें बास करनेके अतिरिक्त और कुछभी तुमको प्यारा नहीं लगता। हे भीम! तुम एकान्त स्थानमें वैठकर अकस्मात कभी कभी रोते तथा हंसते हुए दोनों केहुनीके ऊपर शिर

टिककर तथा आंख मूंदके बहुत समयतक चुप चाप बैठे रहते हो, फिर सहसा भृकुटीको टेढ़ी करके होठोंको काठते हुए टेढ़े भावसे बारम्बार इधर उधर दृष्टि करते हो। यह सब कर्म्म केवल क्रोधका सूचित करनेवाले हैं।

हे परन्तप! पहिले भाइयोंके बीचमें तुमने गदाको ग्रहण करके यह प्रतिज्ञा करी थो, कि "सूर्य्य जैसे अपने तेजपुञ्जसे पूर्व्व दिशामें उदय होते हैं, और सुमेरु पर्व्वतको प्रदक्षिणा करते हुए पश्चिम दिशामें अस्त होते हैं, किसी कालमेंभी उनके नियममें रद बदल नहीं होता; मैं उसी प्रकारसे सत्यप्रतिज्ञा करके कहता हूं, कि क्रोधी दुर्य्योधनके समीप जाकर युद्धमें अपनी गदासे उसे अवश्य मारूंगा, कभी मेरी यह प्रतिज्ञा व्यर्थ न होगी।" परन्तु क्याही आश्चर्य्यका विषय है, कि तुम्हारी बुद्धि आज शान्तिके निमित्त दौड़ रही है, तो यह मुझे निश्चय बोध होता हैं, कि युद्धका समय आ पड़नेसे युद्धकी अभिलाषा करनेवाले पुरुषोंके मनका भाव सम्पूर्ण बदल जाता है। हे पार्थ! तुम सोते जागते सब अवस्थाओंमें विपरीत निमित्त सब देखते रहते हो; इसीसे बोध होता है, कि तुमको शान्तिकी इच्छा हुई है। अहो! तुम क्लीवकी भांति अपने शरीरसे कुछभी पुरुषार्थकी आशा नहीं करते हो? तुम मोहमें पड़ गये हो, इसीसे तुम्हारा मन ऐसे विपरीत भावको ग्रहण कर रहा है इसमें किञ्चित मात्रभी सन्देह नहीं है, तुम्हारा चित्त विषाद-युक्त हो रहा है; तुम हृदयसे दुःखी हो रहे हो, इसीसे शान्तिकी इच्छा करते हो। हे पार्थ! मनुष्यके चित्तको कुछभी स्थिरता नहीं रहती हवाके झकोरसे शाल्मली वृक्षकी भांति कभी वह चञ्चलचित्त हो जाता हैं और कभी स्थिर होता है। गौओंके मनुष्योंके वचन बोलनेकी भांति तुम्हारी यह असम्भव निन्दा-योग्य बुद्धिको देखकर पाण्डुपुत्र सब व्याकुल हो रहे हैं; उनका चित्त विषादरूपी समुद्रमें डूब रहा है। हे भीमसेन! तुम्हारे इस न कहने योग्य वचनोंको सुनकर मुझको अत्यन्तही आश्चर्य्य होता है। जैसे पर्व्वतोंका चलना असम्भव है, वैसेही तुम्हारे मुंहसे ऐसे वचनका निकलना भी आश्चर्य्यजनक है। हे भारत! इससे तुम जिस कुलमें उत्पन्न हुए हो और जिन सब अलौकिक कर्म्मोंका अनुष्ठान तुमने किया है, उन सबको विचारके उत्साहसे युक्त होओ। हे वीर! विषादको त्यागके चित्तको स्थिर करो। हे शत्रुनाशन! तुम्हारे समान महावीर पुरुषको ग्लानियुक्त होना कभी उचित नहीं है। क्षत्रिय लोग अपने बाहुबलसे जिस विषयको नहीं उपार्ज्जन कर सकते, वह उनके भोग करनेका विषय नहीं होता।

७५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, सदा क्रोधी, किसीकी बातकोभी न सहनेवाले भीमसेन, श्रीकृष्णकी बातोंको सुनकर उत्तम घोड़ेकी भांति उसी समय उत्तेजित हुए और उत्तर देनेके निमित्त शीघ्रता करके बोले, हे अच्युत! मैं और प्रकारसे कार्य्योंका अनुष्ठान कर रहा हूं, और तुम उसे दूसरी प्रकारसे समझते हो। युद्धमें जो मेरी सदाहीसे प्रीति है, और मेरा पराक्रमभी किसी समय निष्फल नहीं होता बहुत दिनोंसे सङ्गमें रहनेसे तुम हमारे उस पराक्रमको जानते भी होगे; परन्तु क्याही आश्चर्य्यका विषय है, कि सब कुछ जान बूझकर भी तुम अजानकी भांति बातें कर रहे हो— जैसे तैरना न जानकर कोई जल भरे तालाबमें डूब रहा हो। इसी निमित्त ऐसी अनुचित और अयोग्य बातें कहकर मेरी निन्दा करते हो। हे माधव! भीमसेनके यथार्थ बल और पराक्रमको जानकरभी कौन मनुष्य तुम्हारी

भांति इस प्रकारके अयोग्य वचनोंका प्रयोग कर सकता है ? तुम जो हमारे यथार्थ रूपको नहीं जानते हो, इसी निमित्त मुझको अपने पौरुष और पराक्रमकी बात सुनानी पड़ी। अपने मुंहसे अपनी प्रशंसा करनी अत्यन्तही निन्दनीय है, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। परन्तु क्या करें तुम्हारी निन्दायुक्त वचनोंको सुनके हमसे रहा नहीं जाता, इसोसे मैंने अपने आत्म-बलको तुमसे वर्णन किया। हे कृष्ण! अखिल प्रजापुञ्जका आधार और उत्पत्तिका स्थान यह जो अचल और असीम भूलोक और उर्द्ध-लोक दोख पड़ते हैं; यदि दोनों क्रुद्ध होकर दो शिलाको भांति आपसमें सहसा मिल जावें, तौभो मैं अपनी दोनों भुजाओंसे सब प्राणियोंके सहित, दोनों लोकोंको रोक सकता हूं। प्रचण्ड परिघके समान मेरी इन दोनों भुजाओंके बीचके स्थानको एक बार अच्छी प्रकारसे दृष्टिपूर्व्वक देखो; इसमें गिरके फिर निकल जावे, ऐसा मनुष्य मैं इस सम्पूर्ण भूमण्डलमें नहीं देखता हूं। यदि मैं किसी पुरुषको बलपूर्व्वक आक्रमण करूं, तो साक्षात गिरिराज हिमालय, अपार जलनिधि तथा वज्रधारी इन्द्रभी अपने बलको प्रकाश करके, मेरे हाथसे उसे नहीं छुड़ा सकते। हे अच्युत! पाण्डवोंके प्रति जो आततायी और युद्ध करनेके योग्य क्षत्रिय हैं, उन्हें मैं पृथ्वीमें गिराके सहजहीमें अपने पांवसे पीसता रहूंगा। हे जनार्द्दन! पहिले मैंने सब राजाओंको पराजित करके जिस प्रकारसे उन्हें वशीभूत किया था, वह कुछभी तुमसे छिपा नहीं है। उसोसे तुम मेरे पराक्रमका बहुत कुछ परिचय पा चुके हो। अथवा यदि प्रातःकालके समान प्रकाशित होनेवाले सूर्य्यकी भांति, मेरे प्रचण्ड प्रभावको तुम नहीं जानते हो, तो उस महा घोर भयङ्कर युद्धमें अच्छी प्रकारसे समझ लोगे। दुर्गन्धसे भरे हुए घावके स्थानकी खोलनेकी भांति तुम मुझे ऐसा कर्कश वचन कहते हो। परन्तु मैंने जो कुछ अपना वर्णन किया है, तुम उससेभी मुझे श्रेष्ठ समझना। जिस दिन वह सब लोकोंके नाश करनेवाला सङ्कटयुक्त संग्राम उपस्थित होगा, उसी दिन तुम मेरे पुरुषार्थको पूर्ण रीतिसे देख सकोगे। केवल तुमही नहीं, सब लोग देखेंगे। मैं कभी रथी, घुड़सवार और गजपतियोंको दूर फेंकता रहूंगा, कभी क्रोधमें भरकर बड़े बड़े वीर क्षत्रिय योद्धाओंके संहार करनेमें उद्यत होऊंगा; और कभी कभी मुख्य मुख्य सेनापतियोंको व्याकुल करता रहूंगा। हे मधुसूदन! मेरे शरीरसे मज्जा आदि सार पदार्थकाभी कभी नाश नहीं हुआ है; और न मेरा चित्तही कभी युद्धसे विचलित हुआ है; यदि सम्पूर्ण लोक क्रुद्ध होकर मेरे विरुद्ध आगमन करें, तोभी मुझको कुछभी भय न होगा। तब कृपासे युक्त होनेका तात्पर्य्य और कुछ नहीं है, केवल सुहृदताको प्रकाश करना मात्र है। जिससे हम लोगोंके भरतवंशका नाश न होवे, इसी निमित्त कृपा करके मैं इन सब क्लेशोंको सह रहा हूं।

७६ अध्याय समाप्त।

श्रीभगवान बोले, तुम्हारे अभिप्रायको जाननेके निमित्तही मैंने प्रीति पूर्व्वक इन वचनोंको कहा था, नहीं तो निन्दा, पाण्डित्य, क्रोध तथा दूसरे कारणसे कुछ नहीं कहा है। तुम्हारा जैसा महात्मा, पराक्रम और कर्म्म है, वह सबही मुझे मालूम हैं, इससे उसके लिये तुम्हारा तिरस्कार नहीं करता हूं। हे पाण्डव! तुम अपने शरीरसे जिस प्रकारके कल्याणकी सम्भावना करते हो, मैं उससेभी सहस्र-गुण अधिक मङ्गलकी आशा करता हूं। हे भीम! सब राजाओंसे पूजित जिस ऊंचे

वंशमें तुम्हारा जन्म हुआ है; तुम बन्धुबान्धव और सुहृदवर्गके सहित सब प्रकारसे उस वंशके योग्य हो; इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। परन्तु हे वृकोदर! दैव और मनुष्य सम्बन्धी धर्म्मोंकी निरूपणा करनेकी अभिलाषा करके पुरुष एकही भांतिके निश्चय करनेमें समर्थ नहीं होता; क्योंकि जो विषय पुरुषकी अर्थसिद्धि-का कारण रहता है, वही दूसरे समयमें उसके विनाशका हेतु हो जाता है। इससे पुरुषके कार्य्य सब प्रकारके सन्देहसे भरे हुए हैं। दोषोंकी जाननेवाले बुद्धिमान पण्डित कर्म्मकी गतिको एक तरहसे स्थिर करते हैं; परन्तु वायुकी गतिके अनुसार वह दूसरे प्रकारकी होजाती है। मनुष्योंका किया हुआ कर्म्म सब भांतिसे न्याययुक्त, अच्छी प्रकारसे विचारा हुआ और सुन्दर नीतिसे पूरित रहने परभी दैवके द्वारा नष्ट हो जाता है, तथा सर्दी गर्म्मी, वर्षा, भूख, प्यास आदि अनुष्ठित दैवकर्म्म भी पुरुषार्थके सहित निष्फल हो जाते हैं। जो कर्म्मफल भोग करनेके निमित्त निश्चित हुआ है, उस प्रारब्ध कर्म्मसे भिन्न पुरुष स्वयं जिन कर्म्मोंका अनुष्ठान करता है, उसमें भी उसको बंधना नहीं पड़ता क्योंकि उससे ज्ञान वा प्रायश्चित होनेसे संचित-पापोंका नाश होता है, ऐसा श्रुति और स्मृतिसे सिद्ध है। इससे हे पाण्डव! बिना कर्म्म किये इस संसारमें निर्वाह करनेकी और दूसरी गति नहीं है। परन्तु दैव-कर्म्म और पुरुषार्थ दोनोंके मिलनेसेही फल सिद्ध होता है, ऐसाही विचार कर कर्म्मके अनुष्ठानमें प्रवृत्त होते हैं, उनके कार्य्यके न सिद्ध होनेमें भी कोई बाधा नहीं और सिद्ध होनेमें भी कोई हर्षकी बात नहीं है। हे भीम-सेन! उस विषयमें मेरा ऐसाही निश्चय था, शत्रुओंके सङ्ग युद्ध करनेसेही अर्थसिद्धि होगी यह मेरे कहनेका प्रयोजन नहीं था। और भी मानसिक भावोंके रद-बदल होनेसे एकबारगी दुःखी और ग्लानियुक्त होना उचित नहीं है; इसी निमित्त मैंने तुम्हें यह सब वचन कहे हैं। हे पाण्डव! कल मैं राजा धृतराष्ट्रके समीप जाकर आप लोगोंकी अर्थ हानि न करके सन्धिस्थापनके निमित्त ही सब प्रकारसे यत्नवान होऊंगा। यदि वे लोग सन्धि करेंगे, तो मेरी भी अनन्तकीर्त्ति और आपलोगोंका भी अभीष्ट सिद्ध होगा; तथा उन लोगोंका भी बहुतही मङ्गल और कल्याण होगा। परन्तु यदि कौरव लोग मेरी बातोंको न मानकर अपने मतके अनुसारही कार्य्य करनेमें प्रवृत्त होंगे, तब अवश्यही महाघोर युद्धके कार्य्यका अनुष्ठान होगा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। हे भीमसेन! इस युद्धका सम्पूर्ण भार तुम्हारेही ऊपर है। तुम और अर्ज्जुन दोनोंही इस भार-को ग्रहण करके दूसरे वीर योद्धाओंको युद्ध-कार्य्यमें नियुक्त करोगे; और सबके अवलम्ब होगे; क्योंकि युद्धके होनेपर मुझको अर्ज्जुनका सारथी बनना होगा, यही अर्ज्जुनकी अभिलाषा है। नहीं तो मेरी युद्ध करनेकी इच्छा नहीं है, यह बचन कौन कह सकेगा? हे वृकोदर! इससे तुमको क्लीवके समान वचन कहते हुए देख, तुम्हारी बुद्धिके ऊपर शङ्का करके, मैंने प्रभाहीन तुम्हारे तेजको फिर प्रकाशित कर दिया।

७७ अध्याय समाप्त।

अर्ज्जुन बोले, हे जनार्द्दन! मेरा जो कुछ वक्तव्य था, उसे धर्म्मराजहीने कह दिया है, परन्तु तुम्हारी बातोंसे बोध होता है, कि तुम धृतराष्ट्रके लोभवशके कारण अथवा हम लोगोंके उपस्थित दीनताहीके कारणसे, शान्तिका होना कदापि सुन्दर रूपसे होने योग्य नहीं समझते हो। तुम यह भी मानते हो, कि बिना परा-क्रमके प्रकाशित किये पुरुषके सब कार्य्य

निष्फल होते हैं; पुरुषार्थके बिना कोई कर्म्म नहीं हो सकता; और बिना कर्म्म किये कोई फल भी नहीं प्राप्त हो सकता। यही समझके तुमने जो इन सब वचनोंको कहा है, वह यथार्थही होंगे उसमें कौनसी शङ्का है? परन्तु सब निश्चय ज्योंके त्योंही हुआ करते हैं, यह किसी प्रकारसे भी स्वीकार नहीं किया जा सकता। किसी वस्तुको भी सब समयमें असाध्य न समझना चाहिये। हे केशव! तुम हम लोगोंके इस घोर क्लेशको देखके सन्धि-बन्धन होना कठिन कार्य्य समझते हो, यह तुम्हारा समझना ठीक है; परन्तु हमलोगोंके कष्टसे जिन लोगोंको कोई भी फल नहीं हो सकता, उन्हीं शकुनि, दुःशासन और कर्ण आदि नीच-बुद्धि पुरुषोंहीके कर्म्मसे हम लोगोंको यह कष्ट सहना पड़ता है; इससे उत्तम प्रकारसे सन्धिका प्रस्ताव होनेसे कार्य्य सफल हो सकता है। हे कृष्ण! इससे जैसे शत्रुओंके सङ्ग सन्धि बन्धन हो सके, सब भांतिसे उसीका यत्न करना। हे जनार्द्दन! प्रजापति ब्रह्मा जैसे सुर और असुरोंके शुभचिन्तक हैं, वैसेही तुमभी पाण्डव और कौरवोंके बीचमें हम लोगोंके मुख्य सुहृद हो। हे मधुसूदन! इससे कुरु, पाण्डवोंके मनके मैलको दूर करके उनमें शान्ति और सुखको स्थापन करो। मुझे मालूम होता है, कि हम लोगोंके हितका अनुष्ठान करनेमें तुम्हें कुछभी कठिनता न जान पड़ेगी; यदि तुम चेष्टा करोगे, तो अवश्यही कार्य्य सिद्ध होगा उसमें कोशिशही क्या करनी है? एक बार जाकरही तुम अपने कर्त्तव्य कार्य्यको पूरा कर सकोगे। हे वीर! दुर्य्योधनके विषयमें यदि अन्य प्रकारसे आचरणको करनाही तुम्हारा अभिप्राय होगा, तो तुम्हारी इच्छाके अनुसारही वह सिद्ध होगा। उससे उसके सङ्गमें हम लोगोंकी सन्धिही होवे अथवा तुम्हारे अभिप्रायके अनुसार युद्धही करना पड़े, अच्छी प्रकारसे विचारकर तुम जैसा अभिप्राय प्रकाश करोगे, वही हम लोगोंके लिये उत्तम और माननीय होगा। हे मधुसूदन! जब यह दुष्टात्मा धर्म्मपुत्र युधिष्ठिरका सुख और ऐश्वर्य्य न सह सका, तब किसी धर्म्मके अनुयायी उपायके मिथ्या-भाव अर्थात कपट-पाशेके खेलमें निठुर उपायोंको अवलम्बन करके उनके सम्पूर्ण राज्य, धन आदि सब वस्तुओंको हर लिया है; तब उसे पुत्र और बन्धु बान्धवोंके सहित भी मारनेमें दोष नहीं हो सकता। क्षत्रिय कुलमें क्या कोई धनुर्द्धारी पुरुषभी ऐसा उत्पन्न हुआ है, जो शत्रुओंसे युद्धके निमित्त उपस्थित होके अपने प्राणोंके भयसे भी पीठ दिखावेगा? हे कृष्ण! दुर्य्योधनने जब हम लोगोंको अधर्म्मसे पराजित किया और बनमें भेजा तबही वह हम लोगोंके हाथसे मारे जानेके योग्य हो चुका। हे कृष्ण! इससे तुम मित्रोंके निमित्त जो कुछ विधान करते हो, वह अनुचित नहीं है। बहुतही विनीतभाव तथा अत्यन्त कठोरता प्रकाश करनेसेभी उत्तम कार्य्य नहीं हो सकता। अथवा यदि तुम्हारे मतसे उन लोगोंका इसी समयमेंही बध करना कल्याणकारी होवे, तो तुम शीघ्रही उसको पूरा करो; उसमें कुछभी विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है। हे माधव! पापी दुर्य्योधनने द्रौपदीको राजसभामें बुलवाके जिस प्रकारसे क्लेश दिया था, वहभी तुम्हे पूरी रीतिसे विदित है; और उसका वह अत्याचारभी जिस प्रकारसे सहा गया था, वहभी तुम्हें मालूम है। हे माधव! वह जो पूर्ण रीतिसे इस समय पाण्डवोंके सङ्ग न्यायके अनुसार वर्त्ताव करेगा; यह मेरी बुद्धिमें किसी प्रकारसेभी ठीक नहीं जंचता है; बल्कि यही बोध होता है, कि ऊसर भूमिमें बीज बोनेकी भांति, यह शान्तिके निमित्त सन्धिका कार्य्य समस्त निष्फल होगा। इससे

हे वृष्णिनन्दन ! सम्प्रति पाण्डवोंके हित साधन और इसके अनन्तर कर्त्तव्यके विषयमें जो कुछ तुम्हें युक्तियुक्त कार्य्य जान पड़े, शीघ्रही उसका अनुष्ठान करना उचित है ।

७८ अध्याय समाप्त ।

श्रीकृष्ण बोले, हे महाबाहो ! हे पाण्डव ! तुम जो कहते हो, वही होगा ; मैं कौरव और पाण्डव दोनोंहीके कल्याण करनेके निमित्त यत्नवान होऊंगा । परन्तु हे अर्ज्जुन ! दैवी और मनुष्योंके कर्म्ममें सब काल सद्भाव नहीं रहता ; यह मुझे निश्चय है । देखिये, अपने कर्म्मको सहायतासे खेतको शोधते और बोते हैं, परन्तु बिना दैवके पानी बरसाये उन सबमें कभी कोई फल नहीं उत्पन्न होता । इस विषयमें कोई कोई यत्नवान पुरुष यत्न और पुरुषार्थसे जल सींचनेकी बातभी कह सकते हैं, परन्तु जलके सींचने परभी बहुतसे स्थानोंमें दैवकी इच्छासे खेती सूखती हुई दीख पड़ती है । इससे इन्हींको विचारकर महात्मा पण्डित लोग 'दैवकर्म्म और मनुष्यकर्म्म दोनोंसेही लोकोंके हितका कार्य्य संयुक्त है' ऐसा बर्णन करते हैं । मैं भी पुरुषार्थसे जहां तक हो सकेगा वहांतक उद्योग करूंगा परन्तु दैवकृत कर्म्मका खण्डन किसी प्रकारसे भी न कर सकूंगा । हे पार्थ ! वह पापी दुर्य्योधन पाहिले तो धर्म्म और लोकके भयका त्यागके इच्छाके अनुसार उस प्रकारके पाप कर्म्मोंमें प्रवृत्त होकरभी किञ्चित मात्र दुःखी और लज्जित नहीं होता ; उस पर भी शकुनि, कर्ण और दुःशासन आदि दुष्टमन्त्री लोग नित्यही उसकी पापमयी बुद्धिको औरभी बढ़ाते रहते हैं, इससे बिना बन्धुबान्धव और इष्ट-मित्रोंके सहित मरनेसे, वह राज्यको छोड़के शान्तिके निमित्त सन्धि करनेके विधानमें सहमत न होगा ; मुझे इसका किसी प्रकार बोध नहीं होता है । धर्म्मराज युधिष्ठिरभी अवनति स्वीकार करके राज्य त्याग करनेकी इच्छा नहीं करते हैं ; और नीचबुद्धि दुर्य्योधनभी यांचना करनेसे उस राज्यको कभी नहीं लौटावेगा । इससे उसके निकट धर्म्मराजके कहे हुए बचनोंका कहना मुझे अनुचित मालूम होता है । हे भारत ! धर्म्मराजने जिन प्रयोजन-सिद्ध बचनोंको कहा है, पापी दुर्य्योधन उन बचनोंको कभी पूर्ण न करेगा । परन्तु उसे पूर्ण न करनेहीसे वह सब लोगोंके हाथसे मारे जानेके योग्य होगा ; इसमें कुछभी सन्देह नहीं है । हे भारत ! उस दुष्टात्माने जब बालक अवस्थाहीमें सब दिनसे अनिष्ठ चेष्टा करी है, और उसके अनन्तरभी युधिष्ठिरके ऐश्वर्य्यको देखके उससे सहा न गया, इससे उसने निठुरता और कपट उपायसे उनके राज्यको हर लिया ; तब हम लोगोंके हाथसे तो निश्चय मारनेके योग्य हो रहा है, परन्तु वर्तमानमें औरभी पापोंके आचरण करनेसे वह पृथ्वीके सब मनुष्योंके हाथसे मारे जानेके योग्य हो जायगा ।

हे कुन्तीनन्दन ! जिसमें तुम लोगोंसे मेरी जुदाई हो जावे, इस निमित्त दुर्य्योधनने बहुत कुछ यत्न किये थे, किन्तु उसके उस दुष्ट अभिप्रायको मैंने कभी ग्रहण नहीं किया । हे महाबाहो ! उसका जैसा मत है, उसेभी तुम जानते हो, और मैं जो धर्म्मराजके प्रिय कार्य्योंके साधन करनेहीके निमित्त यत्नवान होरहा हूं, वह भी तुमको विदित ही है । इससे उसको नीचबुद्धि, और अपने अभिप्रायको भली भांतिसे जान सुन कर भी, तुम क्यों इस समय अजानकी तरह हमारे ऊपर शङ्का करते हो ? विशेष करके पृथ्वीके भारको उतारनेके निमित्त स्वर्गसे देवताओंके अवतार लेनेका जो दिव्य विधान है, वह भी तुमसे छिपा नहीं है । हे पार्थ ! इससे शत्रुओंके सङ्गमें विधिपूर्व्वक सन्धि किस प्रकारसे हो सकती है ? तब मुझसे बचन

और कर्म्मसे जो कुछ हो सकेगा, उसको मैं अवश्यही पूर्ण करूंगा। परन्तु उसके साथ जो सन्धि करनेमें समर्थ होऊंगा, ऐसी आशा नहीं कर सकता हूं। गये वर्षमें जब वह अत्यन्त पीड़ित हुआ था, तब मार्गमें भीष्मने क्या उसे इस शान्तिके निमित्त वचन नहीं कहे थे? उन्होंने यांचा भी था, तोभी वह नीचबुद्धि उनके वचनमें सम्मत न हुआ। जो हो, तुमने उसको जब मारनेके योग्य निश्चय कर लिया है, तभीसे वह पराजित हो चुका है। चाहे दुर्य्योधन एक चण भरके निमित्तभी सन्तुष्ट न होवे, तोभी धर्म्मराजकी आज्ञा मुझे सब प्रकार सेही माननी पड़ेगी। उस दुष्टात्माके पाप-कर्म्मोंकीभी फिरसे आलोचना करी जावेगी!

७६ अध्याय समाप्त।

नकुल बोले, हे माधव! धर्म्मात्मा धर्म्मराज युधिष्ठिरने अपने स्वाभाविक दया आदि गुणोंके अनुसार जो सब अनेक प्रकारके वचनोंको कहा है, उसेभी आपने सुना है; और भीमसेन तथा अर्ज्जुननेभी महाराजके मतके अनुकूल जिस प्रकारसे शान्ति और बाहुबल दोनों प्रसङ्गोंका उल्लेख किया, वहभी आपने सुना; अनन्तर अपने मतकोभी आपने बार बार प्रकाशित किया है। हे मधुसूदन! मेरे मतके अनुसार पहिले तुम शत्रुओंकी बातोंको सुनकर पीछे इन सब बातोंको छोड़के, समयके अनुसार जो कहना उचित बोध होगा, वही कहियेगा। हे शत्रुनाशन केशव! विशेष विशेष कार्य्योंके निमित्त मत स्थिर करना पड़ता है; और उसके करनेहीसे मनुष्य उचित कार्य्योंका निर्व्वाह कर सकता है; परन्तु एक समयमें कोई विषयको एक प्रकारसे निश्चित करते हैं, और दूसरी अवस्थामें वह औरका और हो जाता है। इससे पृथ्वीके सम्पूर्ण मनुष्योंहीकी बुद्धि अनित्य है, सब दिन निश्चित बुद्धिके अनुसार कार्य्यको कर सकें ऐसे मनुष्य इस पृथ्वीपर प्रसिद्ध नहीं हैं। हे कृष्ण! देखिये जबतक हम लोग बनबासमें छिपकर रहते थे, तबतक एक प्रकारकी बुद्धि थी; परन्तु इस समय प्रगट होनेपर उस बुद्धिके विपरीत भाव उदय हुआ है। राज्यके निमित्त अब हमलोगोंका जैसा आदर हो रहा है, बनबासके समय कभी वैसा नहीं हुआ था। हे जनार्द्दन! हमलोग बनसे लौट आये हैं, यह सुनकर सात अक्षौहिणी सेना आपके प्रसादसे आकर इकट्ठी होगई है। अत्यन्त बल और पराक्रमसे भरे इन पुरुष-सिंहोंको संग्रामभूमिमें देखकर कौन मनुष्य भयसे पीड़ित न होगा? हे पुरुषसत्तम! इससे आप पहले कौरवोंकी सभामें जाकर शान्ति-पूर्व्वक प्रस्ताव कीजियेगा; पीछे भय दिखाते हुए इस प्रकारके वचनोंका प्रयोग कीजियेगा, जिसमें वह नीच बुद्धि दुर्य्योधन भयसे विचलित होजावे। हे कृष्ण! देखिये युधिष्ठिर, भीम-सेन, अपराजित अर्ज्जुन, नकुल, सहदेव, मैं, आप, बलदेव, सात्यकी, मत्स्यराज विराट, सम्पूर्ण सेनाके सहित पाञ्चालराज द्रुपद, धृष्ट-द्युम्न, काशिराज, चेदीपति धृष्टकेतु आदि महा पराक्रमशाली वीरोंके युद्धमें प्रवृत्त होनेपर कौन मांस और रक्तके शरीरको धारण करनेवाला पुरुष हम लोगोंके विरुद्ध युद्ध कर सकेगा? हे महाबाहो! इससे आप वहां जाकर धर्म्म-राजके अभिलषित विषयोंको पूरी रीतिसे सिद्ध कीजियेगा, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। हे पापरहित! आपको उन हितसे भरे हुए वच-नोंको सुनकर और मनुष्य चाहे समझें वा न समझें, परन्तु विदुर, भीष्म, द्रोण और बाह्लिक ये लोग हृदयङ्गम करनेमें समर्थ होंगे; और आपके वचनोंके अनुसारही अत्यन्त प्रार्थना और विनयसे राजा धृतराष्ट्रको तथा दुष्ट मित्रोंके सहित दुराचारी दुर्य्योधनकोभी समझा सकेंगे।

हे जनार्द्दन ! आप वक्ता और विदुर श्रोता होनेपर किस कठिन विषयको आप लोग सरल नहीं कर सकेंगे ?

८० अध्याय समाप्त।

सहदेव बोले, हे शत्रुनाशन कृष्ण ! धर्म्मराजने जो कुछ बचन कहे हैं, यद्यपि यह धर्म्मके अनुकूलही हैं, तौभी जिसमें युद्ध हो, वही उद्योग आपको करना होगा। हे दाशार्ह ! यदि कौरव लोग स्वयंही पाण्डवोंके सङ्ग शान्ति स्थापनके निमित्त सन्धि करनेकी इच्छा करेंगे, तौभी उन लोगोंको आपको हमारे सङ्ग युद्धके निमित्त खड़ा करना होगा। हे कृष्ण ! द्रुपदपुत्री द्रौपदीको उस प्रकारसे राज सभामें लाञ्छित हुई देखकर अब बिना दुर्य्योधनके संहार किये किस प्रकारसे उसके विषयमें हम लोगोंको शान्ति मिल सकती है ? भीम, अर्ज्जुन और धर्म्मराज धर्म्मके अनुसार चलना चाहते हैं; परन्तु मैं उस धर्म्मका परित्याग करके संग्रामभूमिमें उसके सङ्ग केवल युद्धही करनेका आग्रह करता हूं।

सात्यकी बोले, हे महाबाहो ! बुद्धिमान् सहदेवने यथार्थही कहा है ; दुर्य्योधनके ऊपर मेरा भी जो पहिलेसे क्रोध बना हुआ है, वह बिना उसके बध किये कदापि शान्त नहीं हो सकता। बनमें पाण्डवोंको मृगचर्म्म धारण किये हुए देखके आपके शरीरमें भी जिस प्रकारसे महाक्रोधका उदय हुआ था, वह क्या आपको स्मरण नहीं है ? हे पुरुषोत्तम ! इससे युद्धमें पराक्रमको दिखानेवाले माद्रीपुत्र बीर सहदेवने जो बातें कहीं, उनमें सब बीर योद्धाओंकी भी सम्मति है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महा बुद्धिमान सात्यकी ऐसे बचन कहकर चुप होगये ; उसके अनन्तर सब ओरसे सैनिक वीर योद्धाओंके महाघोर सिंहनाद होने लगे ; सबने उनको "धन्य धन्य" कहकर हर तरहसे सात्यकीकी प्रशंसा करी और सबहीने युद्धके निमित्त अपने उत्साह और इच्छाको प्रकाशित करके उनको आनन्दित किया।

८१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अत्यन्त कृष्णावर्ण, बड़े बड़े लम्बे और घने तथा सुन्दर केशोंको धारण करनेवाली द्रुपदपुत्री यशस्विनी द्रौपदीने महारथ सहदेव और सात्यकीके बचनोंकी अत्यन्तही प्रशंसा करी ; परन्तु धर्म्मराजका प्रस्ताव किया हुआ धर्म्मयुक्त और हितकर बचनको सुनकर, विशेष करके भीमसेनको शान्तिके निमित्त उत्सुक देखके अत्यन्तही दुःखित और शोकित होकर आंसू भरे हुए नेत्रोंसे रोती हुई कहने लगी, हे महाबाहो ! हे धर्म्मके जाननेवाले मधुसूदन जनार्द्दन ! धृतराष्ट्रके पुत्रोंने ठगपना करके पाण्डवोंके सुखको जिस प्रकारसे लोप किया है, वहभी तुम्हें मालूम है, और सञ्जयके यहांपर आनेके अनन्तर महाराज युधिष्ठिरने उन्हें एकान्त स्थानमें ले जाकर पहिले जिस भांतिसे अपने विचारको प्रकाशित किया था, तथा उनके बिदा होनेके समयमें जो कुछ बचन कहे थे, वहभी तुम्हें भली भांति मालूम है। हे महातेजस्वी केशव ! उन्होंने दुर्य्योधन और उसके दुष्ट-मित्रोंसे कहनेके निमित्त इन्हीं बचनोंको कहा था, कि हम लोगोंको अविस्थल, वृकस्थल, माकन्दी, वारणावत और एक दूसरा कोई गांव, यह पांचही गांव दे दीजिये। परन्तु हे कृष्ण ! दुर्य्योधनने प्रार्थना करनेवाले तेजस्वी धर्म्मराज युधिष्ठिरके उस बचनकोभी नहीं ग्रहण किया। हे जनार्द्दन कृष्ण ! इससे यदि बिना राज्यको दियेही दुर्य्योधन सन्धि करनेकी इच्छा करे, तो वहांपर जाकर किसी प्रकारसेभी उसके

बचनोंको स्वीकार करना उचित नहीं है। हे महाबाहो! पाण्डव लोग सृञ्जयोंके सङ्ग मिलकर उस क्रोधसे भरी हुई कौरवी सेनाके विरुद्ध अवश्य खड़े होंगे। जब साम अथवा दानसे उसके निकटमें कोईभी अर्थ सिद्ध होनेको सम्भावना नहीं है, तब फिर उसके ऊपर कृपा करनी तुम्हें उचित नहीं है। जो लोग साम और दानसेभी शान्त नहीं होते, उन सब शत्रुओंके निमित्त जीविका चाहनेवाले पुरुषों का दण्डहीका प्रयोग करना चाहिये। हे महाबाहो अच्युत! इससे सेनाके सहित पाण्डवोंके सङ्ग मिलकर शीघ्रही कौरवोंके ऊपर महादण्डका प्रयोग करना तुम्हारा भी कर्त्तव्य कार्य्य है। हे कृष्ण! यह कर्म्म पाण्डुपुत्रोंके योग्य है, और तुम्हेंभी यशदायक होगा; विशेष करके इसे पूरा करनेपर क्षत्रियोंके पक्षमें यह कर्म्म बहुतही सुखका देनेवाला होगा। क्योंकि क्षत्रिय होवे, अथवा ब्राह्मणको छोड़कर दूसरोही जाति होवे, लोभी होनेसे उसका वध करना निज धर्म्मके अनुष्ठानको करनेवाले क्षत्रियोंका कर्त्तव्य कर्म्मही है। परन्तु ब्राह्मण सब पापोंके करने परभी किसी प्रकार मारने योग्य नहीं हैं; क्योंकि वह सब वर्णोंके गुरु और दान दी हुई वस्तुओंका सबसे पहिले ग्रहण करनेवाले हैं। हे जनार्द्दन कृष्ण! अवध्यके वध करनेसे जिस प्रकारसे पापोंको सम्भावना होती है; वैसेही वध्यको भी न मारनेसे दोषका भागी होना पड़ता है; इस बातको धर्म्मके जाननेवाले पण्डितोंने स्पष्ट रूपसे वर्णन किया है। इस निमित्त जिसमें वह दोष तुम्हें स्पर्श न कर सके, पाण्डव और सृञ्जयोंको सेनाके सङ्गमें मिलकर तुम उसके बधहीका विधान करो। हे कृष्ण! तुम्हारे समीपसे कोई विषयभी छिपाने योग्य नहीं है, जब जो कुछ कहनेकी इच्छा हुई है, उसे मैंने उसी समय कहा है। इस समय पुनरुक्ति दोष होनेपर भी मैं कई एक बातों कहती हूं, उसे तुम सुनो। विचारकर देखो तो सही, इस पृथ्वीमें मेरे समान भाग्यहीन राजपुत्री और कौन है? हे कृष्ण! मैं द्रुपदराजाकी पुत्री, वेदीसे उत्पन्न हुई हूं; मैं धृष्टद्युम्नको प्यारी बहिन और तुम्हारी प्रिय सखी हूं। आजमीढ़ बंशमें व्याह होनेसे मैं पाण्डुराजकी पुत्रवधू और इन्द्रके समान तेजस्वी पांचो पाण्डुपुत्रोंकी भार्य्या हुई हूं। इन पांचो बीरोंके वीर्य्यसे मेरे पांच महारथ पुत्र उत्पन्न हुए हैं। हे कृष्ण! अभिमन्यु जिस प्रकारसे तुम्हें प्यारे हैं, मेरे पुत्रभी धर्म्मके अनुसार वैसेही तुम्हारे प्रीतिके पात्र हैं। हे केशव! इस भांतिके सौभाग्ययुक्त लक्षण रहते हुए तुम्हारे जीतेही और पाण्डुपुत्रोंके सम्मुखही मैं राजसभामें बुलाई गई थी, और न सहने योग्य क्लेश मुझे मिले थे। पाण्डव, पाञ्चाल और वृष्णिवंशियोंके जीवित रहतेही, मैं सभाके बीचमें रहकर दुष्टबुद्धि पापियोंकी दासी कही गई थी। उसे देखकर भी जब पाण्डुपुत्र लोग क्रोध शून्य और चेष्टा-रहित होगये, तब मैंने 'हे गोविन्द! मेरी रक्षा करो' यही कहके मनमें केवल तुम्हारो ध्यान किया। हे केशव! अनन्तर उसी समयमें मेरे ससुर अन्धराज धृतराष्ट्र मुझसे बोले, "हे द्रौपदी! तू मेरी पुत्रवधू और बरदान पानेके योग्य है; इससे तू बर मांग" तब मैंने "पाण्डवोंका दासपना छूट जावे, और वे लोग अपने शोभायमान रथ तथा शस्त्रोंको फिर पावें यही मेरी प्रार्थना है" इस वचनके कहनेसे, ये सब लोग दासपनेसे छूटकर बनवासको चले आये थे। हे पुण्डरीकाक्ष जनार्द्दन! इससे तुम इस प्रकारके मेरे अनेक दुःख और क्लेशोंको अच्छी प्रकारसे जानते हो; इस समय पति, जाति और बन्धु बान्धवोंके सहित मेरा परित्राण करो। हे कृष्ण! मैं धर्म्मपूर्व्वक भीष्म और धृतराष्ट्र दोनों पुरुषोंको पुत्रबधू हूं; उन लोगोंके

सम्मुखहीमें दुष्टात्मा दुर्य्योधनने मुझे बलपूर्व्वक दासी कहा था। इससे जब वह पुरुषाधम, इस कठिन तथा रुवोंको खड़े करनेवाले निन्दित कार्य्य करके क्षण मात्र भी जीवित है, तब अर्जुनके धनुषवाण और भीमसेनके पराक्रमको भी धिक्कार है। हे कृष्ण ! यदि मैं तुम्हारे अनुग्रहको पात्री होऊं और मेरे ऊपर तुम्हारी कृपा हो, तो तुम धृतराष्ट्रपुत्रोंके विषयमें सम्पूर्णरूपसे युद्धका विधान करना।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उत्तम शरीरवाली कमलनयनी, गजगामिनी यशस्विनी द्रौपदी दुःख पूर्व्वक ऐसे वचनोंको कहकर बहुत सुन्दर अग्रभागमें टेढ़े, काले, नेत्रोंको आनन्द देनेवाले, सब सुगन्धियोंसे बासित, सब लक्षणोंसे युक्त, महा काले सर्पके समान अपने केशोंको बायें हाथके पकड़के, कमलनेत्र श्रीकृष्णके समीपमें आकर आंखोंमें आंसू भरके फिर यह वचन कहने लगी। हे पुण्डरीकाक्ष ! तुम शत्रुओंके सङ्ग सन्धि करनेकी इच्छा करते हो, वह ठीक है; परन्तु सब कार्य्योंके समय दुःशासनके हाथोंसे खींचे हुए मेरे इन खुले केशोंकी बात जिसमें तुम्हें स्मरण रहे। हे कृष्ण ! भीमसेन और अर्जुन इकबारगीही सन्धिके निमित्त अभिलाषा करेंगे; तौभी मेरे वृद्धपिता महाराज द्रुपद अपने महारथ पुत्रोंके सहित शत्रुओंके सङ्ग युद्ध करेंगे। मेरे महा बलवान पांचो पुत्र भी अभिमन्युको अगाड़ी करके शत्रुओंसे अवश्य युद्ध करेंगे। हे कृष्ण ! यदि मैं दुःशासनके उस काले हाथको टूटा और धूलसे लिपटा हुआ न देखूंगी, तो मुझे इस शोकसे शान्ति न होगी। मैंने जलती हुई अग्निके समान इस प्रचण्ड शोकरूपी आगको हृदयमें रखके किसी भांतिसे अपने समयकी वाट जोहती हुई तेरह वर्ष बिताया है; परन्तु इस समय भीमसेनके वचनोंसे पीड़ित होकर मेरा वह हृदय टुकड़े टुकड़े हुआ चाहता है। हा ! इतने दिनके अनन्तर आज इन महाबाहु भीमसेनकी धर्म्मकी ओर दृष्टि गई है !

सुन्दर नितम्ब और विशाल लोचनवाली द्रौपदी इस प्रकारसे अनेक वचन कहती हुई, लम्बी सांस लेती हुई, गद्गद होकर कांपती हुई मुक्तकण्ठसे रोने लगी। उस समय ऐसा बोध होने लगा जैसे दुःखरूपी अग्निके तेजसे शरीरके सब धातु जलकर, जलरूपसे दोनों कुचोंके ऊपर बरसती हुई, उसके वक्षस्थल (छाती) को बहाया चाहती हैं।

अनन्तर श्रीकृष्ण उसको शान्त करनेकी इच्छासे कहने लगे, हे द्रौपदी ! तुम जिस प्रकारसे इस समय रो रही हो, शीघ्रही भरतवंशकी सब स्त्रियोंकोभी इसी भांतिसे रोती हुई देखोगी। हे भीरु ! जाति और वान्धवोंके नाश होनेपर उन लोगोंकोभी तुम्हारीही भांति रोना होगा। हे भामिनी ! तुम जिसके ऊपर कुपित हुई हो, वह मित्रोंके सहित अवश्यही मारा जायगा; इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। मैं; भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव आदिके संङ्ग मिलकर युधिष्ठिरकी आज्ञा और विधाताके बनाये हुए प्रारब्धके संयोगसे अवश्यही उस कार्य्यको पूर्ण करूंगा। कालके वशमें हुए धृतराष्ट्र-पुत्र यदि मेरा वचन न मानेंगे, तो निःसन्देह मरके पृथ्वीमें सोवेंगे और कुत्ते तथा सियारोंके भक्ष्य होंगे। हे द्रौपदी ! यदि हिमालय पहाड़भी अपने स्थानसे हट जावे, पृथ्वी सौ टुकड़े हो जाय और नक्षत्रोंके सहित स्वर्गके लोकभी गिर पड़ें; तौभी मेरा यह वचन वृथा न होगा। मैं यह तुम्हारे समीप सत्य प्रतिज्ञा करके कहता हूं, कि तुम शीघ्रही अपने पतियोंको शत्रु रहित और लक्ष्मीसे युक्त देखोगी, इससे रोना छोड़कर धीरज धरो।

८२ अध्याय समाप्त।

अर्ज्जुन बोले, हे केशव ! तुमही इस समय कुरुवंशियोंके अत्यन्त हितकारी सुहृद मित्र हो। तुम दोनो ओरके समान सम्बन्धि और प्रीति पात्र हो; और दोनों पक्षके निमित्त सन्धि करनेमें समर्थ हो। इससे जब कौरव और पाण्डवोंके कुशलके निमित्त यत्न करनाही तुम्हारा कार्य्य है, तब दूसरी वुद्धि न करके पहिले उसीके अनुष्ठानका यत्न करो। हे शत्रु-नाशन पुण्डरीकाक्ष ! तुम किसीकी बात न सहनेवाले भाई दुर्य्योधनके निकट जाकर, शान्तिके निमित्त जो कुछ कहना उचित हो उसे कहना, उससे भी यदि वह मूर्ख तुम्हारे धर्म्म और अर्थसे भरे हुए हितकारी बचनोंको न मानेगा, तो वह अत्यन्तही कालके वशमें होजायगा।

श्री कृष्ण बोले, हां जो धर्म्मके अनुसार हम लोगोंका हितकर और कौरवोंकाभी कल्याण करनेवाला कार्य्य होगा, उसीको पूरा करनेकी इच्छासे मैं महाराज धृतराष्ट्रके समीप जाऊंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, शरद ऋतुके बीतनेही और हेमन्त ऋतुके आरम्भ होतेही सब शस्यसम्पत्ति उत्पन्न होती हैं; उसी कार्तिकके महीनेमें रेवती नक्षत्रसे युक्त एक दिन रात्रिके बीतनेपर, निर्म्मल और कोमल किरणोंके सहित सूर्य्यके उदय होतेही, मित्रदेवत मुहूर्त्तके आनेपर, स्वास्थ्य और सुखसे युक्त वीरोंमें श्रेष्ठ श्रीकृष्णचन्द्र जी, ऋषियोंकी स्तुतिपाठ सुनकर जैसे इन्द्र निद्रासे उठते हैं वैसेही अनेक मङ्गलपाठोंसे ब्राह्मणोंके युक्त बचनोंको सुनते हुए निद्रासे उठकर शौच आदिसे पवित्र हुए। प्रातःकालके कार्य्योंको समाप्त करके सब अलङ्कारोंसे भूषित होकर सूर्य्य और अग्निकी उपासना करी; पीछे वृषभकी पीठका स्पर्श और ब्राह्मणोंको नमस्कार किया, फिर अग्निकी प्रदक्षिणा करी और सम्मुखमें माङ्गलिक बस्तुओंका दर्शन किया। अनन्तर युधिष्ठिरके कहे हुए बचनोंको स्मरण करके शिनिपुत्र सात्यकीसे बोले, कि शंख, चक्र, गदा, तूणीर, शक्ति और दूसरे सब उत्तम शस्त्रोंको रथमें स्थापित करो, क्योंकि दुर्य्योधन शकुनि और कर्ण आदि सबही दुष्टात्मा हैं; शत्रुको निर्ब्बल देखकर बलवान मनुष्यको कभी असावधानीसे रहना उचित नहीं है। अनन्तर गदा, चक्रके धारण करनेवाले, श्रीकृष्णके बचनोंको सुनकर सेवक लोग उनके रथको सज्जित करानेके निमित्त आगे बढ़े, और वह जलती हुई प्रज्वलित अग्निके समान पृथ्वी पर चलने वाला होकर भी आकाशमें चलनेवालोंकी भांति शीघ्र चलनेवाला, सूर्य्य और चन्द्रमाके समान दोनों चक्रोंसे विचित्ररूपसे भूषित, अर्द्धचन्द्र पूर्णचन्द्र मछली, मृग और बिबिध भांतिके पक्षियोंकी आकृतियोंसे शोभित नानाप्रकारके पुष्प, मणि, और रत्नोंसे शोभायमान, निर्म्मल सूर्य्यके समान प्रकाशमान, बहुत बड़ा और देखनेमें मनोहर, सब स्थानोंमें मणि और सुवर्ण खचित शोभायमान ध्वजा-पताकासे युक्त, सब सामग्रीओंसे सजा हुआ, बाघके चमड़ेसे चारों ओर घिरा हुआ, शत्रु-ओंको भय देनेवाला तथा उनके यशको लोप करनेवाला, यदुवंशियोंके आनन्दको बढ़ानेवाला, उत्तम रथको सबप्रकारसे भूषित करके उसके अनन्तर सैव्य, सुग्रीव, मेघपुष्प और बलाहक नामके सब गुणोंसे पूर्ण सुन्दर और प्रसिद्ध घोड़ोंको स्नान और सब भूषणोंसे भूषित करके उस रथमें जुतवाया। अनन्तर पक्षियोंके राजा गरुड़ आकर कृष्णकी असीम महिमाको बढ़ाते हुए उस रथकी ध्वजापर बैठ गये।

तब पुरुषोत्तम कृष्ण सात्यकीके सहित आकाशगामी विमानकी भांति, उस मनोहर और परम रमणीय रथपर चढ़के, उसके शुभ शब्दसे पृथ्वी और आकाशको पूरित करते हुऐ अपनी शुभयात्रा करी। उस समय

आकाश बादलोंसे रहित होगया। शुभ सूचना देनेवाली सुन्दर वायु चलने लगी। धूलि उड़नेसे शान्त हो गई, मङ्गल सगुन होने लगे, हरिण और शुभ सगुनके जनानेवाले सुन्दर पची श्रीकृष्णके दहिनी ओर चलने लगे। हंस सारस आदि पची चारों ओर दीखने लगे। मन्त्रपूर्व्वक होममें आहुति देनेके समय अग्निकी दहिनी शिखा प्रज्वलित होने लगी और धुएंसे रहित होगई। वशिष्ठ, बामदेव, भूरिद्युम्न, जय, शुक्र, नारद वाल्मीक, कौशिक और भृगु आदि ब्रह्मर्षि लोग देवर्षियोंके सहित श्रीकृष्णको आनन्दित करते हुए उनकी दहिनी ओर खड़े होगये। इन सम्पूर्ण महात्मा साधु महर्षियोंसे पूजित होकर श्रीकृष्णचन्द्रने कौरवोंकी सभा हस्तिनापुरके निमित्त प्रस्थान किया। कुन्तीपुत्र राजा युधिष्ठिर, भीम, अर्ज्जुन, माद्रीपुत्र नकुल, सहदेव और पराक्रमी चेकितान, चेदीपति धृष्टद्युम्न, केकय और पुत्रोंके सहित राजा विराट आदि चत्रिय राजाओंने कुछ दूर तक श्रीकृष्णचन्द्रके पीछे गमन किया। अनन्तर तेजस्वी धर्म्मराज थोड़ी देरतक श्रीकृष्णके सङ्ग चलके; राजाओंके अनुसार यह बचन बोले जो काम, क्रोध, भय, लोभ अथवा किसी प्रकारके प्रयोजनकी सिद्धिके निमित्त भी कभी अन्याय कार्य्य नहीं करते; जो स्थिर बुद्धि, लोभ रहित, धर्म्मके जाननेवाले, बुद्धिमान, सब जीवोंके अन्तर्य्यामी और सब प्राणियोंके ईश्वर हैं; उन्हीं सब गुणोंसे पूर्ण श्रीभक्त-हितकारी प्रतापवान् देवोंके देव श्रीकृष्णचन्द्रको आलिङ्गन करके कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर इस प्रकारके कहने लगे;—

युधिष्ठिर बोले, हे जनार्द्दन! जिस यशस्विनी कुन्ती माताने हम लोगोंको बालक अवस्थासे पालन पोषण करके बड़ा किया है; जो उपवास, तपस्या, स्वस्त्ययन, देवतोंकी पूजा अतिथियोंका सत्कार और गुरुजनोंकी सेवामें नित्यही यत्नवान रहती हैं; जिसकी पुत्रोंके ऊपर प्रीति और वत्सलताकी सीमा नहीं है; जिसके सङ्ग विना प्रीति और प्रेमके किये हम लोगोंकी कोईभी गति नहीं है; नौका जैसे मगर, मच्छ, घड़ियाल आदि भयङ्कर जलजन्तुओंसे पूरित साचात कालस्वरूप महासमुद्रसे उद्धार करती है, वैसेही जिसने दुर्य्योधनके दिये हुए महाभयोंसे हम लोगोंकी बार बार रचा करी है, और हम लोगोंके निमित्त अत्यन्तही दुःख और क्लेश उठाया है; दुखोंके न सहने योग्य उन कुन्तीदेवीकी कुशल वार्त्ता पूछना। हे शत्रुनाशन माधव! पुत्रोंके कष्टको देखके वह महा दुःखी होरही हैं, इससे बार बार धीरज देकर हम लोगोंके नामको सुनाकर उनको प्रणाम और आलिङ्गन करना। हे शत्रुनाशन! किसी प्रकारसे भी क्लेश और दुःख पानेके योग्य न होकर भी विवाहके समयसेही वह दुःख और क्लेशोंका अनुभव करती हुई केवल दुःखही भोग रही हैं। हे कृष्ण! हमारे सुखका समय क्या कभी ऐसा भी आवेगा, कि जिस समय हम लोग अपनी जननीको तृप्त कर सकेंगे? अहो! बनमें गमन करनेके समय वह पुत्रोंकी सङ्गति छूटनेपर हम लोगोंके सङ्ग चलनेकी इच्छासे कातर होके रोती हुई पीछे दौड़ी थीं, परन्तु हम लोग उन्हें वहांही छोड़कर बनको चले गये थे। हे केशव! दुःखमें पड़नेहीसे जो मनुष्योंकी मृत्यु होती है, इसका भी ठीक निश्चय नहीं है। हम लोगोंकी माता कुन्तीदेवी पुत्रोंके क्लेशको देख कर अत्यन्त पीड़ित हैं, विशेष करके यदुवंशीय उनका यथा योग्य आदर और सत्कार करते हैं; इससे इतने दिनों तक जीवित भी रह सकती हैं; यदि जीती हों, तो मेरे बचनसे तुम उन्हें प्रणाम कहना। अनन्तर कौरवोंमें श्रेष्ठ धृतराष्ट्र, अवस्थामें बड़े राजा लोग, और भीष्म द्रोण, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा, वाह्लिक, सोमदत्त

और भरतवंशीय सम्मान पानेवाले पुरुषोंको तथा कुरुवंशियोंके मन्त्री, अपार बुद्धि और शक्तिसे पूरित सब धर्म्मोंके जाननेवाले महाबुद्धिमान विदुरसे हमारा प्रणाम और भेंट कहना।

राजा युधिष्ठिर सब राजाओंके सम्मुख मधुसूदन कृष्णसे ऐसे बचन कहकर उनकी आज्ञाको ग्रहण करके उनके रथको प्रदक्षिणा करके वहांसे लौट आये; परन्तु अर्जुन उस समय नहीं लौटे और उनके सङ्ग चलते हुए निज सखा, शत्रुनाशन अपराजित कृष्णसे बोले, कि हे विभो गोविन्द! पहिले जब मन्त्रणा स्थिर हुई थी, तब हम लोगोंको आधा राज्य देनाही निश्चय हुआ था; वह सब राजाओंको विदित है। हे महाबाहो जनार्द्दन! यदि दुर्य्योधन किसी प्रकारसे अवमानना न करके कपटको त्यागके प्रीतिपूर्व्वक उसे देगा, तो हम लोगोंकी भी उसके ऊपर प्रीति होगी और वह महा भयसे छूट जायगा। यदि वह इस प्रकारसे सन्धि करनेमें सम्मत होगा, तो उत्तमही है, और इसे न करके कोई दूसरे दुष्ट-उपायमें प्रवृत्त होगा, तो निश्चयही इष्ट मित्रोंके सहित मैं उस पुरुषाधमके नाश करनेका विधान करूंगा! अर्जुनके ऐसे बचनके कहने-पर भीमसेनके आनन्दकी सीमा न रही; वह हर्ष और क्रोधसे युक्त होकर वार वार ऐसे भयङ्कर शब्दको कहने लगे, कि वहांपर उप-स्थित सब धनुर्द्धारी उनके उस बिकट शब्दको सुनकर बहुतही कांपने लगे; और हाथी, घोड़े आदि सब वाहन मल मूत्र त्याग करने लगे। अनन्तर धनञ्जय अर्जुनने श्रीकृष्ण-चन्द्रसे यह बचन कहकर उनकी आज्ञा ले और उन्हें आलिङ्गन करके वहांसे लौट गये।

सब राजाओंके लौट जाने पर श्रीकृष्ण-चन्द्रजी शैव्य, सुग्रीव आदि चारों घोड़ोंसे युक्त रथपर चढ़के शीघ्रतासे हस्तिनापुरकी ओर चलने लगे। दारुक सारथीने उन घोड़ोंको इतनी शीघ्रतासे चलाया, कि वे घोड़े वायुकी भांति आकाशसे बातें करने लगे। थोड़ी दूर जानेके अनन्तर महाबाहु कृष्णने मार्गमें कई एक महा ऋषियोंका दर्शन किया। वे लोग ब्रह्मतेजसे प्रकाशित होकर मार्गके उत्तर किनारेपर खड़े थे। जनार्द्दन श्रीकृष्णने रथसे शीघ्रही उतरकर उन महा तेजस्वी देवर्षियोंको प्रणाम किया; और विधिके अनुसार उनकी पूजा करके बोले, कि हे देवर्षि लोग! सम्पूर्ण लोकोंमें सब प्राणी कुशलसे तो हैं? धर्म्मका अनुष्ठान उत्तम प्रकारसे होता तो है? क्षत्रिय आदि तीनों वर्ण ब्राह्मणोंके शासनके अनुसार कार्य्य करते तो हैं? देवऋर्षियोंको इस प्रकारसे पूजा करके श्रीकृष्णचन्द्रने उनसे फिर पूछा, आप लोग कहांसे आते हैं? किस मार्गसे कहांको जायंगे? आप लोगोंके मर्त्य लोकमें जानेका क्या प्रयोजन है? क्या कार्य्य उपस्थित हुआ है? आप लोगोंका कौन सा कार्य्य मुझे पूरा करना होगा, सो सब कहिये।

देवता और असुरोंके स्वामी पितामह ब्रह्माके सखा परशुराम ऋषि, मधुसूदन कृष्णकी इन बातोंको सुन कर उनके समीप जा उन्हें आलिङ्गन करके बोले, कि हे महातेजस्वी दाशार्ह केशव! प्राचीन देव और असुरोंके सब वृत्तान्तों जाननेवाले, सम्पूर्ण पुण्यकर्म्मोंको, करनेवाले देवर्षि लोग, बहुत बातोंके जानने-वाले ब्राह्मण लोग, महा तपस्वी आदरके पात्र राजऋषि और सब दिशाओंसे आके इकट्ठे हुए ब्राह्मण लोग, क्षत्रियोंके दर्शन करनेके निमित्त हस्तिनापुरको जा रहे हैं। हे कृष्ण! जिस सभामें अनेक बुद्धिमान सभासद बहुत राजा लोग और सत्य स्वरूप तुम विद्य-मान रहोगे, वह जो उस समयमें अत्यन्तही मनोहर तथा देखनेके योग्य होगी, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। इससे हम सब लोग उसी देखने योग्य सभाके निमित्त चले

जाते हैं। हे परन्तप! हे माधव! इकट्ठे हुई कौरवोंकी सभामें तुम धर्म्म और अर्थसे भरे हुए जिन वचनोंको कहोगे, उसीको सुननेकी इच्छासे हम लोग वहां जाते हैं। भीष्म,द्रोण आदि साधु पुरुष, महाबुद्धिमान् विदुर और यदुवंशियोंके शिरोमणि तुम, तथा सब लोक तुम्हारे सहित उस सभामें उपस्थित रहेंगे। हे गोविन्द! इससे तुम्हारी और उन लोगोंकी कही हुई सत्य, हितकारी और सुन्दर वचनोंको सुननेकी हम लोगोंकी इच्छा है। हे महाबाहो! जब तुम इस कार्य्यके निमित्त सभामें बुलाये जाओगे, तब हम लोग तुमसे फिर मिलेंगे। हे कृष्ण! इस समय तुम विघ्नोंसे रहित होकर प्रस्थान करो; पीछे हम लोग भी जाकर तुम्हें सभामें असीम बल और प्रतापके सहित सुन्दर और दिव्य आसनके ऊपर बैठे हुए देखेंगे।

८३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले,हे महाराज जनमेजय! महाबाहु देवकी पुत्र श्रीकृष्णचन्द्रके जानेके समयमें दश महारथ, एक हजार सवार और बहुतसे पैदल तथा बहुतेरी खाने पीनेकी वस्तुओंको लेकर सैकड़ों सेवक उनके पीछे चले थे।

महाराज जनमेजय बोले, यदुकुल शिरोमणि महात्मा श्रीकृष्ण किस प्रकारसे गये? किस प्रकारसे और कैसे सगुन तथा असगुनोंकी उस समयमें उत्पत्ति हुई थी?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! मैं इन सब वृत्तान्तोंका वर्णन करता हूं, आप सुनें। हे राजन्! श्रीकृष्णचन्द्र जिस मार्गसे गये थे, उसे छोड़कर और सब स्थानोंमें आकाश बादलोंसे रहित होने पर भी बिजलीका चमकना और बादलोंका गरजना सुनाई पड़ा था। मेघसे सूने आकाशमेंसे बिना बादलके ही अत्यन्त वर्षा होने लगी। सिन्धु आदि पांचों महा नदियां पूर्व्वसे पश्चिमको ओर बहने लगीं। सब दिशाओंसे उलटे विषय दीखने लगे। उस समय कुछ भी मालूम न होता था। सब दिशाएं अग्निके तेजसे भस्म होने लगीं और सब स्थानोंमें भूकम्प होने लगा। कुआं और बावली अकस्मात् मुहां मुह भरकर कितने स्थानोंको डुबाने लगी। हे राजन्! यह सब पृथ्वी उस समय धूलिसे पूरित होकर अन्धकारमें छिप गई थी; इससे किसी ओरके मार्गका भी बोध नहीं होता था। सबही देशोंमें एक न एक आश्चर्य्यका विषय दीख पड़ा था, कुछ न दीख पड़ने पर भी आकाशसे एक न एक भयङ्कर शब्द सुनाई देने लगा था। हस्तिनापुरके दक्षिण और पश्चिम ओर वायुने बड़े प्रचण्ड रूपसे चलकर सैंकड़ों वृक्षोंको जड़से उखाड़ उखाड़ फेंक दिया और कितने स्थानोंको कंपा दिया। हे भारत! श्रीकृष्णचन्द्रने जिन जिन स्थानोंमें मार्गमें निवास किया था,उन उन स्थानोंपर सब वस्तु उनके अनुकूल होगई थीं। शीतल, मन्द और सुगन्धसे भरी वायु चलने लगी, और आकाशसे कमल आदि फूलोंकी वर्षा हुई थी। जिन मार्गोंसे श्रीकृष्णचन्द्रने प्रस्थान किया था, वे सुन्दर पवित्र और सुखसे भरे थे। उस मार्गमें कुश, कांटे और कोई विघ्नकारी पदार्थ नहीं थे। सब स्थानोंमें हजारों ब्राह्मण इकट्ठे होकर धन देनेवाले कृष्णको अनेक प्रकारके आशीर्व्वाद देकर उन्हें आनन्दित करते थे; और क्षत्रिय तथा वैश्य लोग धन आदिकी भेंट देकर उनकी यथा उचित पूजा और सम्मान करते थे। किसी किसी स्थानपर स्त्रियां झुण्डकी झुण्ड इकट्ठी होकर उन प्राणियोंके हित करनेवाले भगवान् कृष्णके ऊपर फूलोंकी वर्षा करती थीं। हे भरतर्षभ! श्रीकृष्णचन्द्र मार्गमें हृदयको आनन्द देनेवाले अनेक हृष्टपुष्ट पशुपक्षी और गांवोंको देखते हुए अनेक नगर और राज्योंको लांघकर, सब सुखोंसे भरे और मनोहर शालिभवन

नाम स्थानमें आकर उपस्थित हुए। उनको देखनेकी इच्छासे उपप्लव्य नगरसे अनेक पुरवासी आकर इकट्ठे हुए थे। इस अवसरपर महा तेजस्वी कृष्णको जलती हुई अग्निके समान आया हुआ देखकर, उन लोगोंने विधिपूर्व्वक श्रीकृष्णचन्द्रका अतिथि सत्कार तथा पूजा की। अनन्तर सूर्य्यके अस्त होनेके समय आकाशमें अरुणाई छानेपर श्रीकृष्णचन्द्र वृकस्थलमें पहुंचकर रथसे उतरे, और सारथीको रथसे घोड़ों को खोलनेकी आज्ञा देकर शौच आदि कार्य्यों का समाप्त करके सन्ध्या बन्दन किया। दारुक सारथीने भी रथसे घोड़ोंको खोलकर शास्त्रविधिके अनुसार उनकी परिचर्य्या की; और उसके अनन्तर घोड़ोंको पीठ परसे सब साजोंको उतार दिया। सब कर्त्तव्य कर्म्मोंके समाप्त होनेपर मधुसूदन कृष्ण बोले, कि युधिष्ठिरके कार्य्यके निमित्त आज इसी स्थानपर हम लोगोंको रात्रि बितानी होगी। सेवकोंने उनको आज्ञाके अनुसार वहींपर उनके बैठने योग्य सब वस्तोंको बिछाकर क्षण भरमें सब गुणोंसे युक्त अन्न और पान सम्पूर्ण रूपसे बनाकर तैयार कर दिया। हे राजन्! इस गांवमें जो सब ब्राह्मण श्रेष्ठ, कुलीन, शीलसे युक्त और यथार्थ ब्राह्मण वर्णके धर्म्मों को करनेवाले थे, उन सबोंने आकर श्रीकृष्णचन्द्रको आशीर्व्वाद दिये, तथा मङ्गल सूचक बचन कहते हुए उनकी पूजा की। वे लोग सम्पूर्ण लोकोंमें पूजित यदुकुलभूषण श्रीकृष्णचन्द्रकी पूजा हो करके शान्त नहीं हुए, किन्तु अनेक रत्न और सुखोंसे भरे हुए अपने स्थानोंपर पधारनेके निमित्त श्रीकृष्णचन्द्रसे अत्यन्त प्रार्थना की। भक्तवत्सल श्रीकृष्णचन्द्रजी उनकी रुचि देख उन लोगोंके बचनमें प्रीतिपूर्व्वक सहमत हो उनके स्थानोंको गये; और उन लोगोंका सम्मान रखके, उनके सहित फिर अपने निवासके स्थानपर लौट आये। अनन्तर श्रीकृष्णचन्द्रने सुन्दर और उत्तम स्वादसे पूरित भोजन उन ब्राह्मणोंको अच्छी प्रकारसे जिमाया और उनके सङ्ग आप भी भोजन किया; और सबके सहित परम सुखसे सारी रात्रि बितायी।

८४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इधर राजा धृतराष्ट्र दूतोंके मुंहसे श्रीकृष्णचन्द्रके आगमनकी बात सुन गद्गद होकर महाभुज भीष्म, द्रोण, सञ्जय और महा बुद्धिमान् विदुरसे आदरके सहित बात चीत करते हुए इष्ट मित्रोंके सहित दुर्य्योधनसे बोले, हे कुरुनन्दन! सब ओर एक महा आश्चर्य्यका विषय सुनाई पड़ता है। हर एक घरमें स्त्री, बूढ़े और बालक यह कहते हैं, "महा पराक्रमी यदुपति श्रीकृष्ण पाण्डवोंके कार्य्य-साधनके निमित्त इस स्थानपर आवेंगे।" निज नगरवासी और आये हुए विदेशी पुरुष सबही अत्यन्त आदरके सहित इस बचनका अनुमोदन करते हैं; हाट, बाट, चौराहे और सभाओंमें उनके विषयमें बादानुबाद हो रहा है। मधुसूदन कृष्ण जो हम लोगोंके सब प्रकारसे माननीय और पूजा करनेके योग्य हैं, इसमें किञ्चित मात्र भी सन्देह नहीं है। वह सब जीवोंके ईश्वर धृति, क्षमा, वीर्य्य और बुद्धिके आधार स्थान हैं। उनसे यह सारा संसार और लोक यात्रा प्रतिष्ठित है। इससे उन्हीं पुरुषोत्तम श्रीकृष्णके निमित्त सम्मान दिखाओ क्योंकि उन्हींमें सनातन धर्म्म विराजमान है। वह पूजित होनेपर जैसे सुखके देनेवाले होते हैं, तैसे हो पूजा न पानेपर भी दुःखके कारण हो जाते हैं। हे शत्रुनाशन! यादवेन्द्र कृष्ण यदि विधिपूर्व्वक सेवासे हम लोगोंके ऊपर प्रसन्न होंगे, तो सब राजाओंके बीचमें सम्पूर्ण रूपसे मेरे सब कार्य्योंकी सिद्धि होगी। हे परन्तप! इससे तुम आजही उनकी पूजाके योग्य सब वस्तु इकट्ठी करो। मार्गोंके

बीचमें सब प्रकारसे उत्तम सामग्रियोंसे युक्त सभाएं बनवा दी। हे महाबाहो दुर्य्योधन! जिसमें तुम्हारे ऊपर उनकी प्रीति उत्पन्न हो, तुम वैसेही कार्य्योंका अनुष्ठान करो। हे भीष्म! इसमें आप लोगोंकी क्या सम्मति है?

अनन्तर भीष्म आदि सब राजाओंने धृतराष्ट्रके इस बचनकी प्रशंसा करके कहा, "यह अत्यन्त कर्त्तव्य कर्म्म है"। तब दुर्य्योधनने उन सब लोगोंका अभिप्राय अच्छी प्रकारसे जानकर यथा उचित मार्गके स्थानोंमें रमणीक और सुन्दर सभा बनानेकी आज्ञा दे दी। आज्ञा पातेही नौकरोंने सब मार्गके मनोहर स्थानोंमें बिभागके क्रमसे सब रत्नोंसे युक्त अनेक सभाएं बना कर तैयार कर दी। राजा दुर्य्योधनने उन सबकी शोभा बढ़ानेके निमित्त हर एक प्रकारके उत्तम और मनोहर आसन, नेत्रोंको आनन्द देनेवाली बहुतसी प्रमदा स्त्रियां, अच्छा अच्छा सुगन्धित वस्तु, उत्तम प्रकारके गहने, महीन और सुन्दर वस्तुएं, सुगन्धसे युक्त उत्तम फूलोंको माला, रससे युक्त अन्न पान और दूसरा अनेक प्रकारके भाजनको उत्तम वस्तुएं प्रदान की। यद्यपि कौरवराज दुर्य्योधनने जगह जगह इसी प्रकारकी अनेक सभाएं तैयार करवाई थीं; तौभी कृष्णके निवासके निमित्त अच्छा प्रकारसे विशेष यत्नपूर्व्वक वृकस्थल गांवमें अनेक रत्नोंसे युक्त एक बहुत ही सुन्दर और रमणीय सभा तैयार करवाई थी। राजा दुर्य्योधनने यह सब अमानुष और देव-भोग्य सभाएं और समस्त कार्य्योंको पूर्ण करके महाराज धृतराष्ट्रको संवाद दिया। दाशाह श्रीकृष्णचन्द्र जो उन सब सभा और विविध रत्नगठित वस्तुओंको ओर आंखसे भी न देखकर कौरवोंके स्थान हस्तिनापुरके समीप आ पहुंचे।

८५ अध्याय समाप्त।

इधर राजा धृतराष्ट्र विदुरको सम्बोधन करके कहने लगे इस समय बासुदेव कृष्ण विराट नगरसे इस स्थानको आ रहे हैं, आज वृकस्थलमें निवास कर रहे हैं, और कल यहांपर आकर उपस्थित होंगे। वह आहुकवंशीय सम्पूर्ण यदुवंशियोंके स्वामी, महा बुद्धिमान् महावीर्य्य, और तेज तथा पराक्रमसे पूरित हैं। इतने बड़े यदुवंशियोंके राज्यके वही एक मात्र स्वामी और उन लोगोंकी रक्षा करनेवाले हैं। केवल यदुवंशियोंके राज्यका ही क्यों? वह भगवान् कृष्ण इस समस्त पृथ्वी तथा तीनों लोकके ही प्रतिपालक हैं। आदित्य, बसु और रुद्र लोग जिस प्रकारसे बृहस्पतिकी बुद्धि अवलम्बन करते हैं, वैसेही यदुवंशी और अन्धकवंशी सब लोग कृष्णकी बुद्धिकी उपासना करते हुए सब कार्य्य करते हैं। हे धर्म्मके जाननेवाले! इसलिए जिस भांति उनकी पूजा करनी होगी, वह मैं तुमसे कहता हूं, उसे सुनो। मैं उनको वाह्लिक देशके उत्पन्न हुए अच्छी प्रकारके साजोंसे सजाये हुए एकही वर्णके चार चार घोड़ोंसे युक्त सुवर्णमय सोलह रथ, सुन्दर सफेद दांतोंसे युक्त मतवाले और प्रहार करनेमें बलवान आठ हाथी, उन एक एक हाथियोंके सङ्ग आठ आठ सेवक, सुवर्णके समान वर्ण, सुन्दर नेत्र और गर्भसे न उत्पन्न हुई एक सौ दासी और अनेक दास दूंगा, इसके अतिरिक्त पहाड़ी लोगोंके बनाये हुए अठारह हजार अच्छे कोमल और चित्रित कम्बलों दूंगा; और चीन देशकी उत्पन्न हुई एकहजार मृगछाला तथा दूसरी वस्तुएं जो उन्हें प्रिय होंगी, प्रदान करूंगा। मेरे भण्डारमें जो उत्तम प्रभासे पूरित एक बहुत सुन्दर और स्वच्छ मणि है, वह भी उन्हींको उपहार स्वरूप प्रदान करूंगा। क्योंकि वे ही उसके लेनेके निमित्त यथार्थ तथा योग्य पात्र हैं। और भी अश्वतरोंसे युक्त जो रथ एक दिनमें चौदह योजन तक जा सकता है,

मैं उसे भी उन्होंके समर्पण करूंगा ; उनके सङ्गमें जितने वाहन और सेवक हैं, उनको अठगुणी परिमाणसे खाने पीनेको वस्तु तैयार करा दूंगा। केवल दुर्य्योधनको छोड़कर मेरे सब पुत्र पौत्र लोग उत्तम वस्त्र तथा भूषणोंसे भूषित होकर सुन्दर और मनोहर रथोंपर बैठके यदुपति कृष्णकी अगवानीके निमित्त जायंगे। सब प्रकारके अलङ्कारोंसे शोभित हजारों वाराङ्गनाएं पैदल ही जाकर श्रीकृष्णकी अगवानी करेंगी। नगरसे भी जो सब कल्याणकी देनेवाली कन्याएं कृष्णको देखनेके निमित्त जायंगी, वे सब बिना आवरणके ही गमन करेंगी। अधिक और क्या कहूं, प्रजा लोग जैसे प्रातःकाल के उगे हुए सूर्य्यको आनन्दित होके देखते हैं ; वैसेही यदुपति कृष्णको भी स्त्री, पुरुष, बालक, बालिका और सम्पूर्ण लोग आनन्दित तथा हर्षसे युक्त होकर अच्छी प्रकारसे देखें। सैनिक पुरुष हमारी आज्ञाके अनुसार मार्गोंको ध्वजा और पताकाओंसे पूरित करें ; और जिस मार्गसे श्रीकृष्णचन्द्र आवेंगे, उसे जल छिड़कके धूलिसे रहित करें। दुर्य्योधनके घरसे दुःशासनका भवन बहुतही प्रशंसाके योग्य है, इससे शीघ्रही वह साफ करके उत्तम भूषणोंसे भूषित कराया जावे। यह बहुत बड़ा स्थान अत्यन्त रुचिकर और सुन्दर, शोभायमान सब समयमें ही शुभ लक्षणोंसे युक्त और रमणीय है ? इसी घरमें मेरे और दुर्य्योधनके सब रत्न हैं ; उनमेंसे जो जो श्रीकृष्णचन्द्रके देने योग्य होंगे, उन सबको निःसन्देह उन्हें प्रदान करना होगा।

८६ अध्याय समाप्त।

———

विदुर बोले हे राजन् ! हमारी बात दूर रहे, आप तीनों लोकमेंभी बुद्धिमान् प्रसिद्ध हैं। बहुत ही सत्कार्य्योंके करनेसे आप सब लोकोंके सम्मान करनेवाले तथा प्रीतिके पात्र हैं। ऐसी अवस्थामें आप बढ़ी हुई दशामें स्थित रहकर जो कुछ वचन कहते हैं, वह शास्त्र और सब विचारसे युक्त होगा, यही सम्भव होताहै ; क्योंकि आप स्थिरबुद्धि और बूढ़े हैं। हे राजन्! प्रजाओंके बीचमें सब लोगोंने इस बातको निश्चय कर रक्खा है, कि पत्थरकी लीक, सूर्य्यकी रोशनी, समुद्रकी तरङ्ग जैसे सदाही विद्यमान रहती है ; धर्म्म भी वैसेही सदा विद्यमान रहता है। हे राजेन्द्र ! आपके गुणोंसे मनुष्य लोग बढ़ते चले आते हैं ; इससे बन्धुबान्धवोंसे सहित आप इन गुणोंकी रक्षा करनेमें यत्नवान रहिये। हे महाराज ! आप सरलताको अवलम्बन कीजिये, और अज्ञानमें फंसकर पुत्र तथा पौत्रोंको नष्ट न कराइये। हे राजेन्द्र ! आप अभ्यागत कृष्णको जो यह सब बहुतसे धनोंको प्रदान करनेकी अभिलाषा करते हैं, वह बात तो दूर रहे, उसके अतिरिक्त इस सम्पूर्ण पृथ्वीको भी देनेके वह पात्र हैं। मैं शरीरको स्पर्श करके यह सत्य वचन कहता हूं, कि केवल धर्म्मके उद्देश्य अथवा श्रीकृष्णकी प्रीतिको साधन करनेके निमित्त आपको ऐसी इच्छा नहीं हुई है। हे बहुतसी वस्तुओंके देनेवाले ! इस प्रकारकी बहुतसी वस्तुओंके दान करनेके सङ्कल्पसे केवल छल, असत्य और कपटका ही प्रकाश होता है। इन बाहरी कर्म्मोंको देखकर ही मैं आपके भीतरके गूढ़ अभिप्रायको मालूम कर रहा हूं। हे राजन् ! पाण्डव लोग पांचों भाई केवल पांच गांव पानेहीकी अभिलाषा करते हैं, परन्तु उन लोगोंको आप वह पांच गांव भी देनेकी इच्छा नहीं करते हैं, तब फिर कौन शान्तिको स्थापित कर सकता है ? आप धनसे श्रीकृष्णको अपनी ओर किया चाहते हैं ; और इसी उपायसे उनको आप पाण्डवोंसे पृथक् किया चाहते हैं, यही आपकी इच्छा है, परन्तु मैं आपसे यही एक सार वचन कहता

हूं, कि वह धन, रत्न और पूजा आदि किसी उपायसे भी अर्ज्जुनसे पृथक् नहीं हो सकते हैं। कृष्णकी कृपा-परायणता और अर्ज्जुनकी उन पर दृढ़-भक्ति मुझे अच्छी प्रकारसे मालूम है; इस निमित्त प्राणके समान प्रिय अर्ज्जुनको जो कृष्ण कभी भी परित्याग नहीं कर सकते, यह मुझे विशेष रूपसे मालूम है। हे राजेन्द्र! आपके सहस्र प्रकारसे उद्योग करने पर भी जनार्द्दन कृष्ण केवल जलसे भरे हुए पात्र, पैर धोने और कुशल क्षेम पूछनेके अतिरिक्त किसी वस्तुके लिये न प्रार्थना करेंगे और न स्वीकार ही करेंगे। हे राजन्! इससे उस मानके पात्र महात्मा श्रीकृष्णको जिस प्रकारका अतिथि-सत्कार प्यारा है, वही तुम पूरा करो वह सम्मान करनेके योग्य पात्र हैं। हे राज-सत्तम! श्रीकृष्णचन्द्र कौरवोंके कल्याणकी इच्छासे जिस कार्य्यके निमित्त कौरवोंके समीप आवेंगे; वही उनको प्रदान कीजिये। कृष्णकी यही इच्छा है, कि आपके दुर्य्योधन और पाण्डवोंके बीचमें सन्धि स्थापित हो। हे राजन्! इससे आप उनको उसी प्रार्थनाको पूर्ण कीजिये। हे महाराज! आप पाण्डवोंके पिता हैं, वे लोग तुम्हारे पुत्र हैं; आप बूढ़े और वे लोग बालक हैं, इससे जब वे लोग आपके सङ्ग पुत्रोंके समान सम्पूर्ण आच-रणोंको करनेमें प्रवृत्त हैं, तब आपभी उन लोगोंके सङ्ग पिताके समान ही व्यवहार कीजिये। •

८७ अध्याय समाप्त।

दुर्य्योधन बोले, विदुरने कृष्णके विषयमें जो सब बचन कहे; वे सब ही सत्य हैं। जनार्द्दन कृष्ण पाण्डवों पर जैसे अनुरक्त हैं, उससे पाण्डवोंके सङ्ग उनका भेद कराना बहुतही कठिन कार्य्य है। हे राजेन्द्र! इससे आप जो उनके सत्कार और सम्मानके निमित्त, नाना प्रकारके धनको देनेका सङ्कल्प कर रहे हैं, वह कभी देनेके योग्य नहीं है। श्रीकृष्ण अवश्य ही इन सब वस्तुओंके देनेके पात्र हैं, यह ठीक है, परन्तु वह कार्य्य इस समय देश और कालके अनुसार अयोग्य है। हे राजन्! कृष्ण समझेंगे, कि "ये लोग भयभीत होकर यह सब वस्तु मुझे प्रदान कर रहे हैं"। हे पृथ्वी-नाथ! मेरा इस प्रकार निश्चय है, कि जिस कार्य्यमें अवमानको सम्भावना हो, वह बुद्धिमान् क्षत्रियोंको कभी करना उचित नहीं है। सब लोकोंमें श्रेष्ठ वह विशालनयन श्रीकृष्ण तीनों लोकमें पूजा पानेके योग्य हैं, यह मुझे सदासे ही मालूम है। परन्तु हे नरनाथ! कार्य्यकी गतिके अनुसार उनको इस समय कोई भी उपहार नहीं दिया जा सकता। जब युद्धका सामान किया जा रहा है, तब बिना युद्धके वह कैसे निवारण हो सकता है?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कौरवोंके पितामह भीष्म दुर्य्योधनके इस बचनको सुनकर विचित्र-वीर्य्यके पुत्र धृतराष्ट्रसे यह बचन बोले, कि तुम लोग जनार्द्दन कृष्णका सत्कार करो, चाहे सत्कार न करो; इससे वह तनिक भी क्रुद्ध न होंगे; परन्तु किसी प्रकारसे भी तुम लोग उनका विरुद्धता नहीं कर सकोगे; श्रीकृष्ण अवमानका सहनेके पात्र नहीं हैं। हे महा-बाहो! उन्होंने अपने मनमें जिस कार्य्यका करनेका निश्चय किया है, सब भांतिसे उपाय करने पर भी कोई पुरुष उनकी बुद्धिको विच-लित नहीं कर सकता। इससे वह वीरश्रेष्ठ कृष्ण जो कुछ बचन कहें, उसीको संशयसे रहित होकर पूरा करो, श्रीकृष्णके सच्चे और हितकर उपदेशोंको मानकर सन्धि करनेके निमित्त यत्न करो। हे राजन्! महात्मा जना-र्द्दन जो कुछ बचन कहेंगे, वह निश्चय ही धर्म्म और अर्थसे युक्त होगा, इससे तुम लोगोंका सबसे उत्तम कर्त्तव्य कार्य्य यही है, कि सब

कोई मिलकर उनके निकट उनके प्रिय वचन ही कहना।

दुर्य्योधन बोले, हे पितामह! मैं यह सम्पूर्ण राजलक्ष्मी पाण्डवोंके सङ्ग बांटकर जन्म भर सम्भोग करूं, यह किसी प्रकारसे भी युक्त नहीं हो सकता। इस निमित्त युक्तिसे अपने मनमें एक बहुत भारी कार्य्यका मैंने निश्चय किया है, उसे सुनिये। मैंने अपने मनमें यह निश्चय किया है, कि पाण्डवोंकी परम गति कृष्णको यहांपर कैद कर रखूंगा। कृष्णके कैद होनेपर सम्पूर्ण यदुवंशी, पाण्डव लोग तथा समस्त पृथ्वीके मनुष्य और राजा लोग भी मेरे वशमें हो जायंगे। इससे आप मुझे कोई ऐसी युक्ति बतलाइये जिससे जनार्द्दन कृष्ण सवेरे यहां पर आकर निश्चित किये हुए इस मेरे कैद करनेके उपायको किसी प्रकारसे जान न सकें; और उस कार्य्यके करनेमें हम लोगोंका कोई नुकसान भी न होने पावे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कृष्णको बांधनेके विषयमें दुर्य्योधनके ऐसे महा घोर और कठोर वचनको सुनकर राजा धृतराष्ट्र इष्ट-मित्रोंके सहित अत्यन्त ही पीड़ित और दुःखित हुए। अनन्तर उन्होंने उससे यह वचन कहा, हे प्रजापालक! तुम कभी ऐसे वचनोंका मत कहना; यह सनातन धर्म्मके अनुकूल नहीं है। श्रीकृष्णचन्द्र एक तो दूत होकर आरहे हैं, दूसरे हम लोगोंके सम्बन्धी और सदासे प्रीतिके पात्र हैं; विशेष करके उन्होंने कभी कौरवोंके सङ्ग कोई बुरा आचरण नहीं किया है। इसलिए किस प्रकार वह बन्धनके योग्य हो सकते हैं?

भीष्म बोले, हे धृतराष्ट्र! तुम्हारा यह मन्दबुद्धि पुत्र अत्यन्त ही कालके वशमें हुआ है। सुहृदलोग इसके हितकी इच्छा करते हैं; परन्तु यह केवल अहितकी ही इच्छा करता रहता है। आश्चर्य्यका विषय तो यह है, कि तुम भी उसके सुहृद लोगोंको टालकर केवल कुमार्गी, पापोंका करनेवाले इस दुष्टात्माका अनुसरण करते हो। तुम्हें और अधिक क्या कहूं परन्तु यह नीच-बुद्धि दुर्य्योधन, यदि सब कठिन कर्म्म सहजहीमें करनेवाले, महात्मा कृष्णके प्रति इस प्रकार बुरा आचरण करनेमें प्रवृत्त होगा, तो क्षण भरमें बन्धु, बान्धव, सेना और इष्ट मित्रोंके सहित मरकर पृथ्वीमें सोवेगा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। इस धर्म्मके छोड़नेवाले, मूढ़, पापीके अनर्थ युक्त और अयोग्य वचनोंके सुननेमें मुझे किसी प्रकारसे भी उत्साह नहीं होता। ऐसा कह कर सत्य-पराक्रमी भरतश्रेष्ठ भीष्म अत्यन्त ही क्रोधसे भरकर, सभासे उठकर शीघ्र ही घर चले गये।

८८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इधर श्रीकृष्णचन्द्र प्रातःकाल उठकर शौच आदिसे निवृत्त होकर सन्ध्या आदि करनेके अनन्तर ब्राह्मणोंसे विदा होके हस्तिनापुरको चले। उस समय वृकस्थलवासी मुख्य मुख्य पुरुष महाबलसे युक्त महाबाहु हृषीकेश कृष्णको आज्ञासे विदा होकर अपने अपने घरको गये। उधर दुर्य्योधनको छोड़कर धृतराष्ट्रके और सब पुत्र तथा भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य आदि सब सज्जन पुरुष आये हुए श्रीकृष्णचन्द्रको अगवानी करके आगेसे लिवा लानेके निमित्त गये। इसके अतिरिक्त और भी अगणित पुरवासी लोग श्रीकृष्णको देखनेकी अभिलाषासे कोई सवारी-पर और कोई पैदलही उठ धाये। श्रीकृष्णचन्द्र मार्गमें महा पराक्रमी भीष्म, द्रोण तथा धृतराष्ट्रके पुत्रोंसे मिलकर उन लोगोंके सहित नगरमें आपहुंचे। हे राजन्! श्रीकृष्णके सम्मानके निमित्त नगर और राजमार्ग उत्तम प्रकारसे अनेक रत्न और पुष्पोंसे सजाया था। हे भरतर्षभ! श्रीकृष्णचन्द्रने जिस समय नगरमें प्रवेश किया, उस समय स्त्री, पुरुष, बूढ़े और बालक कोईभी

घरमें न रहे; सबही उनके दर्शनकी लालसा से राजमार्गपर आके खड़े हुए थे; उन्हें देखते ही शिर झुकाकर स्तुति और प्रशंसा करने लगे। हे महाराज! उत्तम अट्टालिकाओं (अटारी) के ऊपर वरवर्णिनी इतनी कामिनीएँ सुण्डकी सुण्ड आकर इकट्ठी हुई थीं, कि उससे यह बोध होता था, कि उनके-भारसे उन सब घरोंकी अटारियां पृथ्वीमें मिला चाहती हैं! श्रीकृष्णके चार घोड़े स्वभावहीसे अत्यन्त जल्दी चल वाले थे, परन्तु अत्यन्त भीड़से राज-मार्गके भर जानेके कारण वे बहुत धीरे धीरे चलने लगे। शत्रुनाशन श्रीकृष्णचन्द्र इसी प्रकारसे थोड़ी दूर तक राजपथको लांघकर अन्तमें धृतराष्ट्रके राजमन्दिरमें शोभित हुए। उन्होंने राजमन्दिरके तीन खण्डको लांघकर चौथे खण्डमें विचित्रवीर्य्यके पुत्र महाराज धृत-राष्ट्रको देखा। श्रीकृष्णचन्द्रके समीप आतेही प्रज्ञाचक्षु महा यशस्वी राजा धृतराष्ट्र भीष्म और द्रोणाचार्य्यके सहित उठ खड़े हुए। उनके उठतेही कृपाचार्य्य, सोमदत्त, महाराज बाह्लिक आदि सब राजा लोग श्रीकृष्णकी सम्मानरक्षाके निमित्त उठके खड़े होगये। अनन्तर वृष्णि-नन्दन मधुसूदन राजा धृतराष्ट्रके समीप आकर यथा उचित बचनोंसे उनकी और भीष्मकी पूजा की। उनके सङ्ग इस प्रकारकी पूजा और सम्मान दिखाके श्रीकृष्णचन्द्र यथा योग्य अवस्थाके अनुसार सबहीसे मिले। इसके अनन्तर द्रोण, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा, यशस्वी बाह्लिक और सोमदत्तकी भी विशेष रूपसे पूजा की। वहांपर अत्यन्त स्वच्छ महामूल्य सुवर्णका आसन बिछा हुआ था, जनार्द्दन कृष्ण उसीपर राजा धृतराष्ट्रकी आज्ञासे जा विराजे। अनन्तर पुरोहितोंने गऊ, मधुपर्क और जल लाकर उन्हें प्रदान किया। अतिथि-सत्कार होजाने पर श्रीकृष्णचन्द्र कौरवोंसे घिरकर सब लोगोंके सङ्ग सम्बन्धके अनुसार बात चीत और हंसी ठट्ठे करते हुए वहांपर बहुत समयतक बैठे रहे। शत्रुनाशन महा यशस्वी श्रीकृष्णचन्द्र कौरवोंकी सभामें राजा धृतराष्ट्र आदि सब कौरवोंसे यथायोग्य मिलकर, और राजा धृतराष्ट्रसे सत्कार और पूजा पाकर, अन्तमें उनकी आज्ञाको लेकर वहांसे उठकर विदुरके रमणीय निवास-स्थानमें आकर उप-स्थित हुए।

विदुरने सुन्दर और पवित्र वस्तुओंसे श्रीकृष्ण की भक्तिपूर्व्वक पूजा करके कहा, हे पुण्डरी-काक्ष!-आपके दर्शनसे मेरे हृदयमें जैसी प्रीति उत्पन्न हुई है, उसे मैं किस प्रकारसे वर्णन करूं? आप सब प्राणियोंकी आत्मा, सबके अन्तर्य्यामी हैं। सब धर्मोंके जाननेवाले महाबुद्धि-मान् विदुरने इस प्रकारसे बातचीत करके उनका अतिथि-सत्कार किया। इसके अनन्तर पाण्ड-वोंका कुशल क्षेम पूछने लगे, सब बातोंको जाननेवाले भगवान कृष्णने पाण्डवोंके सम्पूर्ण वृत्तान्तको उनसे विस्तार पूर्व्वक कह सुनाया। वह अच्छी प्रकारसे जानते थे, कि विदुर पाण्डवोंके अत्यन्त मित्र हैं, उन लोगोंके ऊपर उनके क्रोधकी बात तो दूर रहे, वरन प्रीतिही उत्तम भांति और बहुत प्रकारसे है। विशेष करके वह उत्तम बुद्धिसे युक्त, ज्ञानवान्; और धर्म्म अर्थके जाननेवाले हैं; इससे उनके निकट पाण्डवोंकी सब चेष्टाओंकी वर्णन करनेमें कुछभी सङ्कोच नहीं है।

८९ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, शत्रुनाशन जना-र्द्दन विदुरके सङ्ग मिलकर, दिनके शेष भागमें पिताकी बहिन अपनी बुवा (फूफी) कुन्ती-देवीके निकट गये। कुन्ती प्रसन्न सूर्य्यके समान, कृष्णको आया हुआ देखकर, उन्हें कण्ठसे लगाकर अपने पुत्रोंको स्मरण करती हुई रोने लगी। उन महाबलवान

वीर पुरुषोंके सदाके मित्र श्रीकृष्णचन्द्रको बहुत दिनोंके अनन्तर देखकर उनके आंसूका बहना बन्द नहीं हुआ। वीरोंमें मुख्य श्रीकृष्णचन्द्रके अतिथि-सत्कार करनेके अनन्तर, जब वह आसन पर शोभित हुए, तब कुन्ती देवी दुःख तथा प्रेमसे गद्गद होकर कहने लगीं, हे तात! हे कृष्ण! जो लोग बालक अवस्थाहीसे गुरुकी सेवामें लगे रहते थे, जिनमें आपसमें अत्यन्त सुहृदता है, जो प्रीतिके पात्र, शान्त-अन्तःकरण, क्रोधके जाननेवाले और ब्राह्मणोंमें निष्ठावान्, सत्यवादी और धर्म्मात्मा हैं; जो सदा ही बहुत लोगोंसे युक्त राज्य करनेके योग्य हैं; वही लोग अधर्म्मी तथा ठगोंके फन्देमें पड़कर राज्यसे भ्रष्ट होके बनमें निवास करते थे; मैं अत्यन्त दुःख और कातरतासे रो रही थी, उस समय मुझको और सम्पूर्ण सुखकी वस्तुओंको परित्याग करके भी बनको चले गये थे; वे मेरे अत्यन्त प्यारे पांचो पुत्र बनवासके अयोग्य होकर भी किस प्रकारसे सिंह, व्याघ्र और मतवाले हाथियोंसे भरे बनमें निवास करते थे? बालक अवस्थामें जब उन लोगोंके पिताकी मृत्यु हो गई थी, तब मैंने ही उनका पालन पोषण किया था; अब इस बनवासके समयमें उन लोगोंने पिता और माता दोनोंको विना देखे कैसे निवास किया? हे केशव। पाण्डव लोग शंख, भेरी, मृदङ्ग और बांसुरीके शब्दोंसे प्रति दिन पूजित होते थे। राजमन्दिरमें सुन्दर तथा कोमल मृगचर्म्मसे युक्त शय्यापर सोते थे, भोरके समयमें घोड़े, हाथी, रथ, शंख, भेरी, मृदङ्ग और बांसुरीके शब्दको सुनके निद्रासे जागते थे; तथा ब्राह्मणोंके पुण्याह-वचन और स्वस्तिवाचनसे जागकर अनेक प्रकारके वस्त्र, रत्न, और भूषण ब्राह्मणोंकी पूजा करके उन्हें दान देते थे; और ब्राह्मण लोग भी पूजित होकर स्वस्तिवाचनसे उन्हें आनन्दित और प्रसन्न करते थे। वे महाविपदके स्थान निर्जन बनमें सिंह व्याघ्र, हाथी आदि बनके पशुओंके शब्दको सुनकर किस प्रकारसे सोते रहे होंगे, यह किसी प्रकारसे भी मेरी समझमें नहीं आता है। हे मधुसूदन! जिन लोगोंको शंख, भेरी, मृदङ्ग, बांसुरी तथा कामिनीयोंके कोमल कण्ठसे गाए गीतों और सूत मागध वन्दियोंकी स्तुतिको सुनकर नींदसे उठनेका अभ्यास था; वे लोग बनके बीचमें हिंसक जन्तुओंके चीत्कार शब्दको सुनकर कैसे सोते रहे होंगे? हे कृष्ण! जो बालकपनमें निष्ठावान, तेजस्वी, धर्म्मात्मा, सब प्राणियोंके ऊपर दया करनेवाले थे, जिन्होंने काम, क्रोध आदिको वशमें किया था; जो सदाही उत्तम मार्गसे चलते हुए अम्बरीष, मान्धाता, ययाति, नहुष, भरत, दिलीप, शिवि, उशीनर आदि पुराने राजऋषियोंके उत्तम गुणोंको धारण करते थे, जो सब गुणोंसे विभूषित होनेसे तीनों लोकके राज्यके स्वामी होनेके योग्य थे; धर्म्म शास्त्र तथा व्यवहार सब विषयोंमें जो कौरवोंमें श्रेष्ठ थे; वही सुन्दर स्वच्छ सुवर्णके समान तेजस्वी, देखनेमें सुन्दर, शीलवान्, सदाचारी, धर्म्मके जाननेवाले, सत्य प्रतिज्ञा करनेवाले, अजात-शत्रु, धर्म्मात्मा महाबाहु युधिष्ठिर कैसे हैं?

हे मधुसूदन! जो भीमसेन सदा क्रोधी, वायुके समान वेगवान् महा बलसे युक्त, दस हजार हाथियोंके बलको धारण करनेवाला है; जो सदाही प्रिय कार्य्य करके भाइयोंकी प्रीति तथा प्रेमका पात्र हुए हैं, जिसके प्रचण्ड वीरतारूपी अग्निमें कीचक, क्रोधवश, हिड़म्ब और और बकासुर भस्म होगये थे; जो शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ, शत्रुनाशन महावीर पराक्रममें इन्द्र बलमें वायु और क्रोधमें महाकालके समान होकर भी क्रोध, बल और असहन शीलताको रोककर अपने सहोदर भाईको आज्ञामें रत हैं; उस तेजस्वी महा पराक्रमी, महात्मा भीम-

सेनकी कुशलवार्त्ता मुझसे कहो। हे कृष्ण ! वह परिघके समान भुजावाले महात्मा भीमसेन इस समय कैसे हैं ?

हे कृष्ण ! जो अर्ज्जुन दोही भुजाओंके सहारे सहस्र भुजावाले सृत अर्ज्जुनके सङ्ग युद्ध करनेकी इच्छा करते हैं ; जो महावीर पुरुष एकबारगी पांच सौ बाणोंको चला सकते हैं ; जिसकी शस्त्रविद्याकी शिक्षामें कार्त्तवीर्य्य, प्रतापमें सूर्य्य, इन्द्रिय निग्रहमें महा ऋषि, चमामें पृथ्वी और वीरतामें इन्द्रके सङ्ग उपमा दी जासकती है , जिसके महाबल और पराक्रमसे इस समस्त पृथ्वीके राजाओंके बीच कौरवोंका तेज प्रताप, और प्रभुता प्रकाशित हुई है और पाण्डव लोग आज तक जिसके बाहुबलकी सदा उपासना करते हैं, युद्धमें जिनके सन्मुख होकर कोई पुरुष भी निस्तार नहीं पाता , जो वीर पुरुष सब प्राणियोंको जीतनेवाला, किसी समयमें किसीके सम्मुखसे पराजित नहीं होता है ; देवताओंके राजा इन्द्र जैसे देवताओंको आशा देनेवाले हैं, वैसे हो रथियोंमें श्रेष्ठ सत्य-पराक्रमी अर्ज्जुन भी एक मात्र पाण्डवोंको अवलम्ब है ; वह अर्ज्जुन तुम्हारा भाई और मित्र इस समय किस प्रकारसे है ?

हे मधुसूदन ! सब प्राणियोंके ऊपर दया करनेवाला, लज्जावान, सुकुमार, धर्म्मात्मा सब शस्त्रोंको जाननेवाला, महा धनुर्द्धारी, महा बलवान, युद्धके कार्य्योंको जाननेवाला सहदेव मुझे बहुत ही प्यारा है। हे कृष्ण ! धर्म्म और अर्थको जाननेवाला महात्मा सहदेव सदा ही भाइयोंकी सेवा टहलमें लगा रहता है, और भाई लोग भी उसके उत्तम चरित्रोंकी सदा प्रशंसा किया करते हैं। हे यदुनन्दन ! बड़े भाइयोंकी प्रीतिको बढ़ानेवाला और मेरी सेवामें सदा लगा रहनेवाला वीरोंमें श्रेष्ठ माद्रीपुत्र सहदेव कैसे हैं ?

हे कृष्ण ! जो वीरतासे युक्त, देखनेमें सुन्दर सुकुमार तथा भाइयोंका अत्यन्त प्यारा है ; जो युधिष्ठिर आदिका प्राण स्वरूप कहा जा सकता है ; दुःखको न सहने योग्य सुकुमार पुत्रको मैंने सदा सुखमें रक्खा था, वह महा पराक्रमी बलवान नकुल कुशलसे तो है ? हे महाबाहो ! सदा सुखोंको भोगने योग्य महारथ नकुलको क्या मैं फिर देख सकूंगी ? देखो, जिसको न देखनेसे मैं क्षण भर भी नहीं रह सकती थी, उस नकुलके ऐसे कठिन वियोग होने पर भी अब तक जीती हूं।

हे जनार्द्दन ! सब गुणोंसे युक्त, उत्तम कुलमें उत्पन्न हुई महास्वरूपवती द्रौपदी मुझे पुत्रोंसे भी अधिक प्यारी है। जिस पतिव्रता सत्यवादिनी द्रौपदीने पतियोंके सङ्ग जानेकी इच्छासे सङ्गमें रहनेवाले पुत्रोंको भी अनादरपूर्व्वक त्याग दिया ; और पतियोंके सङ्ग बनको चली गयी ; सब गुण, लक्षण, मङ्गल और रूपसे भरी हुई वह द्रौपदी किस प्रकारसे है ? हाय ! साक्षात् अग्निके समान तेजस्वी महा धनुर्द्धर शूर वीर पांच पतियोंकी अनुगामिनी होकर भी द्रौपदी इस प्रकारके दुःख और क्लेश पा रही है। हे शत्रुनाशन ! आज चौदह वर्षका समय हुआ, कि मैंने अभीतक उसका चन्द्रमुख नहीं देखा। हा ! बालकोंके बिना देखे वह अपने मनमें कितना दुःख पाती होगी, उसे मैं नहीं कह सकती हूं। द्रुपदनन्दिनी द्रौपदी जब ऐसे शुद्ध और पवित्र चरित्रसे युक्त होनेपर भी सुखको भोगनेको अधिकारिणी नहीं हुई, तब मुझे यही बोध होता है कि इस लोकमें केवल पुण्य-कर्म्महीसे सुख नहीं मिल सकता। सभामें बुलाई गई द्रौपदीकी मैंने जो कुछ दुर्दशा देखी थी, उसको स्मरण करनेसे अर्ज्जुन, युधिष्ठिर, भीम, नकुल और सहदेव किसीपर भी मेरी प्रीति नहीं होती है। इसके पहिले मैंने अनेक दुःख पाये थे, यह ठीक है। पर क्रोध और लोभके वशमें होकर नीच दुर्य्यो-

धनने उस द्रौपदीको स्त्रीधर्म्मसे युक्त, और एक वस्त्रको पहने हुए रहनेपर भी राजसभामें बुलवाकर ससुर आदि सब कौरवोंके सम्मुख सभामें जो खड़ी कर दी थी और उन लोगोंने उसे ऐसी अवस्थामें देखा था; उससे बढ़कर और दूसरा दुःख मैंने कभी नहीं सहा था। उस समय राजा धृतराष्ट्र, महाराज बाह्लिक, कृपाचार्य्य और भी कई एक सज्जन पुरुष दुःखित और शोकित हुए थे, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है; परन्तु सब सभासदोंमेंसे मैं विदुरहीकी अधिक प्रशंसा करती हूं। उत्तम चरित्र होनेहीसे मनुष्य लोकमें पूजनीय और मान पानेका पात्र हो सकता है; केवल विद्या तथा धनसे कोई भी बड़ाई पानेका अधिकारी नहीं होता। हे कृष्ण! उन महा बुद्धिमान, गम्भीर प्रकृति, महात्मा विदुरका उत्तम शील रूपी प्रकाशमान भूषण सब लोकोंमें अपने तेजसे प्रकाशित हो रहा है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, श्रीकृष्णचन्द्रको देखकर कुन्ती हर्ष और शोकसे कातर होकर नाना भांतिके दुःखोंको सुनाकर फिर कहने लगी, हे शत्रुनाशन! पहिले समयके बुरे राजाओंके चलाये हुए जुए, शिकार आदि व्यसन क्या कभी पाण्डवोंको सुखदायक हो सकते हैं? इस पापरूपी अशुभ जुएको खेलनेहीसे नीचबुद्धि धृतराष्ट्रके पुत्रोंने द्रौपदीको बहुत हो कठिन मृत्युके समान दुःख देकर मेरे हृदयको नित्य ही जलाया है। हे परन्तप जनार्द्दन! मैंने नगरसे बनको गये हुए पुत्रोंके अनेक प्रकारके दुःखकी बात सुनी है। हे माधव! दूसरेके घरमें छिपकर जो मेरे पुत्रोंको अज्ञातवास करना पड़ा था, इससे बढ़कर दुःख तथा क्लेश मुझे और मेरे पुत्रोंको कभी नहीं मिला। आज चौदह वर्ष हो गये, अभी तक दुर्य्योधन मेरे पुत्रोंको प्रवासी हो बनाये हुए है; यदि पुण्यके फलका नाश न हुआ होगा तो इतने दिनके बीतनेपर अब मुझको सुख भी मिलेगा। हे कृष्ण! मैंने धृतराष्ट्रके पुत्रोंको कभी पाण्डवोंसे कम नहीं समझा—पुत्रहीके समान उन्हें भी देखा है; इस सत्यके ऊपर मैं यह निश्चय करके कह सकती हूं, कि अवश्यही पाण्डवोंके सहित तुमको इस उपस्थित संग्रामसे विजयी और मुक्त, शत्रुओंको मरे हुए और पाण्डवोंको फिर राज्य पाये हुए देखूंगी। पाण्डवोंने धर्म्मके धनसे जिस प्रकारसे सत्यव्रतका पालन किया है, उससे उनके शत्रुलोग कभी उन्हें युद्धमें नहीं जीत सकेंगे। जो हो, इस उपस्थित दुःखको भोग करनेमें अपना तिरस्कार भी नहीं कर सकती हूं, और न दुर्य्योधनहीको दोष दे सकती हूं; केवल पिताको हो इस विषयमें दोषी कहना होगा। जुवेके खेलनेवाले धूर्त्त लोग जैसे विजयी धूर्त्तको बाजीमें लगे हुए धनको देते हैं, वैसेही मुझको उन्होंने कुन्तिभोज राजाके हाथमें समर्पण किया था। मैं जब हाथमें लेकर बालक अवस्थामें खेल रही थी, उसी समय तुम्हारे पिता मह (दादा) ने मुझे अपने पुत्रहीन कुन्तीभोज राजाके हाथमें समर्पित किया था। इससे मैं पिता और ससुर लोग सबकेही बञ्चना की पात्री हूं।

अर्ज्जुनके जन्मके समयमें यह आकाशवाणी हुई थी, कि तुम्हारा यह पुत्र जगत विजयी होगा; इसका यश स्वर्ग तक फैलेगा; यह महा संग्राममें कौरवोंको मारकर तीन महायश भाइयोंके सहित पूर्ण करेगा। मैं इस देववाणीके ऊपर भी किसी प्रकारका दोषारोप नहीं कर सकती हूं। सर्व्वव्यापक धर्म्मरूपी नारायण विधाताको सब प्रकारसे नमस्कार है। धर्म्महो सब प्रजाओंको सदासे धारण करता चला आता है। हे यदुनन्दन कृष्ण! यदि धर्म्म पृथ्वीपर रहेगा, तो जैसी देववाणी हुई है, उसे तुम अवश्यही पूरी

करोगे। हे माधव! पुत्रोंके विरहसे जीती हुई मैं जिस प्रकारके शोकारूपी अग्निसे जली जाती हूं; वैसा दुःख मुझे न विधवा होनेसे न अर्थनाशसे, न शत्रुतासे न और किसी प्रकारसे कभी अनुभव हुआ है। मैं जब तक उस सब शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ गाण्डीव धनुर्द्धारी अर्ज्जुनको नहीं देख सकती हूं; तबतक मेरे हृदयमें शान्ति कहां है? हे कृष्ण! आज चौदह बर्षतक मैं युधिष्ठिर, भीम, अर्ज्जुन, नकुल और सहदेवको न देखकर जीवन्मृत होगई हूं। हे जनार्द्दन! जो लोग सब दिनके निमित्त बिदा हो जाते हैं; उनके निमित्त उनके पुत्र और जातिके लोग मरना निश्चय करके श्राद्ध आदि कर्म्म करके शान्ति प्राप्त करते हैं, परन्तु मेरे पक्षमें पुत्रलोग जीवित दशामें रहकर भी मरे हुएके समान गिन जाते हैं, और मैं भी उन लोगोंके निकट मरी हुई बोध होती हूं! हे कृष्ण! तुम मेरे वचनके अनुसार धर्म्मात्मा राजा युधिष्ठिरसे यह कहना, कि "हे पुत्र! तुम्हारे धर्म्मकी अत्यन्त हानि हुई है; इससे जिसमें धर्म्म नष्ट न होवे वही कार्य्य तुम करो।"

हे जनार्द्दन! जो स्त्री दूसरेके भरोसे अपने जीवनको बिताती है, उसके जीनको धिक्कार है; मांगकर जीविका प्राप्त करनेकी अपेक्षा मर जाना सौगुना उत्तम है। हे वासुदेव! तुम अर्ज्जुन और उद्यमशाली भीमसेनसे भी हमारे इस बचनको कहना, कि "क्षत्रियोंकी माता जिस निमित्त पुत्रको उत्पन्न करती है, उसके योग्य यही समय आकर उपस्थित हुआ है, इससे इस उपस्थित समयमें यदि काल तुम लोगोंको अतिक्रम करे, तो भी तुम महा घोर घृणित कर्म्म भी करके सब लोगोंके मानके पात्र बनो। तुम लोगोंको निन्दित और घृणित कार्य्योंको करते हुए देखकर मैं भी तुम्हें सब दिनके निमित्त परित्याग करूंगी, क्योंकि योग्य समयके आनेपर अत्यन्त प्यारे जीवनको भी परित्याग किया जा सकता है। हे पुरुषोत्तम! तुम सदा क्षत्रियोंके धर्म्ममें स्थित दोनों माद्री-पुत्रोंसे कहना, कि "हे पुत्रो! तुम लोग प्राण-पण करके भी अपने पराक्रमसे उपार्ज्जित भोगोंकी प्रार्थना करो। क्योंकि अपने पराक्रम-से प्राप्त हुआ धन ही क्षत्रियोंके लिये प्रिय होता है।" हे महाबाहो! वहांपर जाकर हर एकसे इसी प्रकारके वचन कहकर मेरे पुत्र अर्ज्जुनसे विशेष करके यह बचन कहना, कि जिसमें वह द्रौपदीके बताये हुए मार्गहीसे सब प्रकारसे चले, उसकी प्रीतिको पूरी करनेमें किसी प्रकारसे शिथिलता न करे। हे कृष्ण! इन बातोंको तुम खूब जानते हो, कि भीम और अर्ज्जुन क्रुद्ध होनेपर साक्षात काल मूर्त्तिको धारण करके देवताओंको भी विनष्ट कर सकते हैं; परन्तु ऐसे बलवान होनेपर भी जो उनकी प्यारी स्त्री सभामें बुलाई गई थी, और दुःशासन तथा कर्णने उसके ऊपर जिन रूखे और कठोर वचनोंका प्रयोग किया था; इससे बढ़कर और अपमानका विषय दूसरा क्या हो सकता है? नीचबुद्धि दुर्य्योधनने मुख्य मुख्य कौरवोंके सम्मुख महात्मा भीमसेनका जो अप-मान किया था, अवश्यही उसका पूरा फल वह पावेगा; क्योंकि शत्रुताका सूत्र पानेहोसे भीमसेन बिना उसकी समाप्ति किये शान्त होने-वाले नहीं है। विशेष करके थोड़े ही समयमें उनकी शत्रुताकी शान्ति नहीं होती। वह जब-तक शत्रुओंका संहार नहीं करते हैं, तबतक सुखी भी नहीं होते। हे कृष्ण! मैं पुत्रोंको जुएमें हारने, राज्यके हरे जाने तथा उन लोगोंके बनबाससे भी उतनी दुःखी नहीं हूं, जितनी उस एकवस्त्रधारिणी पतिव्रता द्रौपदी-को सभामें नीचबुद्धियोंके कठोर बचनोंको सुना-नेसे दुःखी हुई हूं; यही मुझे सबसे अधिक दुःख है उससे बढ़के मेरे दुःखका और कोई भी विषय नहीं है। हाय! क्षत्रिय-धर्म्ममें सदा ही रत,

स्त्रीधर्म्मसे युक्त, यशस्विनी द्रौपदी ऐसे ऐसे असामान्य वीर पुरुषोंकी भार्य्या होकर भी, उस समय अनाथिनी हुई थी। हे पुरुषोत्तम मधुसूदन! बलवानोंमें श्रेष्ठ बलराम, तुम और प्रद्युम्न मेरे तथा मेरे पुत्रोंके सहायक रहनेपर भी तथा पराक्रमी भीमसेन और अजेय अर्ज्जुनके जीते हो मुझे इस प्रकारका कठिन दुःख सहना पड़ा, यही एक बड़ा भारी आश्चर्य है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर अर्ज्जुनके मित्र श्रीकृष्णचन्द्र पुत्रोंके दुःखसे अत्यन्त दुःखित और कातर तथा शोकित कुन्तीदेवीको धीरज देने लगे।

श्रीकृष्ण बोले, हे महाबुद्धिमती! इस पृथ्वीके बीचमें तुम्हारे समान सौभाग्यवती यशस्विनी रानी दूसरी कौन है? तुम शूरसेन भूपतिकी दुहिता और आजमीढ़ वंशमें व्याही गयी हो। तुम्हारा उत्तम कुलमें जन्म हुआ और उत्तम कुलमें बिवाह होनेसे एक तालावसे दूसरे तालावमें आई हुईके समान हो। तुम अत्यन्त ऐश्वर्य्यशालिनी सबका कल्याण करनेवाली, और स्वामीको अत्यन्तही सेवा करनेवाली पतिके आदरकी पात्री थी। वीरपत्नी होकर तुम महावीरपुरुषोंकी जननी हुई हो; इससे स्त्रियोंमें जो सब गुण होने उचित हैं, उनमें एक भी तुममें बाकी नहीं है; तुम सबही गुणोंसे भूषित हुई हो। इससे तुम्हारे समान महाभाग्यवती स्त्रीको सुख और दुःख दोनोंही अनुभव करना योग्य है। हे देवी! तुम्हारे पुत्र लोग निद्रा, आलस्य, क्रोध, हर्ष, भूख, प्यास, सर्दी, गर्मी, आदि सब दुखदायी विषयोंको जीतकर, उन्हें अपने वशमें करके, वीरोंके योग्य सुखहीमें सदा लगे रहते हैं। अत्यन्त उत्साही और महाबलसे युक्त पाण्डवलोगोंको साधारण मनुष्योंके प्रार्थनीय ग्रामविहार आदि किसी विषयमें भी रुचि नहीं है; वीरसुख ही उन लोगोंको प्यारा है, थोड़से अर्थात् स्वल्प विषयसे वे कभी सन्तुष्ट होने वाले नहीं हैं। धीरज धारण करने वाले पण्डित लोग किसी वस्तुकी अन्तिम सीमाकोंही भोग करते हैं। वे लोग या तो मनुष्योंके योग्य महा क्लेशोंको सहते हैं, और नहीं तो उत्तम भोग और सुखोंके एक शेष फलको अनुभव करते हैं; परन्तु ग्रामप्रिय मनुष्य लोग केवल मध्यम अवस्थाकी प्रार्थना करते हैं; बहुत दुःख अथवा अत्यन्त सुखके निमित्त वह इच्छा नहीं करते। इसीसे धीर पाण्डव लोग एक शेषकी अवस्थाहीमें रत हैं; मध्यम अवस्थामें जानेके निमित्त कभी उन लोगोंकी प्रवृत्ति नहीं है। विषयोंकी दोनों सीमाकी प्राप्ति ही सुखकी देनेवाली है और इन दोनोंका मध्यभाग दुःखका हेतु है, इसे बुद्धिमान् पण्डितोंने भी स्पष्ट रूपसे कहा है।

हे माता! पाण्डव लोगोंने तथा द्रौपदीने तुम्हें प्रणाम करके अपने आत्म कुशलको निवेदन करनेके अनन्तर तुम्हारा कुशल वृतान्त पूछा है। तुम पुत्रोंको शीघ्र ही कृतकार्य्य, नीरोग, सब लोकोंके स्वामी, शत्रुरहित और लक्ष्मीसे युक्त देखोगी, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

पुत्रोंके दुःखसे दुःखित कुन्ती देवी इस प्रकारसे धीरज पाकर, अज्ञानसे उत्पन्न हुए मोहको रोककर जनार्द्दन कृष्णसे बोलीं, हे महाबाहो मधुसूदन कृष्ण! तुम्हारे विचारमें जो कुछ कार्य्य पाण्डवोंके निमित्त सत्य और हितकारी हो, धर्म्मके अनुसार निष्कपट रूपसे तुम उसीका अनुष्ठान करो। हे परन्तप! तुम्हारी सत्यनिष्ठता और वंश मर्य्यादाका जैसा प्रभाव है; उसे मैं विशेष रूपसे जानती हूं। मित्र लोगोंके कार्य्यके विषयमें तुम जैसी बुद्धि और पराक्रम प्रकाशित करते हो, वह भी मुझे विदित है।

अधिक और क्या कहूंगी मेरे कुलमें तुम हो धर्म्म, सत्य और बड़ो कठिन तपस्या हो; तुम पाण्डवोंके भ्राता और तुम ही परमेश्वर हो; यह सारा ब्रह्माण्ड तुममें ही विराजमान हैं। तुमने जो कुछ वचन कहे, वे अवश्यही सत्य होंगे; कभी वे अन्यथा न होंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महाबाहु श्रीकृष्णचन्द्र कुन्तीदेवीके सङ्ग इस प्रकारसे बातचीत करके उनकी अनुमति ग्रहण करके तथा उनकी प्रदक्षिणा करके दुर्य्योधनके राज मन्दिरकी ओर चले।

९० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले,महा यशस्वी जनार्द्दन कृष्णने, कुन्ती देवीकी अनुमति पाने पर, उन्हें प्रदक्षिणा करके वहांसे चलकर, अनेक प्रकारके आसनोंसे युक्त, परम शोभासे पूरित साक्षात इन्द्र भवनके समान दुर्य्योधनके राजमन्दिरमें आकर प्रवेश किया। राज-मन्दिरके दर्वाजेपर अनेक द्वारपाल खड़े थे; परन्तु कोई भी उन्हें भीतर जानेसे रोक न सका। वह बिना बाधाके तीन खण्डको लांघ करके जलसे युक्त बादलके समान विशाल, पर्व्वतके शिखरके समान ऊंचे, अत्यन्त शोभासे शोभित, प्रकाशमान मन्दिरके ऊपर जा पहुंचे वहां पहुंचके देखा, कि महाबाहु दुर्य्योधन अनेक राजा और कौरवोंके सहित राजासंहा-सनपर बैठे हैं। उसके समीपही दुःशासन, कर्ण और सुबलपुत्र शकुनि अपने अपने आस-नोंपर बैठे थे। यदुनन्दन कृष्णको अभ्यागत रूपसे आया हुआ देखकर महा यशस्वी धृतराष्ट्र-पुत्र दुर्य्योधन उनके सम्मानके निमित्त सब लोगोंके सहित आसनपरसे उठ खड़े हुए। श्रीकृष्ण पहिले उनसे अनन्तर उनके इष्ट मित्रोंसे, और उसके बाद वहांपर बैठे हुए सब राजाओंसे यथा योग्य अवस्थाके अनुसार मिले। अनन्तर अनेक प्रकारके वस्त्रोंसे युक्त, सुन्दर और स्वच्छ सुवर्णमय पलङ्ग पर बैठ गये। तब कुरुराजने उनके सत्कारके निमित्त गज,मधुपर्क जल, घर, राज्य, सबही निवेदन किया। कौरव लोग तथा दूसरे सब राजा लोग प्रसन्न, सूर्य्यके समान तेजस्वी और उत्तम पलङ्गके ऊपर बैठे हुए श्रीकृष्णचन्द्रकी उपासना करने लगे।

अनन्तर राजा दुर्य्योधनने विजयी श्रेष्ठ श्रीकृष्णचन्द्रको भोजनके निमित्त निमन्त्रण दिया; परन्तु उन्होंने उसे स्वीकार नहीं किया। इससे कुरुराज दुर्य्योधनने कर्णको सम्बोधन करके उनके द्वारा यदुपति कृष्णको विनीत भावसे कहा, हे जनार्द्दन! आपके निमित्त अन्न, पान, वसन, शयन आदिके योग्य सब वस्तुएं तैयार हुई हैं, परन्तु आपने उनमेंसे कुछ भी ग्रहण नहीं किया, इसका कारण क्या है? हे माधव! आपने कुरु पाण्डव दोनों पक्षको सहायता दी है, तथा दोनोंहीके हितके अनुष्ठानमें लगे हुए हैं; आप धृतराष्ट्रके मुख्य सम्बन्धी और प्रीतिके पात्र हैं; धर्म्म और अर्थके सम्पूर्ण तत्त्व आपको विदित हैं; इससे हे चक्र और गदाके धारण करने वाले गोविन्द! सब प्रकारसे योग्य पात्र होकर भी आपने जो मेरी समर्पण की हुई वस्तुओंको नहीं ग्रहण किया, इसका कारण क्या है? हम लोग इसको सुननेकी इच्छा करते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, दुर्य्योधनका यह बचन सुननेमें मोठा बोध हुआ यह ठीक है, परन्तु उत्तर कालको बिचारनेसे वह बहुतही शठतासे पूर्ण मालूम होता है। जो हो, राजीवलोचन कृष्ण उनके इस बचनको सुन कर अपनी विशाल दहिनी भुजाको उठाकर वर्षाकालके मेघके समान गम्भीर स्वरसे युक्त सुन्दर हेतु और उत्तम फलको देनेवाले बचनसे प्रत्युत्तर किया कि हे भारत! दूत लोग अपने कार्य्यको पूरा करनेपर ही, जिसके

निकट जाते हैं उनको पूजा ग्रहण करते तथा उनके अन्न आदि वस्तुओंको भी भोजन करते हैं। इनसे जब मैं कृतकार्य्य होऊंगा, तब आप मेरे तथा मेरे साथियोंका इच्छानुसार सत्कार कीजियेगा।

श्रीकृष्णके इस वचनको सुनकर, दुर्य्योधन फिर उनसे बोले; कि हम लोगोंके सङ्ग आपको इस प्रकारका व्यवहार करना युक्तिसे पूरित नहीं है; आप चाहे कृतकार्य्य हों,अथवा न हों; उसको हम लोग नहीं मानते हैं; केवल यदुकुलके सम्बन्धसे ही मैं पूजा करनेका यत्न कर रहा हूं, परन्तु यत्न करनेपर भी कुछ नहीं कर सकता हूं। हे मधुसूदन! हम लोग प्रीतिके सहित आपको पूजा करनेके निमित्त उत्सुक हैं; परन्तु आप न जाने किस कारणसे उसे स्वीकार नहीं करते हैं; इसे हम लोग कुछ भी नहीं समझ सकते हैं। हे गोविन्द! आपके सङ्ग हम लोगोंकी कुछ शत्रुता भी नहीं है, और कभी युद्धका विवाद भी नहीं हुआ है; इससे विचार कर देखनेसे आपका यह वचन किसी प्रकारसे युक्ति-सङ्गत नहीं मालूम होता है।

यह सुनकर श्रीकृष्णचन्द्रजी दुर्य्योधनके प्रति बहुत हंसकर बोले,—मैं काम, क्रोध भय, लोभ, द्वेष और हेतुवाद आदि किसी प्रकारसे भी धर्म्मको नहीं छोड़ सकता हूं। हे राजन्! जिसके ऊपर किसीकी प्रीति रहती है, वह उसीका अन्न भोजन करता है; अथवा जो विपदग्रस्त होता है, वह भी दूसरेका दिया हुआ अन्न भोजन करता है; परन्तु आपने भी मेरी प्रीतका कोई कार्य्य नहीं किया है, और मैं भी आपद-ग्रस्त नहीं हुआ हूं; तब मैं कैसे आपका अन्न ग्रहण कर सकता हूं? हे राजन! आप बिना कारणही अपने प्रिय कार्य्योंको करनेवाले,सब गुणोंसे युक्त, निज भ्राता पाण्डवोंके सङ्ग जन्मसे बैर करते चले आते हैं। बिना कारण उनके सङ्ग शत्रुता करना किसी प्रकारसे उचित नहीं है। पाण्डव लोग सब दिनोंसे आपके अनुकूल हैं; उन्हें कोई क्या कुछ कह सकता है? जो पुरुष उन लोगोंसे बैर करता है, वह हमारा भी शत्रु है, जो उन लोगोंके अनुकूल है, वह मेरे भी अनुकूलही है; धर्म्म करनेवाले पाण्डवोंसे मैं पृथक नहीं हूं। काम, क्रोध, आदि विषयोंके वशमें होकर जो मूढ़-बुद्धि पुरुष अत्यन्त मोहमें फंसकर गुणवान मनुष्योंके सङ्ग विरोध करता है, उसको पण्डितोंने पुरुषोंमें अधम पुरुष कहा है। इन्द्रियोंके वशमें रहनेवाला जो अधम पुरुष क्रोध और लोभमें फंसकर उत्तम गुणोंसे युक्त जाति-वालोंको सदा हो लोभकी दृष्टिसे देखता है, वह कभी बहुत दिन तक सुख सम्पत्तिके पद पर प्रतिष्ठित नहीं रह सकता। परन्तु जो बुद्धिमान मनुष्य अपने हृदयके अप्रिय होनेपर भी गुणवान मनुष्योंको प्रिय कार्य्योंसे अपने वशमें कर सकता है, वह सब दिन यशके उत्तम मार्गसे गमन करताहै। इससे इन सब बातोंको विचार करके देखनेसे आपका यह दुष्ट-भावोंसे पूरित अशुभ-अन्न कभी ग्रहण तथा भोजन करनेके योग्य नहीं है, मैं एक मात्र बिदुरके घर भोजन करूंगा, यही मेरा निश्चय है।

महा बुद्धिमान महाबाहु श्रीकृष्णचन्द्र, किसीके वचनको न सहनेवाले दुर्य्योधनसे ऐसा कह कर, मणिरत्नोंसे प्रकाशित उनके राजभवनसे निकलकर बिदुरके घर चले गये। कृष्णके वहांपर पहुंच जानेपर भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, वाह्लिक आदि कौरवोंने उनके निकट गमन किया। उन कौरवोंने बल और पराक्रमसे युक्त कृष्णसे कहा,—हे मधु-सूदन! हम लोग अनेक मणिरत्नोंसे पूरित घर-सब आपके समर्पण करते हैं। परन्तु महा

तेजस्वी कृष्ण उन लोगोंसे यही वचन बोले कि आप लोगोंके यहांपर आगमन करनेहीसे मेरी पूरी पूजा हो चुकी; अब आप लोग अपने अपने स्थानको जाइये। कौरवोंकेलौट आनेपर विदुरने परम यत्नवान होकर भक्तिपूर्व्वक मधुसुदन कृष्ण भगवानको पूजा की। अनन्तर उन्होंने महात्मा कृष्णको अनेक गुणोंसे युक्त भोजन योग्य बहुतसा पवित्र अन्न जल निवेदन किया। मधुसूदन कृष्ण पहिले उन सब भोजनोंके सङ्ग बहुत सा धन दान देकर वेदके जानने वाले ब्राह्मणोंको उत्तम प्रकारसे तृप्त किया; अनन्तर देवताओंमें बैठे हुए इन्द्रकी भांति अपने साथियोंके सङ्ग मिलकर बचे हुए अन्न आदिको भोजन किया।

९१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, श्रीकृष्णके भोजनकर चुकनेपर, विश्रामके अनन्तर रातके समय विदुर उनसे कहने लगे, हे जनार्द्दन कृष्ण! आपका यहांपर आना पूरी बुद्धिमानीका कार्य्य नहीं हुआ है; क्योंकि दुर्य्योधन बड़ा नोचबुद्धि, धर्म्म-अर्थका विरोधो और महा क्रोधी है। अपने मानको इच्छासे वह अनायास हो माननोय लोगोंके मानको नष्ट करता है, बुद्धिमानोंके शासनमें नहीं चलता, धर्म्मशास्त्रको आज्ञाको लांघ करके कार्य्य करता है। हे कृष्ण! उसकी मूढ़ता और नीचताकी बातें क्या कहूं। वह ऐसा मूर्ख और हठी है, कि हित चाहनेवाले लोगोंकी भी बातको नहीं मानता है। कोई कुछ उपकार करे, उसका पलटा देना तो दूर रहा; वह उलटे अपकारहीकी चेष्टा किया करता है। वह महा कृतघ्न, कामप्रिय, मिथ्यावादी, धर्म्मको त्यागनेवाला, पण्डितोंसे अभिमानी, मित्रद्रोही सबके निकट सदा शङ्कित रहनेवाला, मूढ़, नीच बुद्धि, इन्द्रियोंके वशमें रहनेवाला, स्वेच्छाचारी और सब कार्य्योंमें चञ्चल चित्तका पुरुष है। मैंने जो इनसब दोषोंका वर्णन किया है; इसके अतिरिक्त और भी बहुतसे दोष दुर्य्योधनमें विद्यमान है। इससे यदि आप मङ्गलदायक तथा हितकारी वचन कहेंगे तौ भी वह क्रोधके वशमें होकर कदापि उसको स्वीकार न करेगा। भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, कर्ण, अश्वत्थामा; जयद्रथ आदि बीरोंसे उसे विजयकी बहुत हो आशा है, इससे वह शान्ति स्थापनके निमित्त इच्छा नहीं करता। हे जनार्द्दन! धृतराष्ट्रके पुत्रों तथा कर्ण आदिक दुष्ट पुरुषोंका इस प्रकार निश्चय है, कि भीष्म द्रोण और कृपाचार्य्य आदि वीरों के विरुद्ध युद्ध करना तो दूर रहे पाण्डव लोग उनको ओर भी न देख सकेंगे। हे मधुसूदन! अविचारी मूर्ख दुर्य्योधन राजाओंकी सेनाओंको बटोरकर अपनेको कृतार्थ समझ रहा है। उसकी नीचबुद्धि और दुराशाकी बात मैं कहां तक कहूं, उसे यह निश्चय है, कि अकेला कर्ण हो पाण्डवोंको जीत लेगा; इससे शान्ति स्थापनके निमित्त उसको कभो प्रवृत्ति न होगी।

हे कृष्ण! आप कौरव और पाण्डवोंके बीच सन्धि स्थापन करनेकी इच्छा करते हैं, सो उचित है: परन्तु धृतराष्ट्रके सब पुत्रोंकी यह प्रतिज्ञा है, कि पाण्डवोंको हम लोग कोई वस्तु भो उचित रीतिसे प्रदान न करेंगे। इससे जो लोग ऐसा निश्चय किये हुए हैं, उनके निमित्त कोई हितकारी वचनका प्रयोग करनेसे भी अवश्य निष्फल होगा इसमें सन्देह हो क्या है? हे मधुसूदन! जहांपर भली बुरी सब बात एकही समान हैं, उस स्थानपर बुद्धिमान पुरुषको बधिरके समीप गीत गानेकी भांति, वृथा वाक्योंका व्यय करना उचित नहीं है। हे माधव! चण्डालके निकट ब्राह्मणकी भांति उन मर्य्यादा रहित मूर्खोंकी मण्डलीके बीच आपको वाक्यव्यय करना किसी प्रकारसे युक्तिसङ्गत न होगा। दुर्य्योधन अपने बलके

घमण्डमें चूर है, इससे वह आपका वचन कभी स्वीकार न करेगा, आप उसके समीप जो कुछ वचन कहेंगे, वे सब ही निरर्थक होंगे। हे कृष्ण! वे सब नीचबुद्धि, दुष्ट और पापी लोग जब एक स्थानपर बैठे रहेंगे, उस समय उनके बीचमें आपका जाना तथा उन लोगोंके विरुद्ध बातोंका कहना मेरे मतमें उत्तम नहीं है। कभी बुद्धिमान् पुरुषोंकी उपासना न करनी, अत्यन्त बड़े ऐश्वर्य्यकी प्रभुता पाना, अहंकारसे भरे रहना, युवा अवस्था और क्रूर-स्वभाव तथा किसीकी बातोंको न सहना इत्यादि कारणोंसे दुर्य्योधन आपकी हितकारी बातोंको न मानेगा। हे कृष्ण! उसकी सेना भी अत्यन्त बलवान हैं, और तुम्हारे ऊपर वह बहुत शङ्कित रहता है; इसीसे आपकी बातोंको कभी न ग्रहण करेगा। हे जनार्द्दन! धृतराष्ट्रके पुत्रोंका ऐसा निश्चय है, कि सब देवताओंके सहित साचात इन्द्र भी आवें तो भी मेरी सेनाके बलको नाश नहीं कर सकेंगे। इस लिये ऐसी आशा करनेवाले, काम क्रोधके वशवर्त्ती दुर्य्योधनके निकट तुम जिन बातोंका प्रसङ्ग करोगे; वे यथार्थमें अर्थयुक्त होने पर भी निरर्थक हो जावेंगी। नीच बुद्धि, मूढ़, दुर्य्योधन हाथी, घोड़े, रथ और पैदलोंसे युक्त महासेनामें निवास करनेपर भयसे रहित होकर अब यह समझता है, कि सम्पूर्ण पृथ्वी मेरी मुट्ठीके भीतर है; और यही समझकर वह इस अखिल भूमण्डलपर निष्कण्टक राज्य करनेकी आकांक्षा करता है; इससे बिना युद्धके उसके समीप शान्ति स्थापित करना किसी प्रकारसे सम्भव नहीं होता। जो धन उसे एकवार मिल गया है, वह सदा ही उसके निकट उपस्थित रहेगा; कभी उसके हाथसे बाहर न होगा, ऐसा ही उसे ध्रुव-निश्चय है। हा! इस मूर्ख दुर्य्योधनके निमित्त बोध होता है, कि समस्त पृथ्वीके बीरोंका नाश होगा; क्योंकि उसकी सहायताके वास्ते सम्पूर्ण दुष्ट-क्षत्रिय और राजा लोग कालसे प्रेरित होकर पाण्डवोंसे युद्ध करनेकी इच्छासे सब ओरसे आकर इकट्ठे हुए हैं। ये राजा लोग पहिले आपके सङ्ग शत्रुता करके श्रीभ्रष्ट हुए थे, वे ही सब आपके भयसे दुःखी होकर अब इस समय कर्णके सङ्ग मिल कर दुर्य्योधनके भरोसे हैं और उसका कार्य्य सिद्ध करनेके निमित्त अपना प्राण पर्य्यन्त देकर पाण्डवोंसे युद्ध करनेके निमित्त बहुत ही आनन्दित हैं। हे यदुकुलभूषण कृष्ण! इससे उन लोगोंके बीचमें आपका प्रवेश करना मेरे मतसे किसी प्रकार भी सिद्ध नहीं होता है। हे शत्रुओंके जीतनेवाले! उन दुष्टबुद्धि अनगिनत शत्रुओंके बीच आप कैसे गमन करेंगे? हे शत्रुनाशन महाबाहो! आप देवतोंसे भी अजेय हैं, इससे आपको सब कुछ सम्भव हो सकता है, आपका प्रभाव बल, कुछ भी मुझसे छिपा नहीं है। हे कृष्ण! पाण्डवोंके ऊपर मेरी जैसी प्रीति है मैं तुमसे प्रेम, और सुहृदताके कारणसे ही ये सब वचन कहता हूं। हे पुण्डरीकाक्ष! तुम्हें देखनेसे मेरे अन्तःकरणमें जैसी प्रीति उत्पन्न हुई हैं, उसे मैं क्या वर्णन करूं, तुम सब प्राणियोंके अन्तर्य्यामी हो, इससे सबके मनकी बात जानते हो।

श्रीकृष्ण भगवान् बोले, हे विदुर! महा बुद्धिमान पण्डित लोग जैसा कहते हैं; और मेरे समान सुहृद मित्रके लिये तुम्हारे समान सुहृद पुरुषको जैसा कहना योग्य है, और तुमको जैसे धर्म्म तथा अर्थसे युक्त बचनोंके कहनेका अभ्यास हैं, तुमने पिता माताको भांति मुझसे वैसे ही वचन कहे। तुम्हारे ये सब वचन सब प्रकारसे युक्ति-सङ्गत, सत्य और उत्तम पुरुषोंके अनुकूल हैं, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है; तौभी एकवार चित्त लगाकर मेरे यहांपर

आनेका कारण सुनो। हे विदुर! मैं दुर्य्योधनकी नीचता और सब क्षत्रियोंकी शत्रुताको खूब ही जानता हूं; इन सब बातोंको जानकर भी आज मैं कौरवोंकी मण्डलीके बीच उपस्थित हुआ हूं। जो पुरुष हाथी, घोड़े, रथ आदिसे युक्त इस सम्पूर्ण पृथ्वीको मृत्युके मुंहसे छुड़ाने में समर्थ है, अवश्य ही सबसे उत्तम धर्म्मका लाभ कर सकता है। मैं इस बातको निःसन्देह कह सकता हूं, कि मनुष्य अपनी शक्तिके अनुसार कोई धर्म्मके कार्य्यका अनुष्ठान करके यदि उसे पूरा न कर सके, तो भी उसके पुण्यका फल पाता है। और मनके भीतर कोई पाप कर्म्मका विचार करके यदि उसका अनुष्ठान न करे, तो उसके फलके भोगनेका अधिकारी भी नहीं होता। मैंने तुमसे जो कुछ वचन कहे, धर्म्मको जाननेवाले पण्डितोंने भी उसीको माना है। हे पापरहित विदुर! संग्रामके निमित्त उपस्थित हुए कौरव और सृञ्जयोंमें शान्ति स्थापनके वास्ते छल और कपटसे रहितही होकर मैं यत्न करूंगा यह उपस्थित महा घोर आपद कौरवोंसे उत्पन्न हुई है; क्योंकि कर्ण और दुर्योधन इसके चलानेवाले और ये सब इकट्ठे हुए क्षत्रिय तथा राजा लोग इनके अनुयायी हैं। विपदमें फंसे हुए और क्लेशित मित्रको जो पुरुष अपनी शक्तिके अनुसार विनयपूर्व्वक उस विपदसे छुड़ानेकी चेष्टा नहीं करता, पण्डितलोग उसे नीच पुरुष कहते हैं। मित्र अपनी शक्तिके अनुसार यत्न करके चाहे जिस उपायसे हो सके, निज मित्रको बुरे कार्य्यसे रोके, उसमें वह निन्दनीय नहीं हो सकता। हे विदुर! इससे दुर्योधन तथा उसके अनुगामी लोगोंको मेरे कहे हुए, कार्य्य साधन करनेवाले धर्म्म और अर्थसे भरे, शुभ दायक तथा हितकर वचनोंको ग्रहण करना उचित है। केवल धृतराष्ट्रके पुत्रोंके वास्ते ही नहीं, किन्तु मैं पाण्डव, सृञ्जय और सम्पूर्ण पृथ्वीके क्षत्रिय वीरोंके हित साधनके निमित्त निष्कपट चित्तसे यत्न करूंगा। मेरे हितके अनुष्ठानमें तत्पर होनेपर, यदि दुर्योधन मेरे ऊपर कोई शङ्का करेगा, तौभी मैं मित्रके कर्त्तव्य कार्य्योंको पूरा कर लूंगा। इससे मेरा चित्त अत्यन्त प्रसन्न होगा। जातिके बीचमें जब आपसमें फूट होता है, उस समय जो मित्र सब प्रकारसे यत्न करके उनकी मध्यस्थता स्वीकार नहीं करता, पण्डित लोग उसे मित्र ही नहीं कहते। सन्धिके निमित्त यत्न करनेका और भी एक कारण यह है कि जिसमें कुमित्र और मूढ़ लोग यह न कह सकें, कि कृष्ण समर्थ होनेपर भी क्रोधके वशवर्त्ती कौरव और पाण्डवोंको युद्धसे न रोक सके। मैं कौरव और पाण्डव दोनोंका कार्य्य सिद्ध करनेके निमित्त यहांपर आया हूं; इससे उस विषयमें यत्न करनेसे किसीकी निन्दाका पात्र न होऊंगा। मूर्ख दुर्योधन यदि मेरे धर्म्म और अर्थसे भरे वचनोंको सुनकर उन्हें न ग्रहण करेगा तो वह सम्पूर्ण रूपसे कालके वशमें समझा जायगा और जो पाण्डवोंकी अर्थहानि न करके मैं कौरवोंके बीच शान्ति स्थापन करनेमें समर्थ होऊंगा, तो भी मेरा महाफल देनेवाला एक पुण्य कर्म्म सिद्ध होगा; और कौरव लोग भी मृत्युके फांससे छूट जायंगे। इससे मैं बुद्धिमानोंके योग्य, धर्म्म और अर्थसे युक्त हिंसा रहित, जिन शुभ वचनोंका प्रसङ्ग करूंगा, यदि उन वचनोंको धृतराष्ट्रके पुत्र लोग अच्छी प्रकारसे विचारपूर्व्वक देखेंगे, तो अवश्य ही मेरा सम्मान करेंगे तथा शान्तिके निमित्त जो मेरा आगमन हुआ है, उसमें भी सहमत हो सकेंगे। मेरे ऊपर कोई बुरा आचरण करनेमें प्रवृत्त होंगे, तो उससे मुझको कौनसा भय है! मेरे क्रुद्ध होनेपर जैसे सिंहके सम्मुख साधारण पशु तथा जीवजन्तु नहीं

ठहर सकते हैं, वैसेही सब कौरवोंके सहित ये सम्पूर्ण पृथ्वीके राजा लोग मेरे सम्मुख न खड़े हो सकेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, यदुकुलको सुख देनेवाले वृष्णिवंशियोंके स्वामी श्रीकृष्णचन्द्रने विदुरके सङ्ग इस प्रकारसे बातचीत करके अन्तमें परम सुख देनेवाली उत्तम और अत्यन्त कोमल शय्याके ऊपर शयन किया।

९३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, बुद्धिमान् विदुर और श्रीकृष्णचन्द्रकी ऊपर कही हुई रीतिके अनुसार बातचीत करते हुए वह उत्तम नक्षत्रोंसे युक्त शुभ रात्रि अत्यन्त सुखसे बीती। महा प्रतापी कृष्णके धर्म्म और अर्थसे युक्त, पद और पदार्थके सहित मनोहर बचनोंको सुनकर विदुर तथा कृष्ण भी उचित बचनोंका प्रसङ्ग करनेवाले विदुरके बचनोंसे तृप्त नहीं होते थे, उन दोनों महात्माओंकी अनिच्छाहीसे रात्रि बीत गयी। दूसरे दिन भोरके समय बहुतसे सूत, मागध और बन्दियोंने उत्तम और मीठेस्वर और शंख तथा नगाड़ोंके शब्दसे श्रीकृष्णको जगाना आरम्भ किया। यदुवंशियोंमें श्रेष्ठ श्रीकृष्णचन्द्रने उठकर प्रातःकालके सब आवश्यक कार्य्योंको समाप्त किया; अनन्तर स्नान करके जप और होमको पूरी रीतिसे समाप्त करके सब प्रकारके आभूषणोंसे अलङ्कृत होकर सूर्य्यकी उपासना करने लगे। श्रीकृष्णचन्द्र इसी प्रकारसे सन्ध्या बन्दन कर रहेथे, उसी अवसरमें दुर्य्योधन और सुबलपुत्र शकुनि उनके समीप आकर कहने लगे, हे गोविन्द! महाराज धृतराष्ट्र और भीष्म आदि कौरव तथा पृथ्वीके सम्पूर्ण राजा लोग सभा मण्डपमें आकर, तुम्हारे आगमनकी बाट देख रहे हैं जैसे देवता लोग इन्द्रकी प्रार्थना करते हैं। इस बचनको सुनकर शत्रुनाशन जनार्द्दन कृष्णने उन लोगोंका यथा रीतिसे सम्मान किया; अनन्तर यह शुभ समय जानकर ब्राह्मणोंको सुवर्ण; वस्त्र, गऊ और घोड़े आदि वस्तुओंका दान देने लगे। इस प्रकारसे जब वह बहुत सा धन दान करके आसनपर बैठे, तब उनके दारुक सारथीने उन्हे प्रणाम किया, और अत्यन्त शीघ्रतासे उत्तम घोड़ोंसे युक्त, सब प्रकारके रत्नोंसे भूषित, किङ्किणियुक्त महामेघके समान गम्भीर शब्द करनेवाले, शुभ्रवर्ण, बहुत बड़े दिव्य रथको लेकर वहांपर उपस्थित हुआ। तब यदुवंशियोंके नेत्रको आनन्द देनेवाले महायशस्वी श्रीकृष्णचन्द्र अपने गलेमें कौस्तुभ मणि पहर, परम शोभासे प्रकाशमान होकर, अग्नि और ब्राह्मणोंकी प्रदक्षिणा करके उस रथपर चढ़े। यद्यपि उस समय वह बहुतसे कौरव पक्षीय अनुचरोंसे युक्त थे, तौ भी वृष्णिवंशके बहुतसे लोग उनकी शरीर रक्षाके निमित्त वहांपर उपस्थित थे। सब लोगोंमें श्रेष्ठ, बुद्धिमान कृष्णके रथपर चढ़नेके अनन्तर सब धर्म्मके तत्वको जाननेवाले बुद्धिमान विदुर उनके पीछे रथपर चढ़े। दुर्य्योधन और शकुनि उनके पश्चात् दूसरे रथपर चढ़के शत्रुनाशन श्रीकृष्णके अनुगामी हुए। सात्यकी, कृतवर्म्मा आदि वृष्णिवंशीय महारथ लोग भी कोई रथ और कोई घोड़ेपर चढ़के उनके पीछे पीछे चलने लगे। हे महाराज! वहांसे प्रस्थान करनेपर उन सब बीरोंके सुवर्णसे भूषित रथ और घोड़ोंका शब्द अत्यन्त मनोहर होता था; और वे सब रथ परम शोभासे शोभित होरहे थे। महा तेजस्वी बुद्धिमान कृष्ण यथा समयमें राजर्षियोंके गमन करने योग्य मार्गपर पहुंचे। दुर्य्योधनने पहिले ही उस मार्गको साफ सुथरा और जल छिड़कवाकर ठीक कर रक्खा था। अनन्तर श्रीकृष्णचन्द्रके प्रस्थान करनेपर शङ्ख भेरी आदि अनेक भांतिके बाजे बजने लगे। सब

लोगोंमें विख्यात शत्रुओंको जीतनेवाले, सिंहके समान विक्रमी अनगणित वीर योद्धा श्रीकृष्णके रथको आगे-पीछे तथा चारों ओरसे घेरके चले। उत्तम वेषोंसे भूषित कई सहस्र सैनिक पुरुष तलवार, प्रास तथा सब शस्त्रोंको हाथमें लेकर उनके आगे आगे दौड़े। इसके अतिरिक्त पांच सौ गजपति और सहस्र सहस्र रथी श्रीकृष्णचन्द्रके पीछे पीछे चलने लगे। हस्तिनापुरके रहनेवाले स्त्री बालक, बूढ़े और युवा लोग शत्रुनाशन श्रीकृष्णके दर्शनकी इच्छासे मार्गके किनारेपर आकर खड़े हो गये। अटारियोंके ऊपर स्त्रियां इतनी आकर इकट्ठी हुई थीं, कि बोध होता था, उनके बोझसे मन्दिर सहित वह अटारी पृथ्वीसे मिला चाहती है।

मधुसूदन कृष्ण कौरवोंकी पूजा ग्रहण और उनके सङ्ग मधुर शब्दोंसे बातचीत करते और सबको ओर देखते तथा परस्पर सत्कार करते हुए धीरे धीरे चलने लगे। अनन्तर कौरवोंकी सभाके समीप जानेपर उनके अनुयायियोंने शङ्ख, भेरी और मृदङ्ग आदिके शब्दोंसे सब दिशाओंको पूरित कर दिया। तब सभाके सब उत्तम स्वभावसे युक्त राजा लोग श्रीकृष्णका आगमन जानकर हर्ष और आनन्दसे भर गये; विशेष करके जल सहित बादलके समान उनके रथके शब्दको सुनकर उन सब लोगोंके रोंए खड़े होगये। यदुवंशियोंमें श्रेष्ठ श्रीकृष्णचन्द्र सभाके द्वारपर पहुंचकर, कैलासपर्व्वतके शिखरके समान सुन्दर रथसे उतरे और सात्यकी तथा विदुरका हाथ धरके सब ओर अपनी कौस्तुभ-मणिके मनोहर प्रकाशसे दूसरे सूर्य्यके समान प्रकाशित होते हुए, इन्द्रकी सभाके समान कौरवी सभाके बीचमें गये; और सूर्य्य जैसे अपनी किरण तथा तेजसे दूसरे तेजस्वी पदार्थोंके तेजको हीन कर देता है; वैसे ही श्रीकृष्णचन्द्रने अपने तेजसे सम्पूर्ण कौरवोंको आच्छादित कर दिया कर्ण और दुर्य्योधन कृष्णके सम्मुख और कृतवर्म्मा सात्यकी तथा वृष्णिवंशीय लोग उनके पीछे खड़े हुए। भीष्म, द्रोण आदि सज्जन पुरुष महाराज धृतराष्ट्रको आगे करके, श्रीकृष्णचन्द्रके सम्मानके निमित्त अपने अपने आसनोंसे उठ खड़े हुए। उनके सभामें आतेही प्रज्ञाचक्षु महा यशस्वी राजा धृतराष्ट्र; भीष्म, द्रोण आदि सब कौरवोंके सहित उसी समय अपने आसनोंसे उठ खड़े हुए। नरनाथ महाराज धृतराष्ट्रके खड़े होनेपर वहांपर बैठे हुए सहस्रों राजा उसी समय उठके खड़े हुए। अनन्तर राजा धृतराष्ट्रकी आज्ञाके अनुसार श्रीकृष्णके वास्ते सुवर्णयुक्त रत्नोंसे जटित सर्व्वभद्र नामक आसन रखा गया। इसी अवसरमें श्रीकृष्णचन्द्र हंसते हंसते धृतराष्ट्र भीष्म, द्रोण और दूसरे राजाओंसे सम्बन्ध और अवस्थाके अनुसार यथा योग्य बन्दना और बात चीत करने लगे; पृथ्वीके सब राजा तथा कौरव लोगभी उनकी यथा विधिसे पूजा और सम्मान करने लगे। पराये देशको जीतनेवाले श्रीकृष्णचन्द्रने सभामें राजाओंके बीचमें बैठकर देखा कि पहिले मार्गमें जिन सब महर्षियोंके सङ्ग भेंट हुई थी; वे सब अभ्यागत रूपसे आपहुंचे हैं। नारद आदि उन सब देवर्षियोंको देखतेही उन्होंने शान्तनुनन्दन भीष्मको मीठे बचनोंसे यह कहा, हे राजेन्द्र! यह देखिये पवित्र आत्मा मुनि लोग मर्त्य लोककी सभाको देखनेकी इच्छासे यहांपर आये हैं; इन लोगोंके निमित्त आसन, पाद्य, अर्घ आदि सब सामग्री शीघ्र मंगवाइये और अत्यन्त सत्कार करके इन सब मुनियोंको आसनपर बैठाइये। जब तक ये लोग आसनपर न बैठेंगे, तबतक किसीकी सामर्थ बैठनेको नहीं है इससे बहुत शीघ्र इन लोगोंकी पूजाका विधान कीजिये। भीष्मने सभाके द्वारपर देवर्षियोंको आता हुआ देखकर उसी समय आतुर होके सेवकोंको आज्ञा दी कि

शीघ्र आसन ले आओ। सेवकोंने उसी समय मणि और सुवर्णसे युक्त सुन्दर स्वच्छ और पवित्र बड़े बड़े महामूल्य आसनोंको लाकर उपस्थित किया। हे महाराज! मुनियोंके अर्घ पाद्य ग्रहण करने तथा आसनपर बैठनेपर श्रीकृष्ण और सब राजा लोग अपने अपने आसनोंपर बैठ गये। दुःशासनने सात्यकीको एक उत्तम आसन और विविंशतिने कृतवर्म्माको एक उत्तम सोनेका पीढ़ा प्रदान किया। सदा ही किसीकी बातोंको न सहनेवाले ऊंची बासनासे युक्त कर्ण और दुर्य्योधन श्रीकृष्णसे थोड़ीही दूरपर एक ही आसनपर बैठ गये। गान्धारराज शकुनि गान्धार बीरोंसे युक्त होकर पुत्र सहित आसनपर बैठे। महाबुद्धिमान विदुर कृष्णके निकट ही सफेद हरिणके मृगछालसे युक्त मणि गठित पीढ़ेपर बैठ गये। हे महाराज! जैसे अमृतके चखनेसे चित्तकी तृप्ति नहीं होती, वैसे ही उस सभामें बैठे सम्पूर्ण राजा लोग बहुत दिनके अनन्तर कृष्णको देख तृप्त नहीं होते थे। पीले पुष्पके समान शोभायमान पीताम्बर पहरे हुए श्रीकृष्णचन्द्र ऐसे दीख पड़ते थे, जैसे सुवर्णके बीचमें नीलमणि (नीलम) की शोभा होती है। कृष्णके सभामें बैठनेके अनन्तर सब लोगोंमें सन्नाटा छा गया। किसीने कहीं पर कोई विषयका प्रसङ्ग तथा उल्लेख न किया।

९४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उस सभामण्डपमें सब राजाओंके आसनपर बैठनेके अनन्तर जब सन्नाटा छागया; उस समय मतवाले हाथीके और दुन्दभीकी भांति गम्भीर शब्दसे श्रीकृष्णचन्द्रने कथाका प्रसङ्ग चलाया। धृतराष्ट्रकी ओर दृष्टि करके जिसमें सब कोई सुन सके, वैसे ही वह वर्षाकालकी नवीन मेघकी भांति गम्भीर स्वरसे धर्म्म अर्थसे भरेहुए बचन कहने लगे,—

श्रीभगवान बोले, हे भारत! बीर योद्धाओंके बिना प्राणनाश हुए जिसमें कौरव और पाण्डवोंके बीच शान्ति स्थापित होवे, उसी निमित्त यहांपर मेरा आगमन हुआ है; इसके अतिरिक्त और कोई भी हितका बचन कहनेकी मेरी इच्छा नहीं है। हे शत्रुनाशन महाराज! इस लोकमें जो कुछ जानना उचित है, सब विषय आप लोगोंने जान लिया है, इससे आप लोगोंके निमित्त और कुछ मङ्गल बचन क्या सुनाऊं? हे राजन्! आप लोगोंका यह कुल शास्त्रके ज्ञान और सदाचारसे युक्त है, और सब गुणोंसे भूषित होनेसे इस समय सब राजाओंके बीच श्रेष्ठ कहके गिना जाता है। हे भारत! सब लोगोंमें अनेक गुण हैं, यह बचन ठीक है; परन्तु कौरवोंमें कृपा, बिनय, क्षमा, करुणा, उत्तम स्वभाव और सरलता आदि कई गुण सबसे बढ़के हैं; इन्हीं गुणोंने आपको सबसे श्रेष्ठ बनाया है। हे राजेन्द्र! इस प्रकारके उत्तम प्रतिष्ठाके पात्र महाकुलमें कोई निन्दनीय तथा अयुक्त आचरणका होना बहुत ही अनुचित है; विशेष करके यदि वह आपहीके कारणसे सङ्गठित होवे तो और भी महा अनुचित कहा जावेगा। क्योंकि बाहरी और भीतरी कपट आचार और नीच मार्गसे गमन करनेवाले कौरवोंके आपही एक मात्र अवलम्ब स्वरूप हैं। हे कुरुसत्तम! दुर्य्योधन आदि आपके मूर्ख पुत्र लोग धर्म्म और अर्थसे अलग होकर लोभसे खींचे हुए चित्तसे मर्य्यादा रहित होकर सबसे श्रेष्ठ आत्मीय और भाई बन्धुओंके सङ्ग अत्यन्त ही अनुचित और दुष्ट व्यवहार कर रहे हैं, तो भी आप इन सब बातोंको जानकर अज्ञान हुए जाते हैं; हे पुरुषर्षभ! यह महा घोर आपद कौरवोंके बीचसे प्रकट हुई है; परन्तु आपके ध्यान न

होनेसे समस्त संसारके विनाशका मूल अर्थात् कारण हो जावेगी। हे भारत! तुम्हारी इच्छा होनेसे इस समय भी शान्ति हो सकती है। मेरी समझमें शान्तिका स्थापित होना कुछ भी कठिन नहीं है; यह आपके और मेरे दोनोंहीके अधिकारमें है। हे राजन्! आप अपने पुत्रोंको शान्त कीजिये और मैं पाण्डवोंको शान्त करूंगा। हे भरतर्षभ! सेनाके सहित आपके पुत्र लोग अवश्य हो आपकी आज्ञा पालन करेंगे; आपके शासनमें निवास करनेकी अपेक्षा उन लोगोंके निमित्त और अधिक हितकारी विषय क्या होगा। हे कौरवराज! आप यदि शासन प्रचारके अभिलाषी होकर शान्ति स्थापनके निमित्त यत्न करेंगे, तो ऐसा होनेसे आपके और पाण्डवोंके दोनोंके पक्षमें मङ्गल होगा। हे राजेन्द्र! इससे आप कपट रहित होकर विचारपूर्व्वक इस कार्य्यका पूर्ण विधान कीजिये पाण्डव लोग आपके सहायक बनें, और उन लोगोंकी सहायतासे रक्षित हो आप स्थिर और शान्त होकर धर्म्म और अर्थका अनुष्ठान कीजिये। हे प्रजानाथ! अनेक प्रकारसे यत्न करनेपर भी वैसी असाधारण सहायता पाना बहुतही कठिन कार्य्य है। यदि महात्मा पाण्डव लोग आपकी रक्षा करें, तो और राजाओंकी बात तो दूर रहे; साक्षात् इन्द्र सब देवताओंको सङ्ग लेकर भी आपको पराजित करनेमें समर्थ न होंगे। हे भरतर्षभ! जिस स्थानपर भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, कर्ण, विविंशति, अश्वत्थामा, विकर्ण, सोमदत्त, वाह्लिक, जयद्रथ, कलिङ्गपति, काम्बोजराज सुदक्षिण, युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव, सात्यकी और युयुत्सु आदि महावीर योद्धा लोग मिलकर होकर एक ही स्थानपर इकट्ठे होंगे; वहां पर कौन विपरीत बुद्धिवाला पुरुष इन लोगोंके विरुद्ध युद्ध करनेके निमित्त आगे बढ़ेगा? हे शत्रुनाशन! कौरव और पाण्डवोंके मिलनेसे सम्पूर्ण लोकमें आप अत्यन्त प्रभुता पावेंगे; कोई शत्रु आपको पराजित करनेमें समर्थ न होगा। जो सब राजा आपके समान हैं, और जो आपसे श्रेष्ठ हैं, सब ही आपके सङ्ग सन्धि करेंगे। इससे आप सब भांतिसे रक्षित होकर पुत्र, पौत्र, पिता, भ्राता तथा इष्ट मित्रोंके सङ्ग परम सुखसे जीवनका समय व्यतीत कर सकेंगे। हे महाराज! दूसरेके निकट आपको सहायता लेनेहीका क्या प्रयोजन है! केवल पाण्डवोंको पहिलेकी भांति सत्कार दिखाके, उन्हें आगे करके आप इस सम्पूर्ण पृथ्वीमण्डलके चक्रवर्त्ती राज्यका सुख भोगेंगे। हे भारत! किसी प्रकारसे स्वार्थसिद्ध होना चाहिये यही आपकी इच्छा है; पाण्डव और कौरवोंके परस्पर मिलनेपर आप सम्पूर्ण शत्रुओंको जीतकर उनकी भुजासे उपार्जित सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्यका सुख भोग करेंगे; इससे बढ़के आपके निमित्त बड़ा स्वार्थ दूसरा और कौन सा है? हे महाराज! यदि आप ऐसे स्वार्थको त्याग कर युद्धकार्य्यमें प्रवृत्त होइयेगा, तो केवल महा अनर्थकी सम्भावना हो होगी। हे राजेन्द्र! संग्राममें महामारीके अतिरिक्त और कुछभी नहीं दीख पड़ता; तब दोनों पक्षोंके नाश होनेसे ही आपका कौन धर्म्म प्रकाशित होगा? हे राजन्! भला कहिये तो सही पाण्डव लोग अथवा आपके पुत्र ही युद्धमें मरें; तब इन दोनों पक्षोंमेंसे एक पक्षके नाश होनेसे आपको कौनसा सुख मिल जायगा? हे भरतर्षभ! ये दोनों ओरके लोग अत्यन्त वीरतासे युक्त, सब शस्त्रोंको जाननेवाले हैं, और दोनोंही युद्धके निमित्त उपस्थित हो रहे हैं; इससे आप इस वर्त्तमान महाभयसे उन लोगोंकी रक्षा कीजिये। जिससे महारथ शूर वीर कौरव और पाण्डवोंको युद्धमें परस्पर घायल होना और मरना न पड़े, आप

वैसे ही उपायका विधान कीजिये। हे नृपसत्तम! पृथ्वीके सब राजा लोग एक ही स्थानपर मिल गये हैं; ये लोग क्रोधके वशमें होकर इन सम्पूर्ण प्रजा समूहका भी संहार कर सकते हैं। हे राजेन्द्र! इससे आप दया करके सम्पूर्ण लोकोंकी रक्षा कीजिये। आपके विद्यमान रहते जिसमें सम्पूर्ण पृथ्वीके प्रजाओंका समूह नष्ट न होजाय। हे कुरुनन्दन! जब आप सत्व-गुणको धारण करेंगे, तभी प्रजाओंका शेष रह सकता है; नहीं तो सब ही प्रजा नष्ट होजायंगी। हे राजेन्द्र! पवित्र वंशोंमें उत्पन्न भये, माननीय, पूजाके योग्य, महातेजस्वी, श्रीमान् और आपसमें एक दूसरेको सहायता करनेवाले, इन सब राजाओंको आप महा भयसे छुड़ानेका यत्न कीजिये। हे शत्रुनाशन भरतर्षभ! ये सब लोग क्रोध और वैरको त्यागके कुशल पूर्व्वक आपसमें मिलें और एकत्र भोजन पान करनेके अनन्तर सब भूषणोंसे भूषित होकर, शोभायमान उत्तम माला और सुगन्धको धारण करके तथा उत्तम प्रकारसे सत्कार पाकर अपने अपने स्थानोंपर चले जावें। हे भरतर्षभ! पाण्डवोंके ऊपर आपका जैसे पहिले समयमें प्रीति थी; इस समयमें इस युद्धके समागममें आप वैसी ही प्रीतिको प्रकाश करके उन लोगोंके सङ्ग सन्धि कर लीजिये। हे नर-नाथ! बालकपनमें जब वे पिता रहित हुए थे, उस समयसे आपने ही उन लोगोंको पुत्रकी भांति समझकर पालन पोषण करके बड़ा किया था; इससे इस समयमें भी पुत्रकी भांति न्यायपूर्व्वक उन लोगोंका पालन कीजिये। विचार करके देखनेसे सब समयमें विशेष करके इस व्यसनके समयमें आपको उन लोगोंकी रक्षा करना योग्य है ऐसा करनेसे आपके धर्म्म और अर्थ दोनोंहीको रक्षा हो सकती है। हे भरतर्षभ! इस लिये जिसमें धर्म्म और अर्थ दोनों बने रहें; आप वही उपाय कीजिये। हे राजन्! पाण्डवोंने आपको नमस्कार करके प्रेम पूर्व्वक यह वचन कहा है, कि "हे तात! आपकी आज्ञाके अनुसार हम लोगोंने बहुत दुःख और क्लेश सहा है। निर्जन बनमें बारह वर्ष और मनुष्योंके बीच छिपकर एक वर्ष बास किया है। हे तात! "हम लोगोंके बीच जिस प्रकारका नियम हुआ है, उसको अवश्य ही ज्येष्ठ पिता पालन करेंगे" ऐसा ही निश्चय करके हम लोगोंने किसी प्रकारसे उस नियमका उलङ्घन नहीं किया है, हम लोगोंके सङ्ग रहनेवाले ब्राह्मण लोग उस बातको खूब ही जानते हैं। हे भरतर्षभ! हम लोगोंने नियमके अनुसार कार्य्य किया है; इससे आप भी उसी नियमके अनुसार चलिये। 'हे राजेन्द्र! हम लोगोंने बहुत दिनतक दुःख भाग कर जिसमें अब अपना आधा राज्य पावें; उसीका आप पूर्ण विधान कीजिये। आप धर्म्म और अर्थके मर्म्मको जानकर हम लोगोंका सब भांतिसे परित्राण कीजिये। आप पिता हैं, आप जो कुछ आज्ञा करेंगे, वही हम लोगोंको स्वीकार करना पड़ेगा। यही विचारकर हम लोगोंने अनेक प्रकारके दुःख तथा सहे हैं; इससे आप भी इस समय पिता माताकी भांति प्रेम प्रकाशित कीजिये। हे भारत! गुरुके समीप शिष्यको जैसा व्यवहार करना उचित है, हम लोगोंने भी आपके सङ्ग वैसा ही व्यवहार किया है। इससे आप भी हम लोगोंके ऊपर गुरुकी भांति वात्सल्य भाव दिखाइये। पुत्रके नीच मार्ग अवलम्बन करनेपर पिताका कर्त्तव्य कार्य्य यही है, कि उसे फिर भी अच्छे मार्गपर चलावे; इस समय हम लोग भी राज्यके नाश होनेके कारण मार्गसे भ्रष्ट हुए हैं, आप इस समयमें स्वयं धर्म्मके मार्गमें चलकर हम लोगोंको उसी मार्गमें स्थित रखिये।" हे महाराज! आपके उन तेजस्वी पुत्रोंने यहांपर रहनेवाले सभासद

लोगोंके निमित्त भी यह बचन कहा है, "सभाके बीच धर्म्मके जाननेवाले सभासदोंके विद्यमान रहनेपर भी न्यायके विरुद्ध कार्य्यका होना बहुत ही अनुचित है। बुद्धिमान सभासद और दर्शकवृन्दके उपस्थित रहनेपर, जिस स्थानमें अधर्म्म और मिथ्यासे सत्य छिप जाता है; वहांपरके सब सभासद हो मरे हुएके समान हैं। जिस समय धर्म्म अधर्म्मसे पीड़ित होकर सभाकी शरणमें आता है, उस समय यदि उस धर्म्मकी पीड़ा न्यायपूर्व्वक सभासद लोग न दूर करें, तो वे लोग आप ही उस पापसे पीड़ित होजाते हैं। जैसे नदी अपने तटपर रहनेवाले वृक्षोंको उखाड़के गिरा देती है, वैसे ही अधर्म्म भी उन लोगोंको पीड़ित करता है।" हे भरतर्षभ! इस समय विचारकर देखिये कि पाण्डव लोग धर्म्महीका मुंह देख कर तथा धर्म्महीकी आशा करके अभी तक चुप चाप बैठे हुए हैं, उन लोगोंने सत्य, धर्म्म और न्यायके अनुसार ही बचन कहे हैं। इससे आप उन लोगोंको राज्य प्रदान करनेके अतिरिक्त क्या और कोई विषयका प्रसङ्ग कर सकते हैं? इस सभामें जो सब राजा लोग बैठे हुए हैं, ये लोग-भी क्या कुछ दूसरी बात कह सकते हैं! हे पुरुषर्षभ! मैं धर्म्म और अर्थको निश्चय करके जो कुछ बचन कह रहा हूं, यदि आप इसे सत्य समझेंगे, तो निःसन्देह इन सब क्षत्रिय और राजाओंको मृत्युके मुंहसे बचा लेंगे। हे भरतश्रेष्ठ! आप शान्त होइये; क्रोधके वशीभूत दुर्य्योधनके अनुगामी न बनिये। हे परन्तप! पाण्डवोंको यथा उचित पैतृक-राज्य देकर आप पुत्रोंके सहित आनन्दित होकर उत्तम प्रकारसे सब सुखोंको भोग कीजिये। हे प्रजानाथ! आप सब दिनसे अजात-शत्रु युधिष्ठिरको साधु पुरुषोंके धर्म्ममें स्थित जानते हैं, और वह आपके तथा आपके पुत्रोंके सङ्ग जिस प्रकारसे धर्म्मपूर्व्वक व्यवहार करते हैं; वह भी आपको विदित है। देखिये आपने उन्हें जतुगृहमें जलाया और देशसे निकाल भी दिया, तौभी फिर उन लोगोंने आपका शरण ग्रहण किया था। उसके अनन्तर अपने पुत्रोंके सङ्ग विचार करके, जब उन लोगोंको इन्द्रप्रस्थमें बसाया था, उस समय भी उन लोगोंने वहांपर निवास करते हुए अपने बाहुबल तथा पराक्रमसे सब राजाओंको जीतकर आपहीके निकट उपस्थित किया था, किसी प्रकारसे भी आपके शासनका उन्होंने उलङ्घन नहीं किया। हे महाराज! इस भांतिसे नम्रतापूर्व्वक वे निवास करते थे, तौ भी सुबलपुत्र शकुनिने उनके राज्य और धन आदिको हरनेकी इच्छा करके, पासेके खेलमें अत्यन्त कपटका प्रयोग किया था। धर्म्मात्मा युधिष्ठिर वैसी बुरी अवस्थामें पड़के प्राणके समान प्यारी द्रौपदीको सभामें बुलाई हुई देख कर भी क्षत्रिय धर्म्मसे तनिक भी विचलित न हुए थे। हे भारत! मैं आप और पाण्डव दोनोंहीकी मङ्गल कामना करता हूं; इससे आप धर्म्म अर्थ और सुखके निमित्त शान्ति स्थापित कीजिये, प्रजाओंका व्यर्थ नाश न कीजिये। हे नरनाथ! जिसको आप अनर्थ समझ रहे हैं, उसीको अर्थ और जिसे अर्थ समझ रहे हैं, उसको अनर्थ जानकर लोभके मार्गमें गमन करनेवाले पुत्रोंको कुपथसे रोकिये। हे पृथ्वीनाथ! शत्रुनाशन पाण्डव लोग आपकी सेवा तथा युद्ध दोनों ही करनेके निमित्त तैयार हैं, उसमेंसे जो आपको उत्तम और हितकारी बोध हो आप उसीका अनुष्ठान कीजिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले उस सभामें जितने राजा लोग उपस्थित थे, वे सब श्रीकृष्णके कहे हुए वचनोंको अपने मनहो मन अत्यन्त प्रशंसा करते थे; परन्तु दुर्य्योधनके सम्मुख किसीने कुछ कहनेका साहस न किया।

९५ अध्याय समाप्त।

श्री वैशम्पायन मुनि बोले, महात्मा कृष्णके ऊपर कहे हुए बचनोंको सुनकर सब सभासदोंके रोंए खड़े हो गये, सब लोगोंने मौनव्रत धारण कर लिया। सब राजा लोग, अपने मनमें यह सोचने लगे, कि कोई पुरुष इन बचनोंका उतर देनेका साहस नहीं कर सकता जब सब राजाओंने सन्नाटा खींच लिया, तब महातेजस्वी महर्षि परशुरामजीने कौरवोंकी सभामें कहना आरम्भ किया, कि हे राजन्! मैं उपमाके सङ्ग एक कथाका प्रसङ्ग करता हूं, इस यथार्थ विषयपर कोई शङ्का न करके इसको सुनो और यदि यह उत्तम मालूम हो, तो सुनकर अपने कल्याणके निमित्त यत्न करो। मैंने सुना है, पहिले समयमें दम्भोद्भव नाम सार्व्वभौम राजा हुए थे; उन्होंने इस सम्पूर्ण पृथ्वीपर चक्रवर्त्ती होकर राज्य किया था। वह महारथ और पराक्रमी राजा नित्य ही रात्रिके बीतनेपर सवेरे उठकर ब्राह्मण और क्षत्रियोंसे यह कहा करते थे, कि "इस पृथ्वीमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्रोंके बीच क्या कोई ऐसा पुरुष भी विद्यमान है, जो युद्धमें मुझसे श्रेष्ठ अथवा मेरे समान हो सके? सारी पृथ्वीमें मेरे समान वीर कोई नहीं है" ऐसा विचार करते हुए वह राजा अभिमानसे उन्मत्त होकर सब स्थानोंमें ऐसा ही बचन कहते हुए घूमा करते थे। एकबार कई एक महातेजस्वी वेदके जाननेवाले ब्राह्मणोंने उन्हें बार बार अपनी बड़ाई करते हुए देखकर निषेध किया परन्तु धन और बलके मदसे भरे हुए अभिमानी मूढ़ राजा बार बार निषेध किये जानेपर भी उन वेदज्ञ ब्राह्मणोंसे नित्य ही इसी प्रकारका प्रश्न करते थे। तब वह वेदके जाननेवाले तपस्वी महात्मा ब्राह्मण लोग उस राजाके ऐसे दुष्ट भावको देखकर क्रोधित होके बोले, हे राजन्! इस पृथ्वीपर अनेक युद्धोंको जीतनेवाले दो श्रेष्ठ पुरुष विद्यमान हैं; तुम कभी उनके समान नहीं हो सकते। इस बचनको सुनते ही राजा दम्भोद्भवने फिर उन ब्राह्मणोंसे पूछा, कि आप लोग कौनसे वीरोंकी कथा कहते हैं? वे दोनों कहांपर उत्पन्न हुए हैं, किस स्थानमें रहते हैं और कौन कार्य्य करते हैं? हे भारत! राजाके ऐसे पूछनेपर ब्राह्मणोंने कहा, हम लोगोंने सुना है, कि महात्मा नर और नारायण तपस्या करनेके निमित्त इस मनुष्य लोकमें आकर गन्धमादन पर्व्वतके किसी स्थानमें घोर तपस्या कर रहे हैं; तुम उन्हीं दोनों वीरोंके सङ्ग युद्ध करो।

राजा दम्भोद्भव इस बचनको सुनते ही आतुर होके अपनी चतुरङ्गिनी महासेना सजाकर, युद्धमें न पराजित होनेवाले महात्मा नर और नारायणसे युद्ध करनेके निमित्त चले; और महा भयङ्कर गन्धमादन पर्व्वतके शिखरपर जा पहुंचे वहां पहुंचके उन बनवासी दोनों तपस्वियोंको खोजने लगे; अन्तमें उन दोनों महात्माओंका पता पाकर देखा, कि वे दोनों तपस्वी भूख, प्यास,सर्दी,गर्मी सहकर अत्यन्त ही कृषित और तनुक्षीण हो रहे हैं, और उनके शरीरमें खाक लिपटी हुई है। इस प्रकारसे उन महात्माओंको देखकर राजाने उनके निकट जाकर प्रणाम करके कुशल क्षेमकी बात पूछी; उन्होंने भी आसन, जल और फल मूल आदिसे उनका अतिथि सत्कार करके कहा, "तुम्हारा कौनसा कार्य्य पूरा करना होगा?" इस बचनको सुनकर राजा दम्भोद्भव जैसा ब्राह्मणोंके समीप कहा करते थे, उसीको विस्तारपूर्व्वक कहने लगे कि मैंने अपने बाहुबलसे सम्पूर्ण पृथ्वीके राजाओंको मारा है; इस समय आपसे युद्ध करनेकी इच्छासे इस पर्व्वतके ऊपर आया हूं; इससे आप कृपा करके हमारी इस सब दिनकी अभिलाषाको पूर्ण कीजिये।

नरनारायण बोले, हे राजसत्तम! यह

तप करनेका आश्रम है, इस स्थानमें क्रोध, लोभ लेशमात्र भी नहीं है। युद्ध तथा अस्त्र शस्त्रकी बात तो दूर रहै, यहांपर कुटिल स्वभावके मनुष्य भी नहीं रह सकते इससे तुम इस स्थानको छोड़कर दूसरी जगहमें युद्ध करनेकी इच्छा करो; पृथ्वीके बीच बहुतसे क्षत्रिय लोग विद्यमान हैं।

परशुराम बोले, हे भारत! उन दोनों तपस्वियोंके बराबर क्षमा प्रर्थना और शान्त करनेपर भी, राजा दम्भोद्भवने अपना हठ न छोड़ा और युद्ध करनेकी अभिलाषासे बारम्बार उन दोनों तपस्वियोंको आवाहन करने लगे। तब नर ऋषिने एक मुट्ठी काश तृणको हाथमें लेकर क्रोधसे भरकर कहा, कि रे युद्ध-को अभिलाषा करनेवाले क्षत्रिय! आके युद्ध कर ले; सेनाको साजकर तेरा जो कुछ अस्त्र शस्त्र है सब ग्रहण करके चला आ; तब मैं तेरी युद्धकी अभिलाषा पूरी करदूंगा।

राजा दम्भोद्भव बोले, हे तपस्वी! यदि इस अस्त्रको मेरे ऊपर चलाना ही तुमको ठीक मालूम होता है, तो मैं इसीके सङ्ग तुमसे युद्ध करूंगा; क्योंकि युद्ध करनेहीके निमित्त मेरा यहांपर आगमन हुआ है।

श्रीपरशुरामजी बोले, ऐसा कहकर राजा दम्भोद्भवने सेनाके सहित तपस्वीके सङ्ग युद्ध करनेके निमित्त खड़े होकर अपने बाणोंको वर्षासे दशों दिशाओंको पूर्ण कर दिया। तब लक्ष्यको बेधनेवाले नर ऋषिने काशके सींकके अस्त्रसे राजा दम्भोद्भवके सब अस्त्रोंको निष्फल कर दिया और उसके ऊपर इस प्रकारसे काशके सींकोंको चलाया, कि उससे राजा दम्भोद्भव मृतप्राय हो गये। उन्होंने मायाके बलसे केवल काशके सींकके अस्त्रसे सब सेनाके नाक, कान आदिको काटना आरम्भ किया। सब दिशाओंमें काश पुञ्जके पूर्ण होनेसे आकाश श्वेतवर्ण होगया; इस अद्भुत कर्म्मको देखकर राजा दम्भोद्भव उनके दोनों चरणोंपर गिरे और अपने कल्याणके निमित्त "मेरा मङ्गल हो" ऐसी प्रार्थना करने लगे। जब राजा दम्भोद्भव बार बार ऐसा कहने लगे, तब शरणा-गतकी रक्षा करनेवाले दयालु नर ऋषिने उनसे कहा, हे राजन्! तुम आजसे धर्म्मात्मा और ब्राह्मणोंमें निष्ठावान् बनो; फिर कभी ऐसा अहंकार न करना। हे नरेन्द्र! पराये देशको जीतनेवाले क्षत्रिय पुरुष अपने धर्म्ममें निवास करते हुए कभी ऐसी नीच अभिलाषा नहीं करते। हे राजन्! इससे चाहे कोई पुरुष तुमसे बुरा हो अथवा भला हो, तुम अभि-मानके वशमें होकर कभी उसका अपमान न करना, किसी पुरुषको अवमानित तथा दुःखित न करना ही तुम्हारा कर्त्तव्य कार्य्य है। हे राजेन्द्र! तुम निश्चित बुद्धि, लोभ रहित, अहङ्कार-शून्य, जितेन्द्रिय, शान्त, कोमल और धीरताको अवलम्बन करके प्रजाका पालन करो। बलाबलको बिना जाने फिर कभी किसीका अपमान न करना; इस समय मैं तुम्हें आज्ञा देता हूं, कि कुशलपूर्व्वक अपने स्थानपर जाओ; परन्तु फिर कभी ऐसे बुरे आचरण न करना। हमारे वचनके अनु-सार तुम सदा ब्राह्मणोंसे अपना आत्म-कुशल पूछते रहना।

श्रीपरशुरामजो बोले, इस प्रकारके उपदेश सुनकर राजा दम्भोद्भव उन दोनों महा तपस्वि-योंके चरणोंपर गिरकर उन्हें प्रणाम किया। अनन्तर वहांसे लौटके जब अपने नगरमें आये, तबसे अत्यन्त धर्म्मके आचरण करने लगे। इस समय विचार करके देखो, पहिले समयमें नर ऋषिने जो ऐसे कर्म्म किये थे, उसे बहुत बड़ा तथा कठिन कार्य्य कहना चाहिये। नारायण उनसे भी कई एक गुणोंमें श्रेष्ठ थे। हे राजन्! इसीसे जबतक धनुषोंमें श्रेष्ठ गाण्डीव धनुषपर काकुदीक, (प्रस्वापन अस्त्र) शुक, (मोहन अस्त्र)

नाक, (उन्मादन अस्त्र) अचिसन्तर्जन (त्रासन अस्त्र) सन्तान (इन्द्रादि-दिव्य अस्त्र) नर्त्तक, (नाचनेवाला पैशाच अस्त्र) घोर, (महामारीको उत्पन्न करनेवाला अर्थात् राक्षस अस्त्र) और आस्यमोदक (जिसके लगनेसे मनुष्य मुंहपर पत्थर रखके मरनेको उद्यत होते हैं; अर्थात् याम्य अस्त्र) नहीं चढ़ाये जाते हैं, तब-तक तुम अभिमानको छोड़कर अर्जुनके अनुगामी बनो। इन ऊपर कहे हुए अस्त्रोंके लगनेसे सब मनुष्य मृत्युको प्राप्त होते हैं, सब मनुष्य उन्मत्त और विह्वलचित्त होकर कार्य्य करने लगते हैं; कितने ही वमन, और मूत्र-त्याग करते, मूर्च्छा खाते, रोते और हंसते रहते हैं। हे भारत! सब लोगोंके सृष्टिकर्त्ता सकल कर्म्म और धर्म्मको जाननेवाले जगतके गुरु नारायण जिसके मित्र हैं, उस अर्जुनका प्रतापरूपी अग्नि जो युद्धमें महाभयङ्कर होजावेगा इसमें क्या सन्देह है? संग्राममें जिसके समान और कोई भी नहीं है, उस कपिध्वज महावीर अर्जुनको जीतनेके निमित्त इस तीनों भुवनमें कौन पुरुष साहस कर सकता है? इसके अतिरिक्त अर्जुनमें कितने प्रकारके गुण हैं, उनकी संख्या करना बहुत ही कठिन है। जनार्द्दन कृष्ण उनसे भी कई एक अंश तथा गुणोंमें श्रेष्ठ हैं। हे महाराज! तुम अर्जुनको केवल कुन्तीका पुत्र ही समझते हो; परन्तु महातेज तथा वीर्य्यसे युक्त वह जो पुरुषोंमें श्रेष्ठ नर और नारायण ऋषि हैं, उन्होंने ही अर्जुन और कृष्ण रूपसे इस पृथ्वीपर अवतार लिया है; तुम इस बातको अच्छी प्रकारसे अपने हृदयमें समझ लो। हे भारत! यदि इसमें तुम्हें निश्चय हो, और मेरे वचनमें कोई शङ्का न हो, तो तुम शुद्ध-बुद्धि अवलम्बन करके पाण्डवोंके साथ सन्धि कर लो। और यदि आपसमें फूटका न होना तुम उत्तम समझते हो, तो भी तुम्हें शान्ति स्थापनके निमित्त यत्न करना चाहिये; युद्धके निमित्त इच्छा करनी कभी उचित नहीं है। हे भरतश्रेष्ठ! तुम्हारा यह कुल पृथ्वी भरमें श्रेष्ठ और शास्त्रके ज्ञानसे प्रतिष्ठित है; इस समय अपने कल्याणके निमित्त तुम इस कुलको इसी प्रकारसे स्थित रहने दो; जो यथार्थ स्वार्थ है, उसीमें अपने चित्तको लगाओ।

९६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, परशुरामके वचन सुनकर भगवान् कण्व ऋषि भी कौरवोंकी सभामें दुर्य्योधनको सम्बोधन करके यह वचन कहने लगे।

कण्व बोले, सब लोकोंके पितामह ब्रह्मा जैसे अक्षय और नाश-रहित हैं, नर-नारायण ऋषि भी वैसे ही हैं। सब देवताओंके बीच विष्णु ही एक मात्र सनातन, न जीतने योग्य, नाश रहित नित्य-स्वरूप और सबके ईश्वर हैं; इसके अतिरिक्त सूर्य्य, चन्द्र, पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, आकाश, ग्रह और ताराओंके पुञ्ज सब प्रलय-कालमें विनष्ट होजाते हैं। संसारके नाश होनेके साथ ही सब वस्तुएं तीनों लोकसे गिरकर नष्ट हो जाती हैं; और फिर भी उनकी सृष्टि होती है; मनुष्य, मृग, पक्षी और तिर्य्यक्-योनिसे उत्पन्न हुए सब जीव क्षण मात्रमें मर जाते हैं। महा प्रतापी राजा लोग राजलक्ष्मीको भोगकर आयुके शेष होनेपर अपने पाप पुण्यके अनुसार नया शरीर पाते हैं। इससे इन सब बातोंको विचार करके; तुम धर्म्मपुत्र युधिष्ठिर-के सङ्गमें सन्धि कर लो। कौरव और पाण्डव लोग आपसमें मिलकर पृथ्वी भरकी प्रजाका पालन करें। हे भरतर्षभ दुर्य्योधन! मैं बलवान् हूं, ऐसा अभिमान करना कभी उचित नहीं है, क्योंकि बलवानोंसे भी अधिक बल-वाले पुरुष दीख पड़ते हैं। हे कुरुनन्दन! देवताओंके समान पराक्रमी पांचों पाण्डव बली-

किक बलसे युक्त हैं; प्रकृत बलशाली पुरुषोंके निकट सेनाका बल, बल नहीं गिना जाता। कन्या प्रदान करनेवाले मातलिके वर खोजनेका यह पुराना इतिहास पण्डित लोगोंने इसके उदाहरण देनेके योग्य वर्णन किया है।

तीनों लोक तथा देवताओंके स्वामी इन्द्रके जो मातलि नामक सारथी हैं, उनके एक गुणकेशी नामकी कन्या थी। सुन्दरता और शरीरकी सुघराईमें वह सब लोकोंकी स्त्रियोंसे बढ़ गई थी। उसके व्याह करनेका समय आया हुआ जानकर मातलि अपनी भार्य्याके सहित अत्यन्त शोक और चिन्तासे दुःखित होकर कहने लगे। अहो! उदारचरित,यशस्वी, ऊंचे और नम्रतासे युक्त स्वभाववाले पुरुषोंके कुलमें कन्याका जन्म होना क्या ही दुःखका विषय है! सज्जन पुरुषोंके पक्षमें कन्या मातृकुल, पिताका कुल और जिस कुलमें प्रदान की जाती है, इन तीनों कुलोंको संशयमें डालती है। मैंने बुद्धिके अनुसार देव और मनुष्य लोकोंको भली भांति खोज लिया तौ भी किसी स्थानपर मेरे योग्य उत्तम पात्र नहीं मिला।

कण्व मुनि बोले, देवता, गन्धर्व्व, दैत्य, दानव, मनुष्य और ऋषियोंके समूहमें भी कोई मातलिके कन्याके समान योग्य पात्र नहीं मिला तब उन्होंने सुधर्म्मा नामकी अपनी स्त्रीके सङ्ग रातके समय परामर्श करके नाग लोकमें जानेका सङ्कल्प किया, और दूसरे दिन सवेरे ही "यद्यपि देव और मनुष्य लोकमें गुणकेशीके रूप और गुणके समान कोई पात्र नहीं मिल सका, तौ भी नागलोकमें अवश्य कोई न कोई मिल जायगा" सुधर्म्मासे ऐसा कहके मातलिने उसकी प्रदक्षिणा की, और कन्याका मस्तक सूंघके पृथ्वीतलमें प्रवेश किया।

९७ अध्याय समाप्त।

कण्वमुनि बोले, मातलि मार्गमें चले जाते थे; उसी समय महर्षि नारदके सङ्ग उनकी भेंट होगई। नारद वरुणसे मिलनेको जाते थे, दैव संयोगसे मातलिको देखकर बोले, हे इन्द्रके सारथि श्रेष्ठ मातलि! कहां जानेके निमित्त उद्यत हुए हो? अपने कार्य्यके निमित्त अथवा इन्द्रके कार्य्य साधनके लिये जारहे हो? नारद मुनिसे ऐसा पूछे जानेपर मातलिने वरुणके स्थानपर अपने कार्य्यका सम्पूर्ण वृत्तान्त विस्तार पूर्व्वक कह सुनाया। अनन्तर देवर्षि नारद बोले, तब चलो हम लोग दोनों एक ही सङ्ग चलेंगे, मैं भी जलके स्वामी वरुणके दर्शन करनेके निमित्त स्वर्गसे चला आता हूं। हे मातलि! पृथ्वीतलको देखकर मैं उसका सम्पूर्ण विवरण तुमको सुनाऊंगा; और अच्छी प्रकारसे देख सुनकर वहींपर तुम्हारी कन्याके योग्य कोई सुन्दर वर ठहरा दूंगा"।

अनन्तर महात्मा मातलि और नारदने पातालपुरीमें पहुंचकर, जलके स्वामी लोकपाल वरुणका दर्शन किया। वहांपर देवर्षि नारद मुनिने और मातलिने इन्द्रके समान पूजा तथा सत्कार पाया। इस प्रकारसे मान और आदर पाकर नारद और मातलिने अत्यन्त प्रीतियुक्त होकर अपने अपने आनेका कारण कह सुनाया; अनन्तर वरुणकी आज्ञा लेकर वे दोनों नाग लोकमें घूमने लगे। नारद रसातलके निवासी सब जीवोंका वृत्तान्त अच्छे प्रकारसे जानते थे; इससे वह मातलिसे सबके वृत्तान्त विशेष रूपसे कहने लगे।

श्रीनारद मुनि बोले, हे सूत! तुमने पुत्र तथा पौत्रसे युक्त जलके स्वामी वरुणका दर्शन किया; अब तुम उनका सब प्रकार शुभदायक बहुतसी सम्पत्तिसे युक्त अधिकार अच्छी प्रकारसे देखो। पुष्कर नामक उनके अत्यन्त रूपवान् और देखने योग्य पुत्रको जो तुमने

देखा है; वह सुशील, उत्तम चरित्रवालोंमें शुद्ध आचार, सबसे श्रेष्ठ, महा बुद्धिमान् और पिताके अत्यन्त ही प्रिय हैं। रूप और सुघराईमें दूसरी लक्ष्मी के समान ज्योत्स्ना-काली नामी सोमकन्याने उन्हें अपना पति बनाया है। अदितिके बड़े पुत्र सूर्य्य भी इस ज्योत्स्नाकालीके श्रेष्ठ पति रूपसे चुने गये थे; यह बात प्रसिद्ध है। हे इन्द्रके मित्र! जिसको पान करनेसे देवताओंने मृत्युको जीता है; जो सब स्थानोंमें सुवर्णसे भूषित है वही वारुणी सुरा भवन है, उसको देखो। हे मातलि! यह देखो राज्यसे दूर किये गये दैत्य लोगोंके प्रज्वलित अस्त्र शस्त्र सब दीख पड़ते हैं। कहा जाता है, कि किसी समयमें इन अस्त्रोंका नाश नहीं होता। बार बार बिद्ध होनेपर भी ये अस्त्र अपने अधिकारियोंके हाथमें लौट आते हैं। इन अस्त्रोंको चलानेके निमित्त भी महा अनुभव अर्थात् अत्यन्त ही मानसिक बलको आवश्यकता होती है इन सम्पूर्ण अस्त्रोंका इस समय देवताओंने दैत्योंको जीतकर अपने अधिकारमें कर लिया है। इस स्थानमें देवताओंके अधिकारसे पृथक पहले दिव्य शस्त्रोंके चलानेवाले राक्षस और दैत्योंका निवास था। इसी वारुणह्रदमें बड़ी भारी शिखासे युक्त वाड़वानल है; धूंवेंसे रहित अग्निसे युक्त अर्थात् प्रचण्ड ज्वालाके सहित सुदर्शन चक्र और लोक संहारके निमित्त भली भांतिसे रचित यह गाण्डीमय धनुषको देवता लोग नित्य ही रक्षा करते हैं। इसीसे उस प्रसिद्ध गाण्डीवधनुषका नाम करण हुआ है। लाख धनुषके समान इसमें बल है, और अचल रूपसे रहनेपर भी युद्धकार्य्यके समयमें यह कितने बल और तेजको धारण करता है, उसका वर्णन करना बहुत ही कठिन है। यह राक्षस और राजाओंसे शासन न कियेजाने योग्य पुरुषोंको भी शासित करता है। ब्रह्माने पहिले ही यह प्रचण्ड धनुष बनाया था। शुक्राचार्य्यने कहा था, कि राजाओंके निमित्त यह धनुष परम शस्त्र है। जलके स्वामी वरुणके पुत्र इस महाधनुषको धारण किया करते हैं। और भी देखो, छत्रगृहके बीच जलराजका जो आतपत्र रहता है, वह बादलोंकी भांति सब ओर शीतल जलकी वर्षा किया करता है। छत्रसे निकला हुआ वह विचित्र जल चन्द्रमाके समान निर्म्मल होनेपर भी महा घोर अन्धकारसे इस भांति छिपा रहता है, कि किसीको दीख नहीं पड़ता। हे मातलि! इस स्थानमें इसी भांतिके बहुतसे पदार्थ दीख पड़ते हैं; परन्तु सबको देखनेसे तुम्हारे कार्य्यको हानि होगी; इससे अब बहुत विलम्ब न करके चलो शीघ्रतासे हम लोग गमन करें।

९८ अध्याय समाप्त।

श्रीनारदमुनि बोले, नाग लोकके बीचमें जो यह पुरी दीख पड़ती है; इसका नाम पाताल है! स्थावर तथा जङ्गम जीवोंमेंसे कोई इस पातालपुरीमें जलके वेगके सङ्ग आजाता है; वह इस पुरीमें प्रवेश करनेके समय भयसे पीड़ित होकर महा घोर शब्द किया करता है। जलको भक्ष करनेवाला वाड़वानल इस स्थानमें नित्य ही प्रज्वलित रहता है। वह देवताओंकी इच्छाके अनुसार अपना यह कर्त्तव्य कार्य्य जानता है, इसीसे मर्य्यादाको न लांघकर यत्नके साथ स्थिर भावसे रहता है। देवता लोग शत्रुओंका संहार करनेके अनन्तर अमृत पीके इसी स्थानपर सञ्चित करके रख छोड़ते हैं, इसी कारण यहांपर चन्द्रमाको कलाका नाश नहीं होता। इसी स्थानपर अदितिके पुत्र हयग्रीवरूपी विष्णु, वेद पढ़नेवाले ब्राह्मणोंको वेदध्वनिको वर्द्धित करनेके निमित्त वेद-वाक्यसे सुवर्ण नामक जगतको परिपूर्ण करते

हुए प्रति पर्व्वके दिवस उपस्थित करते हैं। चन्द्रमा आदि सम्पूर्ण जलकी मूर्त्तियां इसी स्थानपर पतित होती है अर्थात जलको पातन करती हैं। इसी कारण यह उत्तम लोक "पतञ्जल,, के संज्ञ पसे पाताल कहके विख्यात हुआ है। जगतके हित करनेवाले हाथियोंके राजा ऐरावत इसी स्थानसे सुन्दर तथा शीतल जल ग्रहण करके सब मेघोंके बीच चलाया करते हैं;जिसको देवताओंके राजा इन्द्र पृथ्वीके उपर वर्षाया करते हैं। इस स्थानमें नाना प्रकारके जलजन्तु जलके बीच चन्द्रमाके प्रकाशका पान करके निवास करते हैं।

सूत ! इस पातालतलके आसरेमें ऐसे बहुतसे जीव हैं, जो दिनमें सूर्य्यके तेजसे मृत प्राय हो जाते हैं, और रात्रिके समय फिर जीवित होते हैं। उसका कारण यह है, कि यहांपर चन्द्रमा प्रति रात्रिको उदित होकर अपने किरणरूपी हाथोंसे अमृत स्पर्श कराके उनको फिर जिला देते हैं। इन्द्रके हाथसे सर्व्वस्व हरे जानेपर कालसे पीड़ित होकर अपने धर्म्मसे सदा स्थित रहनेवाले प्रसिद्ध दैत्य लोग यहींपर इच्छाके अनुसार निवास करते हैं। सब प्राणियोंके महेश्वर उमापति महादेवने इसी स्थानपर सब लोकोंके कल्याणकी इच्छासे उत्तम तपका अनुष्ठान किया था। सदा वेदको पढ़ने और स्वर्गको जीतनेवाले गोव्रतधारी महा ऋषि लोग प्राणवायुका संयम करके इसी स्थानमें बसते हैं। जहां तहां कोई स्थानमें सो रहना, जो कुछ भोजन मिले उसीसे तृप्त होना; और जो कुछ वस्त्र मिले उसीको धारण करना; इसीको गोव्रत कहते हैं। इसी पुरमें सुप्रतीक नाम नागके वंशमें नागराज ऐरावण वामन, कुमुद, अञ्जन आदि मुख्य मुख्य नागोंका जन्म हुआ है। हे मातलि ! इससे तुम यहां-पर अच्छी भांतिसे खोजकर देखो यदि कोई वर तुम्हारी इच्छाके अनुसार ठीक जंचे, तो उसके समीप चलकर यत्नपूर्व्वक तुम्हारी कन्याके पाणिग्रहणके निमित्त उससे प्रार्थना की जाय। जलके बीच यह जो अच्छा अपने तेजसे प्रकाशित हो रहा है, यह सम्पूर्ण प्राणियोंको सृष्टिके समयसे कभी न फटा; न यहांसे हटा। मैं कभी किसी पुरुषको इसका जन्म तथा स्वभाव वर्णन करते नहीं सुना है। इसके पिता माता कौन हैं ? इस बातको कोई नहीं जानता। हे मातलि ! यह वचन प्रसिद्ध है, कि संसारके नाश होनेके समय इसमेंहीसे प्रलयकी अग्नि निकलकर सब प्राणियोंके सहित तीनों लोकको भस्म कर देती है।

नारदमुनिकी इन सब बातोंको सुनकर मातलिने कुछ भी उत्तर न दिया; और कहा कि इस स्थानपर मेरी इच्छाके अनुसार कोई पात्र नहीं जंचता; इससे अब आप दूसरे स्थान-पर शीघ्र ही चलिए।

९९ अध्याय समाप्त।

श्रीनारद मुनि बोले, अत्यन्त मायावी दैत्य दानवोंका पातालके तलपर यह उत्तम महानगर हिरण्यपुर नामसे विख्यात है। इस नगरको मय-दानवने अपने मनसे कल्पना की थी और विश्वकर्म्माने इसको महा परिश्रम और यत्नके साथ बनाया है। सहस्रों मायाओंके रचनेवाले महा तेजस्वी शूर वीर दानव लोग पहिलेसे वरदान पाकर इसी स्थानमें निवास करते हैं। उन लोगोंको इन्द्र, यम, वरुण, कुवेर तथा दूसरा कोई भी पुरुष अपने वशमें नहीं कर सकता। हे मातलि ! विष्णुके चरणसे उत्पन्न हुए कालखञ्ज नामक असुर और ब्रह्माके चरणसे उत्पन्न भये नैऋत,और यातुधान नामक राक्षस लोग भी इसी स्थानमें निवास करते हैं। वे सब बड़े बड़े दांतोंसे युक्त, भयङ्कर-वेगशाली और वायुके समान पराक्रमी तथा मायाबलसे

पूर्ण हैं। इसके अतिरिक्त इस स्थानमें और भी निवातकवच नामक कितने ही दानवोंका निवास है। इन्द्र भी उन लोगोंके बल और पराक्रमको जाननेमें समर्थ नहीं होते; सो बात तुमसे छिपी नहीं है। एकबार ध्यान देकर देखो, तुम और तुम्हारा पुत्र गोमुख और पुत्रों-के सहित देवताओंके राजा इन्द्र कई बार उन लोगोंके सम्मुखसे युद्धमें भाग गये हैं। हे मातलि! दैत्य लोगोंके सोने, चांदी, पद्मराग मणि तथा विविध शिल्पोंसे युक्त यथायोग्य रूप और मनोहर घरोंको देखो; यह सब वैदूर्य और दूसरी मणियोंसे भली भांति चित्रित, अग्निके समान हीरेसे जगमगा रहे हैं; तथा स्फटिकके समान श्वेत, सुन्दर और बहुत ऊंचे हैं। ये सब मन्दिर मट्टी, शिला और काठसे बने हुए, सूर्य्यके तेजके समान प्रकाशित हो रहे हैं। इन मन्दिरोंके बहुत प्रकारके द्रव्य और शिल्पोंको संख्या करनी बहुतही कठिन है; गुणसे ही इन सब मन्दिरोंकी सिद्धि होती है। और भी इस मनोहर क्रीड़ाकानन, रत्नोंसे युक्त पात्र, महामूल्यवान् आसन, सुन्दर शय्या, बादलके समान पर्व्वत, सुन्दर फुहारे और अभिलाषाके अनुसार फूल फलसे युक्त सब वृक्षोंको देखो। हे मातलि! यदि इस स्थानमें तुम्हारे मनके अनुसार कोई पात्र ठीक हो, तो उसे तुम देखो, और नहीं तो चलो हम दोनों दूसरे स्थानपर चलें।

मातलि ऐसे वचन कहनेवाले नारदसे बोले हे देवर्षि! देवताओंके अप्रिय कार्य्य करना मुझे किसी प्रकारसे भी उचित नहीं है; देवता और दानव दोनोंमें सदासे वैर चला आता है; इससे शत्रुपक्षके सङ्गमें कैसे अपना सम्बन्ध कर सकता हूं? सम्बन्ध करनेकी बात तो दूर रही, दानवोंके सङ्ग भेंट भी करना मेरे निमित्त बहुत ही अनुचित है। इससे चलिये हम लोग शीघ्र ही दूसरे स्थानपर गमन करें आपको आत्मा जो अत्यन्त ही हिंसात्मक है, वह मुझे भली भांतिसे विदित है।

१०० अध्याय समाप्त।

श्रीनारदमुनि बोले,यह लोक सांपोंको भक्षण करनेवाले गरुड़ वंशीय पक्षियोंके अधिकार में है। पराक्रमका प्रकाश करने,शीघ्र चलने और बोझा उठानेमें इन पक्षियोंका कुछ भी परिश्रम नहीं जान पड़ता। विनतापुत्र गरुड़, सुमुख, सुनाम, सुनेत्र,सुवर्च्चा सुरूप और सुबल इन्ही छः पुत्रोंसे इस कुलका विस्तार हुआ है। कश्यपके वंशमें उत्पन्न हुए विनताके कुलको बढ़ानेवाले मुख्य मुख्य पक्षियोंने अपनी सन्तान परम्पराके अनुसार सात हजार कुल परिवर्द्धित और अच्छी प्रकारसे वर्द्धित किया है। इस सब कुलोंमें उत्पन्न हुए पक्षी लक्ष्मीसे युक्त बहुतसी सम्पत्तिके स्वामी और महा बलवान हैं। कर्म्मसे ये क्षत्रिय कहे जा सकते हैं; परन्तु सांपोंका भक्षण करके ये सब बहुत ही निठुर होगये हैं। जातिके नाश करनेसे ब्राह्मणत्व नहीं पा सकते। हे मातलि! मैं उनमेंसे मुख्य मुख्य पक्षियोंके नाम कहता हूं, तुम सुनो। विष्णुका वाहन होनेसे यह कुल अत्यन्त ही प्रशंसाका पात्र हुआ है; विष्णु ही इन सबके पूजनीय देवता हैं; ये सब उनकी पूजा किया करते हैं। इनके हृदयमें विष्णु सदा विराजमान रहते हैं, और इन सबके सदा ही गति स्वरूप हैं। उनके नाम ये है, सुवर्णचूड़, नागाशी, दारुण, चण्डतुण्डक, अनिल, अनल, विशालाक्ष, कुण्डली, पङ्कजित्, वज्रविष्कन्त, वैनतेय, वामन,वातवेग, दिशाचक्षु, निमिष, त्रिवार, सप्तवार, वाल्मीकि, दीपक, दैत्यद्वीप, सरिद्वीप, सारस, पद्मकेतन, सुमुख, चित्रकेतु, चित्रबर्ह, अनघ, मेषहृत, कुमुद, दक्ष, सर्पान्त, सोमभोजन, गुरुभार, कपोत, सूर्य्यनेत्र चिरान्तक, विष्णुधर्म्मा, कुमार, परिबर्ह, हरि, सुस्वर, मधुपर्क, हेमवर्ण, मलय, मातरिश्वा,

निशाकर और दिवाकर। गरुड़वंशी अनगिनत पक्षियोंके बीचसे मैंने केवल कई एक मुख्य मुख्य पक्षियोंके नाम मात्र कहे है। जो सब यश, कीर्त्ति और प्रधानता पाये हुए हैं, इस स्थानमें उन्हीका नाम वर्णन किया गया है। हे मातलि! यदि इस स्थानमें तुम्हारी रुचि न होवे, तो चलो दूसरी ओर चलें; जहांपर तुम अपने मनके अनुसार योग्य पात्र पाओगे, मैं उसी स्थानपर तुमको ले चलूंगा।

१०१ अध्याय समाप्त

श्रीनारद मुनि बोले, अब हम लोग जिस नगरमें आकर उपस्थित हुए हैं, इसका नाम रसातल है। यह पृथ्वीके सातवें तलेपर विराजमान है। इसी स्थानपर अमृतसे उत्पन्न भई गोमाता सुरभी सदा विद्यमान रहती हैं; यह नित्यही पृथ्वीके सारांशसे उत्पन्न छः रसोंके सारभाग उत्तम और पवित्र अद्वितीय रसके आकर स्वरूप दूधकी वर्षा किया करती हैं। यह अनिन्दिता गोमाता पहिले समयमें अमृतके पीनेसे तृप्त हुए, सारवस्तुको वमन करनेवाले, सब लोकोंके पितामह ब्रह्माके मुंहसे उत्पन्न हुई थीं। इनके दूधकी धारा पृथ्वीपर गिरनेसे महाह्रदस्वरूप क्षीरके समुद्रकी उत्पत्ति हुई है। इस क्षीर सागरके सम्पूर्ण स्थान फेनके पुञ्जसे युक्त रहनेसे ऐसा बोध होता है, जैसे फूल फूला हुआ है। उस सब फेनको पान करनेके निमित्त फेनप नामके मुनि इस स्थानमें वास करते हैं। केवल फेनके पान करनेहीसे उनका फेनप नाम हुआ है। हे मातलि! वह इस प्रकारकी कठोर तपस्यामें लगे हैं, कि देवता लोग भी उनसे डरते रहते हैं। सुरभीके गर्भसे उत्पन्न हुई और चार गऊ पूरब आदि चारों निवास करती हैं। दिशाओंके धारण करनेसे उनका नाम दिक्पाली प्रसिद्ध है; जो पूर्व दिशाकी रक्षा करती हैं उनका नाम सुरूपा है; जो दक्षिण दिशाको धारण कर रही हैं, उनका नाम हंसिका है, जो विश्वरूपिणी गऊ वरुण देवकी पश्चिम दिशाको धारण करती हैं, उनका नाम सुभद्रा है; और जो उत्तर दिशाको धारण करती हैं, उनका नाम सर्व्वकामदुधा है। देव और असुरोंने मन्दरगिरिको मथानी बनाकर इसीके दूधसे मिले हुए समुद्रको मथकर वारुणी सुरा, लक्ष्मी, उच्चैश्रवा नामक घोड़ा और रत्नोंमें श्रेष्ठ कौस्तुभ मणि आदि निकाला था। हे मातलि! सुरभीके अनन्त गुणोंकी कथा मैं क्या कहूं, वह जो महा पवित्र उत्तम दूध देती है वह नागोंको सुधा, पितरोंको स्वधा और देवोंके पक्षमें अमृतरूप होता है। "रसातलमें वास करनेसे जैसा सुख मिलता है, वैसा सुख नागलोक, देव लोक, स्वर्ग और विमानमें भी नहीं मिल सकता है।" रसातलके निवासी लोगोंने पहिले समयमें यह पुरानी कथा कही थी, वही आज पर्य्यन्त लोकोंके बीच पण्डितोंके मुंहसे सुनी जाती हैं।

१०२ अध्याय समाप्त।

श्रीनारद मुनि बोले, इंद्रकी अमरावती पुरीकी भांति वह जो उत्तम नगरी दीख पड़ती है, इसका नाम भोगवती है। यह नागोंके राजा बासुकी नागके अधिकारमें है। अपने प्रभावसे वह सम्पूर्ण पृथ्वीको सदासे धारण किये हुए हैं; तपके बलसे वह सबके अग्रगामी पर्व्वतके समान उज्वल शरीर, दिव्य आभूषणोंसे भूषित, प्रज्वलित जिह्वाओंसे युक्त महाबली तेजस्वी शेषनाग इसी स्थानमें विराजमान हैं। इसी स्थानमें नागोंकी माता सुरसाके सहस्रों पुत्र पीड़ा रहित होकर स्वच्छन्दतापूर्व्वक वास करते है। वे सब नाना भांतिके आकारसे युक्त अनेक भूषणोंसे भूषित, मणि, स्वस्तिक, चक्र और कमण्डलुके चिह्नसे युक्त महाबली और स्वभावसे ही भयङ्कर हैं। उनमेंसे कोई कोई सहस्र,

कोई पांच सौ, कोई सौ, तथा कोई दश शिर-वाले और कोई तीन तथा दो शिरके सर्प हैं; इन सबोंका बड़ा विशाल शरीर है, और इनके निवास स्थान भी बहुत बड़े हैं। हे मातलि! इस स्थानमें एक ही वंशमें कितने सहस्र, लाख तथा कितने अर्बुद नागोंका बास है; उसको कौन कह सकता है। उनमें मुख्य मुख्य कई एक श्रेष्ठ नागोंका मैं तुमको नाम बतलाता हूं इसे तुम सुनो; वासुकि, तक्षक, कर्कोटक, धनञ्जय, कालिय, नहुष, कम्बल, अश्वतर, बाह्यकुण्ड, मणि, आपूरण, खग, बामन, ऐलपत्र, कुकुर, कुकुण, आर्य्यक, नन्दक, कलशपोतक, कैलाशक, पिञ्जरक, ऐरावत, सुमनोमुख, दधिमुख, शङ्ख, नन्दक, उपनन्दक, आप्त, कोटरक शिखी, निष्ठुरक, तित्तिरि, हस्तिभद्र, कुमुद, माल्यपिण्डक, पद्म द्वय, पुण्डरीक, पुष्प, मुद्गरपर्णक, पिठरक, सम्वृत, वृत्त, पिण्डार, विल्वपत्र मूषिकाद, शिरीषक लिप, शङ्कशीर्ष, ज्योतिष्क अपराजित, कौरव्य, धृतराष्ट्र, कुहर, कृशल, विरजा, धारण, सुवाहु, सुखर, जय, बधिर, अन्ध, विशुण्डि, विरस और सुरस कश्यपके ये सब और कई सौ पुत्र जो सब पुरोमें विद्यमान हैं, उनकी संख्या करनी बहुत ही कठिन है। इससे यदि इस स्थानमें कोई तुम्हारे मनके अनुसार पात्र मिले तो देखो।

श्रीकण्व मुनि बोले, मातली स्थिर चित्त होके एक सुन्दरयुव को देखके हर्षित हुए और नारदसे उसका वृत्तान्त पूछने लगे। मातलि बोले, हे देवर्षि! कौरव्य आर्य्यकके सन्मुखमें यह जो तेजस्वी देखने योग्य युवा पुरुष बैठा है; यह किस कुलमें उत्पन्न हुआ है? इसके पिता माता कौन हैं? किस भाग्यवान्के वंशकी यह ध्वजा होकर जन्मा है? विद्या, विनय, रूप और गुण तथा अवस्थाके क्रमके अनुसार यह गुण केशरी पुरुष श्रेष्ठ वर मेरे मनमें जंचता है।

कण्व मुनि बोले, जब सुमुख नामक नागराजको देखके मातलि प्रसन्न हुए, तब नारद मुनि उसके जन्म, कर्म्म और महात्म्यका वर्णन करने लगे। नारद बोले, यह नागराज ऐरावत वंशमें उत्पन्न हुआ है; इसका नाम सुमुख है; यह आर्य्यकका प्यारा पौत्र और वामनका दौहित्र है। हे मातलि! चिकुर नामक नागराज इसके पिता थे; थोड़ा ही समय बीता होगा, कि वह गरुड़के हाथसे पञ्चत्वको प्राप्त होगये। यह सब बातें सुनकर मातलि अत्यन्त प्रसन्न होके नारदसे बोले, हे तात! यह नागोंमें श्रेष्ठ सुमुख ही मेरे मानसिक जामाता (दामाद) हुए; इनके ऊपर मेरा बहुत ही प्रेम उत्पन्न हुआ है हे मुनिश्रेष्ठ! इससे अब इसी नागराजके हाथमें मेरी प्यारी पुत्रीको प्रदान करानेके निमित्त यत्न कीजिये।

१०३ अध्याय समाप्त।

मातलिकी प्रार्थनासे नारद मुनि आर्य्यकके समीप जाकर बोले, हे भुजगसत्तम! यह हमारे साथी महात्मा पुरुष इन्द्रके सारथी और प्रिय मित्र हैं; इनका नाम मातलि है। ये पवित्रता, आचार, शील गुणोंसे भरे हुए, तेजस्वी पराक्रमी तथा महाबलवान् हैं। ये केवल इन्द्रके सारथी ही नहीं हैं; यह उनके प्राणके समान प्यारे मित्र और मन्त्री भी हैं। हर एक युद्धके स्थानमें इन्द्रके सहित इनका पराक्रम थोड़ा कम विशेष दीख पड़ता है। देव और असुरोंके युद्धके समयमें इन्होंने इन्द्रका सहस्र घोड़ोंसे युक्त जयशील रथ लेकर ऐसी शीघ्रतासे रणभूमिमें उपस्थित किया, कि बोध होता था, जैसे मन ही मनसे रथको चला रहे हैं। इनके प्रभावके बात मैं कहांतक वर्णन करूं यह घोड़ोंके, चलानेके कौशलहीसे शत्रुओंको पराजित किया करते हैं; पीछे इन्द्र अपनी दोनों भुजाओंकी सहायतासे विजय पाते हैं। इनके

बिना पहिले प्रहार किये, इन्द्र कभी अपना-दिव्य अस्त्रोंको नहीं चलाते। इनके घरमें गुणकेशी नामकी अनेक गुणोंसे भरी एक सत्य-शीला सुन्दरी कन्या है। पृथ्वी भरमें वैसी रूपवती स्त्री और कहीं नहीं है। उसके योग्य वर ढूंढ़नेके निमित्त ये तीनों लोकमें घूम रहे हैं, सम्प्रति सुमुख नामक तुम्हारे पौत्रको इन्होंने योग्य पात्र स्थिर किया है। इससे हे देवोंके तुल्य आर्य्यक! यह बात तुम्हें उत्तम जंचे तो कन्या-रत्नका पाणिग्रहण करानेके निमित्त यत्न करो। जैसे विष्णुके सङ्ग लक्ष्मी और अग्निके सङ्ग स्वाहा हैं, वैसे हो सुन्दरी गुणकेशी भी तुम्हारे कुलकी लक्ष्मी होवे। इन्द्रकी शचीकी भांति गुणकेशी सुमुखके योग्य उत्तम पात्री है और सुमुख भी गुणकेशीके योग्य है। इससे तुम पौत्रके सङ्ग उस महासुन्दरी कन्याका व्याह करो। सुमुख पितासे हीन है, तौ भी हम लोग उसके गुण मात्रको देख करके उसके सङ्ग गुण-केशीका व्याह किया चाहते हैं। तुम्हारे ऐरा-वत कुलका मान, प्रतिष्ठा, सुमुखकी पवित्रता, शील, दम आदि अनेक गुणोंको देख करके मातलि आप हो इस स्थानपर आकर सुमुखके संग अपनी कन्याका व्याह करनेके निमित्त तैयार हैं, अब इस समयमें तुमको भी इनका पूर्ण रीतिसे सम्मान करना उचित है।

कण्व मुनि बोले, आर्य्यक पुत्रके मरने और पौत्र (नाती) को किसी प्रकारसे जीवित देख-नेके कारण नारद मुनिके वचनसे हर्ष और विषादसे युक्त होकर बोले, हे देवर्षि! आपके वचनका मुझे किसी भांतिसे अस्वीकार नहीं हो सकता, जो इन्द्रके मित्र हैं, उनके सङ्ग सम्बन्ध करनेकी किसे इच्छा न होगी? परन्तु हे महामुनि! जिस प्रकारसे यह सम्बन्ध हो सकेगा, उसीके निमित्त मुझे चिन्ता हो रही है। हे तात! पहिले तो सुमुखका पिता जो मेरा पुत्र था, वह विनतापुत्र गरुड़के करालु हाथोंसे मारा गया; उसी शोकसे हम लोग दुःखित हैं; उसपर भी वह निठुर पक्षी जानेके समयमें यह कह गया है, कि "अगले महीनेमें सुमुखको भी भक्षण करूंगा।" तब किस प्रका-रसे मुझे हर्ष हो सकता है? मैं यह निश्चय जानता हूं, कि गरुड़ जो कुछ कह गया है, उसे वह अवश्य पूरा करेगा। इससे इन सब बातोंको स्मरण करके हमारे सम्पूर्ण हर्षका नाश हो गया है। आर्य्यककी इन सब बातोंको सुनकर मातलि उनसे बोले, मैंने इस विषयमें एक युक्ति स्थिर की है; आपके पौत्र सुमुखको मैंने अपनी कन्याका मानसिक पति ठहरा लिया है; इससे अब यह नागराज मेरे संग चलके तीनों लोकके राजा इन्द्रके संग साक्षात् (मुलाकात) करें। गरुड़से इन्हें बचानेके निमित्त मैं सब भांतिसे यत्न करूंगा; अनन्तर शेष कार्य्यसे इनके परमायुका विषय जान सकूंगा। हे भुजगसत्तम! आपका कल्याण हो, आप आज्ञा दीजिये; सुमुख हम लोगोंके संग इन्द्रके समीप गमन करें।

कण्व मुनि बोले, अनन्तर उस महा तेजस्वी मातलिने नारद और आर्य्यकके सहित सुमुख-को संग लेकर इन्द्रपुरीमें आकर देखा, कि देवताओंके राजा महा तेजस्वी इन्द्र अपने सिंहा-सनपर बैठे हुए हैं और सब देवता तथा चार भुजको धारण करनेवाले भगवान् विष्णु भी वहांपर उपस्थित हैं। तब नारद मुनिने उन सबके बीचमें मातलिके विषयका सम्पूर्ण वृत्तान्त आदिसे अन्ततक वर्णन कर दिया।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर विष्णु तीनों लोकके स्वामी इन्द्रसे बोले, हे इन्द्र! तुम इस नागराजको अमृत दान करके देवताओंके समान कर दो; तुम्हारी इच्छासे मातलि, नारद और सुमुख सब कोई अपनी इच्छा पूर्ण करें। विष्णुके इस बचनको सुनकर इन्द्र बहुत समयतक

अपने मन ही मन गरुड़की पराक्रमको विचार-कर अन्तमें बोले कि आप मुझे जो आज्ञा देते हैं, उसे आप ही सिद्ध कीजिये, सुमुखको आप स्वयं अमृत दान करिये। विष्णु बोले, हे इन्द्र! तुम इस सम्पूर्ण लोकके स्वामी हो; इससे तुम जिसे जो कुछ प्रदान करोगे, उसे कौन अन्यथा कर सकेगा? यह वचन सुनकर वृत्रासुरके मारनेवाले इन्द्रने उस नागराजको उत्तम आयु प्रदान की; परन्तु अमृत पान नहीं कराया। सुमुख वर पाकर यथार्थमें सुमुख होगये; अर्थात् उनके मुखमण्डलपर उस समयमें प्रसन्नताका चिह्न स्पष्ट प्रकाशित होने लगा। यथा समयमें अभिलाषाके अनुसार गुणकेशीके सङ्ग व्याह करके वह अपने स्थानको गये, और नारद तथा आर्य्यक भी कृतकार्य्य होकर इन्द्रकी पूजा करके अपने अपने स्थानोंपर चले गये।

१०४ अध्याय समाप्त।

कण्व मुनि बोले, इधर महाबली गरुड़ने जब इन्द्रपुरीका यह सब वृत्तान्त सुना, कि देवताओंके राजा इन्द्रने सर्पको आयु प्रदान किया है, तब उनके क्रोधकी सीमा न रही। वह उसी समय अपने महाविकराल बड़े बड़े दोनों पंखोंको पसार कर, तीनों लोकको अपने पचोंसे रुद्ध करते हुए, अत्यन्त वेगसे दौड़े; और इन्द्रके समीप पहुंचकर बोले, हे भगवन्! तुम अवज्ञा करके मेरी वृत्ति लोप करनेमें क्यों प्रवृत्त हुए हो? पहिले तुमने अपनी इच्छासे मुझे वर दिया था, अब उससे क्यों हटते हो? सब सृष्टिकी रचनेवाले ब्रह्माने मेरा जो कुछ आहार बना दिया है, तुम उसको क्यों रोकते हो? हे देवराज! सुमुखके मांससे हमारी बहुतसी सन्तानोंका भोजन होगा, यही मनमें स्थिर करके मैंने इस महानागको मारनेका समय ठीककर रक्खा था। इस समय वह वर पानेसे अवध्य होगया; तो अब मैं दूसरे किसीकी हिंसा करनेमें कैसे उत्साही हो सकूंगा? तुमने इसको जैसे वरदान दिया है, दूसरेपर भी वैसे ही अनुग्रह करनेमें कौन कठिनाई है? हे इन्द्र! तुम्हारे इस प्रकारके खेल करनेसे मुझको कुटुम्ब तथा सेवकोंके सहित अवश्य ही प्राण त्याग करना पड़ेगा; ऐसा होनेसे तुम भली भांति सन्तुष्ट होओगे। हे इन्द्र! तीनों लोकके ईश्वर होकर भी मैंने जब दूसरेकी सेवा स्वीकार की है; तब हमारे पक्षमें ऐसी घटना होनी ही उचित है, केवल ऐसा ही क्यों? मैं इससे भी अधिक क्लेश पानेका पात्र हूं। हे तीनों लोकोंके राजा इन्द्र! तुममें मुझसे कोई अधिकता न होनेपर भी जब तुमको तीनों लोकोंका राज्य मिला है; तब विष्णु ही अकेले हमारी महिमाको नष्ट करनेके कारण नहीं हैं। देखो दक्षकी पुत्री मेरी माता और कश्यप ही मेरे पिता हैं; मैं भी लीलाके क्रमसे सब लोकोंके भारको उठा सकता हूं; मेरा भी यह प्रचण्ड बल सब प्राणियोंसे न सहने योग्य है; दैत्योंकी लड़ाईमें मैंने भी बड़े बड़े कर्म्म पूर्ण किये हैं; श्रुतश्री, श्रुतसेन, विवस्वान्, रोचनामुख, प्रस्तुत, और कालकाक्ष आदि दैत्योंको मैंने भी मारा है। तब जो मैं तुम्हारे भाईका सेवक होकर यत्नपूर्व्वक रथकी ध्वजाकी रक्षा करता हूं; और अनेक समयमें उन्हें पीठपर चढ़ाके ले चलता हूं; इसीसे तुम मेरी अवज्ञा करते हो। हे इन्द्र! सम्पूर्ण जगतमें मेरे समान भार उठानेवाला तथा मुझसे अधिक बलवान् और दूसरा कौन है? मैं सब प्रकारसे श्रेष्ठ होकर भी बन्धुबान्धवोंके सहित इनका भार उठाता हूं सम्प्रति तुमने जो मेरी अवज्ञा की और मुझको भोजनसे वञ्चित किया, इसमें तुमसे और इनसे दोनोंहीसे मेरा गौरव नष्ट होगया। हे विष्णु! अदितिके गर्भसे ये सब इन्द्र आदि जितने बल और पराक्रमसे युक्त शूरवीरोंका जन्म हुआ है; उन सबमें

तुम ही सबसे अधिक बलवान् हो, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। परन्तु मैं तुमको अपने पङ्खके थोड़ेसे स्थानपर उठाकर बिना क्लेशके फिरा करता हूं, इससे हे भ्राता ! तुम स्थिर चित्तसे विचार करके देखो, कि हम लोगोंमें अधिक बलवान् कौन है ?

कण्व मुनि बोले, चक्रधारी भगवान् विष्णु गरुड़के अभिमानसे भरे दारुण वचनोंको सुनकर उन्हें भयभीत करते हुए गम्भीर भावसे बोले। हे गरुड़ ! तुम अत्यन्त निर्ब्बल होकर भी अपनेको बलवान् समझते हो; मेरे सम्मुख तुम्हें इस प्रकारसे अपनी बड़ाई करनी उचित नहीं है। हे अण्डज ! तुम्हारी तो बात ही क्या है, यह सम्पूर्ण तीनों लोक भी मेरे भारको उठानेमें असमर्थ है, मैं खुद अपने शरीरको आप ढोता रहता हूं, और तुमको भी धारण किये हुए चलता हूं। तुम इस बातको सचाईके निमित्त यही मेरी एक भुजा उठा करके देखो, यदि तुम मेरे इस एक हाथके भारको धारण कर सको, तो भी तुम्हारा यह सम्पूर्ण गर्व्व सार्थक हो सकता है।

विष्णुने ऐसा कहके गरुड़के कन्धे पर ज्यों-ही अपने उस हाथको रखा, त्योंही वह महाभारसे विकल चेतनारहित हो गये। स्वर्गके सहित सम्पूर्ण पृथ्वीका जितना भार होता है, उतना ही भार विष्णुके एक हाथ मात्रका बोध हुआ। महा बलवान् दयालु भगवान् विष्णुने बलसे पीड़ित करते हुए यद्यपि गरुड़का प्राण नाश नहीं किया; तो भी उस महा भारसे पीड़ित होकर गरुड़ वमन करने और अपने दोनों पङ्खोंको फटकारने लगे; और मस्तकसे उन्हें प्रणाम कर कातर होके बोले हे भगवन् ! हे विश्वमूर्त्ते ! तुम्हारे इस शरीरके बीच जब सब लोकोंमें उत्पन्न हुई सम्पूर्ण वस्तु उपस्थित हैं; तब इच्छाके अनुसार अपने भुजाको पसारकर मुझको विकल करना कौनसी विचित्र बात है; हे देवोंके देव ! अब इस समय कृपा करके निज ध्वजापर वास करनेवाले बलके घमण्डमें मतवाले अल्पबुद्धि विह्वल पक्षीके ऊपर क्षमा करो। हे सर्व्व शक्तिमान् ! मैं पहिले कभी तुम्हारे बलके माहात्म्यको नहीं जान सका था; इसीसे मैंने अपने मनमें समझ लिया था, कि मेरे समान बलवान् और कोई नहीं है। हे राजेन्द्र ! गरुडके इस प्रकारके कातर वचन सुनकर भगवान् विष्णु प्रसन्न होके प्रीतिपूर्व्वक बोले, कि "फिर कभी ऐसा अभिमान न करना।" ऐसा कहके अपने पैरके अङ्गूठेसे सुमुख सर्पको उनकी छातीके ऊपर फेंक दिया। तभीसे पक्षिराज गरुड़ उस नागराज सुमुखके सङ्ग प्रीतिपूर्व्वक एकत्र वास करने लगे। हे गान्धारीनन्दन ! विष्णुके बलसे विकल होनेसे अत्यन्त बलशाली महायशस्वी विनतानन्दन गरुड़का गर्व्व इसी प्रकारसे दूर हुआ था। हे तात ! उसी प्रकारसे तुम भी जबतक संग्रामभूमिमें पाण्डवोंके सम्मुख नहीं होते हो; तभी तक जीवित रह सकते हो। प्रहार करनेमें श्रेष्ठ पवननन्दन भीमसेन और लोकोंमें महा प्रतापसे युक्त इन्द्रतनय अर्ज्जुन रणभूमिमें किस पुरुषको नहीं मार सकते हैं ? हे दुर्योधन ! स्वयं विष्णु, वायु, इन्द्र, धर्म्म और दोनों अश्विनीकुमारोंके सङ्ग युद्ध करनेकी बात तो दूर रहे तुम उनको ओर देखनेमें भी समर्थ न होओगे। हे नृपनन्दन ! इससे विरोध करनेका कुछ भी प्रयोजन नहीं है; गुरु स्वरूप कृष्णके द्वारा शान्ति स्थापन करके कुलको रक्षा करो। इन्हीं महा तपस्वी नारद मुनिने विष्णुके ऊपर कहे हुए सब माहात्म्यको अपनी आंखोंसे उस समय देखा था। वही चक्र और गदाको धारण करनेवाले भगवान् तुम्हारी सभामें उपस्थित हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कण्व मुनिने ऐसा उपदेश दिया, यह ठीक है; परन्तु नीचबुद्धि

दुर्य्योधन भौंहें टेढ़ी करके लम्बी सांस लेता हुआ कर्णके मुखकी ओर देखकर, ऊंचे स्वरसे ठठाकर हंसने लगा; और कण्व ऋषिके ऐसे हितकारी वचनोंका अनादर करते हुए, हस्तीके समान अपने उरु देश (जङ्घे) को ठोंक कर, यह उत्तर दिया। हे महर्षि! मेरी जैसी अवस्था है, तथा मेरी जैसी गति होगी; ईश्वरने मुझको उसी निमित्त उत्पन्न किया है; और मैं भी उसीके अनुसार चलता हूं; इससे प्रलाप करनेसे अधिक आप लोगोंको क्या फल हो सकता है?

१०५ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजयने पूछा; अनर्थकी सृष्टि करनेवाले, पराये धनके लोभमें मोहित, नीचोंकी सङ्गतिमें रत! मरनेके निमित्त उद्यत, ज्ञातिको दुःख देनेवाले, मित्रोंको क्लेश देनेवाले, शत्रुओंका हर्ष बढ़ानेवाले और बुरे मार्गसे चलनेवाले दुर्य्योधनको उसके बन्धु बान्धवोंने क्यों नहीं निवारण किया? प्रीति करनेवाले परम मित्र भगवान् कृष्ण और पितामह भीष्म आदि अपने अच्छे उपदेशोंसे उसे उत्तम मार्गमें क्यों नहीं चला सके?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भगवान् कृष्ण और पितामह भीष्मको जैसा हितके निमित्त उपदेश वचन कहना उचित था; उन लोगोंने वैसा ही कहा था; उसके अतिरिक्त महर्षि नारदने भी जो विस्तारपूर्व्वक अनेक प्रकारके वचन कहे थे; आप उन्हें सुनिये।

नारद मुनि बोले, मित्रोंकी बातोंका सुने ऐसा पुरुष दुर्लभ है; और हितकी बातोंका उपदेश करे ऐसे मित्रका मिलना भी बहुत कठिन है। क्योंकि हितका वचन कहनेवाला वक्ता जिस कार्य्यकी करना निश्चित करता है, श्रोता उस बातमें स्थित नहीं रहता। परन्तु हे कुरुनन्दन! मेरे विचारमें हितकारी मित्रोंकी बातें सुनना अत्यन्त ही कर्त्तव्य कार्य्य है। हठके वशमें होना किसी प्रकारसे उचित नहीं है; क्योंकि हठ क्लेशका मूल है, हठके वशमें पड़कर गालव मुनिका जिस प्रकारसे पराभव हुआ था; वही पुराना इतिहास इसमें उदाहरण है। हे भारत! पहिले समयमें तपस्यामें लगे हुए विश्वामित्रके धर्म्मको जाननेके निमित्त भगवान् धर्म्म स्वयं वशिष्ठकी मूर्त्ति धारण करके उनके समीप गये थे। हे राजन् धर्म्मने वशिष्ठ मुनिका वेष धारणकर क्षुधासे पीड़ित और भोजन करनेकी इच्छासे विश्वामित्र मुनिके आश्रममें आकर उपस्थित हुए। विश्वामित्र उसी समय आतुर होके उत्तम अन्नका पाक कराने लगे, परन्तु कपटवेशी धर्म्मने उनकी प्रतीक्षा न करके दूसरे तपस्वियोंके दिये हुए अन्न भोजन करके अपने भूखकी शान्ति की। उनके भोजनके शेष होनेपर विश्वामित्रने भी वह गर्म्म अन्न लाकरके उपस्थित किया। तब भगवान् धर्म्मने कहा "हमने भोजन कर लिया है, तुम यहांपर निवास करो।" ऐसा कहकर वहांसे चले गये। प्रशंसनीय व्रतके अनुष्ठान करनेवाले महातेजस्वी विश्वामित्र भी उनके वचनके अनुसार उसी स्थानपर खड़े रहे। अपने दोनों हाथोंसे उस पात्रको शिरपर रखके वह वायु भक्षण करते हुए अचल रूपसे आश्रमके समीप खड़े रहे। उनके प्यारे शिष्य गालव मुनि गौरव और मान पानेके निमित्त प्रीतिके वशमें होकर यत्न पूर्व्वक उनकी सेवा टहल करने लगे। इसी प्रकारसे सौ वर्ष बीत गये, धर्म्मराज फिर वशिष्ठका वेष धारण करके भोजन करनेकी इच्छासे विश्वामित्रके समीप आये। उन्होंने देखा, कि वह बुद्धिमान् महर्षि शिरपर अन्नके पात्रको धारण करके उसी प्रकारसे वायु भक्षण करते हुए खड़े हैं; और अन्न भी वैसा ही गर्म्म तथा ताजा है। यह देखकर उन्होंने वह अन्न लेकर भोजन किया और बोले, "हे विप्रर्षि! मैं पूर्ण रीतिसे सन्तुष्ट

हुआ हूं।" ऐसा कहकर चले गये। विश्वामित्र धर्म्मके वचनसे क्षत्रिय भावसे छूटकर ब्राह्मणत्वको पाकर अत्यन्त ही प्रसन्न हुए। अनन्तर उन्होंने उस तपस्वी गालव नामक शिष्यकी सेवा टहलसे प्रसन्न होकर उससे बोले, हे पुत्र गालव! मैं अब तुम्हें आज्ञा देता हूं, कि जहां तुम्हारी इच्छा हो, वहां जाओ। मुनिसत्तम महातेजस्वी विश्वामित्रकी इस बातको सुनकर गालव मुनि अत्यन्त प्रसन्न होके मीठे वचनसे उनसे बाले, हे गुरो! गुरुदक्षिणामें आपको क्या दान दूं? दक्षिणा-युक्त होनेहीसे मनुष्यका कर्म्म सिद्ध होता है। विना दक्षिणा दिये कोई कर्म्मका फल नहीं प्राप्त कर सकता। उत्तम यज्ञके करनेवाले पुरुष दक्षिणासे ही स्वर्ग लोकमें यज्ञका फल पाते हैं। इससे गुरुदक्षिणाके योग्य कौन वस्तु आपको दान करनी होगी, उसके निमित्त आप आज्ञा दीजिये। भगवान् विश्वामित्र गालवको सेवाहीसे यथेष्ट दक्षिणा पा चुके थे; यही समझकर उन्होंने और दक्षिणा ग्रहण करनेकी अभिलाषा नहीं की। इसीसे उसको "तुम गमन करो" बार बार ऐसे ही वचन कहने लगे; परन्तु गालव मुनि बारम्बार ऐसे वचन सुनकर भी हठपूर्व्वक "क्या दक्षिणा दूं, क्या दूं?" ऐसी बात बारबार कहने लगे। तब विश्वामित्र उसके इस प्रकार महाहठको देखकर कुछ रोषमें भरकर यह वचन बोले। हे गालव! चन्द्रमाके समान सफेद और एक ओर श्याम कर्णसे युक्त ऐसे आठ सौ घोड़े लाकर मुझे दान करो; जाओ अब देरी मत करो।

१०६ अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, बुद्धिमान् विश्वामित्रके ऐसी आज्ञा देनेपर गालव मुनि इकबारगी चिन्तारूपी समुद्रमें डूब गये। उनका सोना, बैठना, खाना, पीना सब छूट गया। अत्यन्त ही सोच और चिन्तासे सदा जलते हुए वह पाण्डुवर्ण और सूखकर हड्डी मात्र रह गये। अत्यन्त दुःखसे पीड़ित होकर मन ही मन ऐसा विलाप करने लगे, कि "हाय! मैं दीन हीन तपस्वी होकर चन्द्रमाके समान सफेद श्यामकर्णके आठ सौ घोड़े कहां पाऊंगा? मेरा ऐसा धनवान् कौन मित्र है, जिससे मैं मांग लूंगा। मुझे धन कहां है, सञ्चय ही मैंने कब किया है? हा! अब मुझे खाने पीने आदि विषयोंमें किस प्रकारसे श्रद्धा हो सकती है? दूसरी बात तो दूर है, मेरे जीनेकी भी अब आशा नहीं है। मेरे जीनेहीसे अब क्या प्रयोजन है? व्यर्थ जीवनके भारको ढोनेकी अपेक्षा मैं समुद्रके पार अथवा पृथ्वीकी अन्तिम सीमापर जाकर अपने प्राणको त्याग दूंगा। निर्धन मनुष्य बहुतसे उत्तम फलके लाभ करनेसे वञ्चित रहते हैं; ऋणी पुरुषको यत्न और चेष्टाके अतिरिक्त सुख पानेका और कौन उपाय है? जो मनुष्य प्रीतिके बन्धनमें बंधके मित्रोंके धनको भोग करते हैं और अन्तमें उनके अभीष्ट कर्म्मोंके सिद्ध तथा प्रत्युपकार करनेमें असमर्थ हो जाते हैं; उनके जीनेसे मरना ही उत्तम है। मैं इस कार्य्यको करूंगा ऐसा कहकर जो अधम पुरुष उस कर्म्मको नहीं करता, उसके समान मिथ्यावादी और कौन हो सकता है? उसके जप, यज्ञ आदि सम्पूर्ण कर्म्म नष्ट हो जाते हैं। मिथ्याप्रिय अधम पुरुषोंकी सन्तति, शरीर-शोभा, प्रभुता कुछ भी नहीं रह सकती। उसकी उत्तम गति मिलनेकी सम्भावना कैसे हो सकती है? कृतघ्न पुरुषको यश, स्थान और सुख कहां है? कृतघ्न किसी समयमें श्रद्धा करनेके योग्य नहीं हो सकता; और न किसी कालमें उसका निस्तार होता है। धनहीन पापी पुरुषका जीना मरना दोनों ही समान है। पापी मनुष्य अपनी प्रतिज्ञाका पालन करनेमें

कैसे समर्थ होसकता है? वह कृतघ्न होकर अवश्य ही मृत्युको प्राप्त होता है। इससे मैं भी वही पापी, कृतघ्न, कृपण और मिथ्यावादि हुआ हूं। गुरुके निकट कृतकार्य्य होकर, जब उनकी आज्ञाका पालन करनेमें असमर्थ हुआ हूं, तब सब बातही मुझमें सम्भव हो सकती हैं। इससे अब मेरे जीनेसे क्या फल होगा? मैं गुरुके वचनका पालन करनेमें अपनी सामर्थ्य भर यत्न करके अन्तमें अपने प्राणकी त्याग दूंगा। यज्ञके स्थानमें सब देवता लोग मेरा सम्मान किया करते हैं, परन्तु पहिले कभी मैंने उन लोगोंसे कुछ नहीं मांगा है। इससे सब देवोंमें श्रेष्ठ, अगतिके गति स्वरूप, विश्वव्यापक विष्णुका शरणागत होऊंगा। जिससे सुर, असुर, नर और किन्नर सम्पूर्ण प्राणियोंका भोग और सब प्रकारका सुख प्रतिष्ठित है; उन्ही योगियोंमें श्रेष्ठ अविनाशी विष्णुके दर्शन करनेका मैं इच्छा करता हूं।

गालवमुनिके यह वचन कहते ही अकस्मात् उनके मित्र विनतापुत्र गरुड़ने आकर उन्हें दर्शन दिया; और अत्यन्त प्रसन्नतासे उनको प्रिय कामना सिद्ध करनेके निमित्त यह वचन बोले। हे प्रिय सखा! तुम्हारे सङ्ग मेरी पूर्ण मित्रता है; मित्रोंका कर्त्तव्य कर्म्म यही है, कि धन तथा पराक्रमसे अपने प्यारे मित्रोंके कार्य्य सिद्ध करनेके निमित्त यत्न करें। हे ब्राह्मण! इससे मेरे परम सम्पत्ति स्वरूप भगवान् विष्णुसे मैंने पहिले ही तुम्हारा प्रयोजन सिद्ध करनके निमित्त आवेदन किया था; और उन्होंने भी मेरी यह इच्छा पूर्ण की है; इससे चलो तुम्हें सुख पूर्व्वक हम ले चलेंगे; समुद्रके पार अथवा पृथ्वीकी अन्तिम सीमापर जहां तुम्हारी इच्छा हो वहां चलो, विलम्ब करनेका कुछ भी प्रयोजन नहीं है।

१०७ आध्यय समाप्त।

गरुड़ बोले, हे ब्राह्मण-श्रेष्ठ गालव! अज और अविनाशी चक्रधारी भगवान् विष्णुकी आज्ञाके अनुसार मैं तुमसे यह पूछता हूं, कि पहिले कौन दिशाके दर्शनके निमित्त तुम्हें ले चलूं; सो तुम कहो। पूर्व्व, पश्चिम उत्तर और दक्षिण इनमेंसे पहिले किस दिशामें जानेकी तुम्हें अभिलाषा है? जिस स्थानसे सब लोकोंके प्रकाशक सूर्य्यका उदय होता है, और सन्ध्याके समयमें जहांपर साध्य नामक गणदेवता लोग तपस्या करते हैं; जिस जगह जगत् व्यापिनी बुद्धिको लोग प्रथम प्राप्तकर सकते हैं, धर्म्मके दोनों नेत्र स्वरूप सूर्य्य और चन्द्रमा और स्वयं धर्म्म जिस दिशामें प्रतिष्ठित हैं; जिस दिशामें यज्ञके सम्पूर्ण हव्य पदार्थ होम होकर सब दिशाओंको शुद्ध करते हैं; जो दिशा दिवस और कालसे द्वार स्वरुप है, पहिले दक्ष-प्रजापतिकी कन्याओंने जहां पर सब प्रजाओंको उत्पन्न किया था, कश्यप ऋषिके पुत्र लोग जिस दिशामें बढ़े थे; वही पूर्व्वदिशा देवताओंके सम्पूर्ण ऐश्वर्य्यकी जड़ है; क्योंकि इसी दिशामें शचीपति देवताओंके स्वामी इन्द्रका अभिषेक हुआ था, और सब देवताओंने इसी स्थानमें पहिले तपस्या कीथी। हे ब्राह्मण श्रेष्ठ! इसी कारण उसका नाम पूर्व्व दिशा हुआ है। इन्द्रकी स्वर्गके राज्यपर अभिषिक्त होनेके बहुत दिन पहिलेसे भी देवता लोग इस स्थानमें निवास करतेथे, इसी कारण पुराने लोगोंने उसका "पूर्व" नाम रक्खा है। सुखकी अभिलाषा करनेवाले देवताओंका सम्पूर्ण कार्य्य इसी दिशामें सिद्ध हुआ था। लोक भावन भगवान् पितामहने पहिले इसी स्थानपर वेद गान किया था। सूर्य्यदेवने भी इसी स्थानमें पहिले ब्राह्मणोंकी गायत्रीका उपदेश और याज्ञवल्क ऋषिको यजुर्वेद अध्ययन कराया था। हे द्विजसत्तम! इसी स्थानपर वर पाकर सोम यज्ञके स्थानमें देवताओंसे इन्द्र प्रसन्न हुए थे। सब

वस्तुओंको भक्षण करनेवाले अग्नि सदा तृप्त होकर दूध आदि भक्षण किया करते हैं। जल-के स्वामी वरुणने इसी ओरसे पातालके तल भागपर जा करके राज्य लक्ष्मीको प्राप्त किया है। पहिले मित्रवरुणके यज्ञके समयमें पुराने वशिष्ठ ऋषिकी इसी स्थानमें उत्पत्ति, निवास और विनाश प्रकाशित हुआ था। प्रणवका जो सहस्र प्रकारका मार्ग है, वह इसी दिशामें कहा जाता है। धवां पीनेवाले मुनि लोग इसी स्थानमें होमका धुवां पीते थे और देवता-ओंके यज्ञभाग निमित्त शचीपति इन्द्र वराह; मृग आदि सब वस्तु उनको दान देते थे। तेज और किरण धारण करने वाले भगवान् सूर्य्य इसी दिशामें उदय होकर, क्रोधके वशमें अहित कर्म्म करनेवाले कृतघ्न मनुष्य और असुरोंके प्राणका नाश करते हैं। मैं अधिक कहांतक वर्णन करूं, यह दिशा तीनों लोककी द्वार स्वरूप है; स्वर्ग और सुख लाभके निमित्त यही उत्तम मार्ग है। इससे यदि तुम्हारी इच्छा हो, तो इसी पूर्व्व दिशाकी ओर प्रवेश करें। हे गालव! मैं जिसका आज्ञाकारी हूं, उसका प्रिय कार्य्य पूर्ण करना मेरा अत्यन्तही कर्त्तव्य-कर्म्म है। इससे अब किस दिशाकी ओर चलें सो तुम कहो, यदि पूर्व्व दिशा देखनेकी इच्छा न हो, तो और एक दिशाका वृत्तान्त कहता हूं, सो सुनो।

१०८ अध्याय समाप्त।

गरुड़ बोले, यह दक्षिण दिशा है। पहिले सूर्य्यने देवयज्ञके अनुष्ठानमें यह दिशा दगुरु-दक्षिणामें दान किया था; इसीसे यह दक्षिण दिशाके नामसे प्रसिद्ध हुई है। हे विप्र! इसी दिशामें तीनों लोकका पितृ-पक्ष प्रतिष्ठित है। सुना जाता है धुवां पीनेवाले देवता लोगभी इसी दिशामें निवास करते हैं। विश्वेदेव नामक जो कारह गणदेवता हैं, वे लोगके बीच पितरोंके समान पूज्य और समान भाग पाकर उन लोगोंके सङ्ग सदा एकत्र होकर इसी दिशामें वास करते हैं। हे द्विज-सत्तम! पण्डित लोग इस दिशाको धर्म्मकी दूसरा द्वार स्वरूप कहके वर्णित करते हैं; क्योंकि इसी स्थानमें सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म सब लोकोंकी परम आयुका निर्णय होता है; विशेष करके इसी दिशामें देवर्षि पितर लोग ऋषि और राजर्षि लोग सदा परम सुखसे निवास करते हैं। हे ब्राह्मण! सत्य, धर्म्म और कर्म्म सब इस दिशामें विद्यमान हैं; जो पुरुष कर्म्मसे आत्माको स्थिर करता है, इसी दिशामें उसको गति होती है। एक बार सबको इस दिशामें आना पड़ता है; परन्तु यह अज्ञान-रूपी अन्धकारसे ढकी रहती है, इससे सहज-होमें नहीं प्राप्त हो सकती। हे द्विजश्रेष्ठ! पुण्यकर्म्म न करनेवाले अधम मनुष्योंकी विरु-द्धता करनेके निमित्त इस दिशामें कई सहस्र महा विकट आकारके राक्षसोंकी सृष्टि हुई है। हे ब्राह्मण! मीठे स्वरसे युक्त गन्धर्व्व लोग मन्दर पर्व्वत और विप्रर्षि लोकोंके आश्रमोंपर अच्छे मधुर गीत गाकर सब लोगोंके चित्त और बुद्धि हर लेते हैं। रैवत नामक दैत्यराज इसी स्थानपर पुत्र, पौत्र, स्त्री, राज्य और सेवक आदि सम्पूर्ण वस्तुओंको त्याग कर वन-वासी होगये थे। हे ब्राह्मण! मनु और यव-क्रीत-तनयने इस दिशामें जो नियम स्थापित किया है, सूर्य्यदेव किसी समयमें उसका उल्ल-ङ्घन नहीं कर सकते। पुलस्त्यवंशमें उत्पन्न हुए राक्षसोंके राजा महात्मा रावणने इसी दिशामें तपस्या करके देवताओंके समीप अमर होनेका वरदान मांगा था। वृत्रासुरने भी असत् कर्म्म से इसी स्थानमें इन्द्रके साथ शत्रुता की थी। हे गालव! इसी दक्षिण दिशामें सबका प्राण मिलित होके फिर प्राण और अपान भेदसे पृथक् पृथक् होजाता है। बुरे कर्म्म करनेवाले